राजस्थान लोक सेवा आयोग (RAS/RTS)

अंतर्राष्ट्रीय संबंध

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (*Distance Learning Programme*)

Code: RJPM21

VISIT…

LANZAROTE
Caliente.COM

RAS DLP विषय सूची (Contents)

1. अंतर्राष्ट्रीय संबंध एवं कुछ महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएँ 5-33
    1.1 अंतर्राष्ट्रीय संबंध 5
    1.2 कुछ महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएँ 8
2. शीत युद्धोत्तर विश्व व्यवस्था 34-38
    2.1 शीत युद्ध 34
    2.2 उत्तर-शीतयुद्ध काल 36
3. संयुक्त राष्ट्र एवं उसकी अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ 39-51
    3.1 संयुक्त राष्ट्र 39
    3.2 संयुक्त राष्ट्र में सुधार 40
    3.3 संयुक्त राष्ट्र के समक्ष वैश्विक चुनौतियाँ 41
    3.4 संयुक्त राष्ट्र की अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ 42
4. क्षेत्रीय संगठन 52-70
    4.1 यूरोपीय संघ 52
    4.2 गुटनिरपेक्ष आंदोलन 54
    4.3 ब्रिक्स समूह 55
    4.4 आसियान 57
    4.5 सार्क (दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन) 61
    4.6 जी-20 63
    4.7 जी-77 64
    4.8 बिम्सटेक 65
    4.9 शंघाई सहयोग संगठन 65
    4.10 एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग 66
    4.11 हिंद महासागर तटीय संघ 66
    4.12 भारत अफ्रीका फोरम शीर्ष सम्मेलन 66

www.t.me/Edu_Books

5. अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद 71-7
5.1 आतंकवाद 71
5.2 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद 71
5.3 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद का खतरा क्यों बढ़ता जा रहा है? 72
5.4 आतंकवाद के विभिन्न स्वरूप 72
5.5 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद से उपजे नकारात्मक परिणाम 73
5.6 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के प्रसार को रोकने हेतु की गई पहलें/समाधान हेतु सुझाव 73
6. भारत की विदेश नीति 75-85
6.1 विदेशी नीति : अर्थ एवं कार्य-क्षेत्र 75
6.2 विदेश नीति का महत्त्व 75
6.3 भारत की विदेश नीति 76
7. भारत का अन्य देशों के साथ संबंध 86-105
7.1 भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका 86
7.2 भारत और रूस 89
7.3 भारत और चीन 93
7.4 भारत तथा पड़ोसी देश 98
8. एशिया में भू-राजनीतिक एवं रणनीतिक विकास 106-120
8.1 दक्षिण एशिया एवं भारत 106
8.2 दक्षिण-पूर्व एशिया एवं भारत 108
8.3 पश्चिम एशिया एवं भारत 114

अध्याय
1

अंतर्राष्ट्रीय संबंध एवं कुछ महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएँ (International Relation & Some Important Concepts)

'राष्ट्र' शब्द जिसका प्रयोग बहुधा 'राज्य' के स्थान पर भी कर लिया जाता है, एक ऐसा शब्द है जिसके सांस्कृतिक निहितार्थ हैं। इसका संबंध जनता के उस समूह से होता है जो एकात्मकता एवं आपसी मूल्यों की भावना से संगठित होते हैं। इसे राजनीति विशेषज्ञ 'कल्पित समुदाय' (Imaginary Community) की संज्ञा देते हैं। यह समूह कुछ सांस्कृतिक कारकों पर आधारित होता है, जैसे-समान इतिहास, समान भाषा, समान धर्म, समान सजातीयता एवं समान प्रथाएँ आदि। 'राज्य' शब्द का संबंध राजनीतिक विचार और कानूनी सत्ता दोनों से होता है। तथापि, संयुक्त रूप से 'राष्ट्र-राज्य' शब्द का संबंध 'राष्ट्र' के रूप में एक ऐसी सांस्कृतिक इकाई से होता है, जिसकी सीमाएँ 'राज्य' की राजनीतिक-कानूनी सीमाओं के समान होती हैं। निकोलो मैकियावेली (Niccolo Machiavelli) संभवत: ऐसे पहले राजनीतिक विचारक थे, जिन्होंने अपनी कृति 'द प्रिंस' (The Prince) में आधुनिक राज्य के राजनीतिक सार का वर्णन किया था। अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत आधुनिक राज्य निम्नलिखित चार लक्षणों पर आधारित होता है: स्थायी जनसंख्या (Permanent Population); निश्चित प्रदेश (Certain Territory); संगठित सरकार (Organised Government); तथा प्रभुसत्ता (Sovereignty)।

1.1 अंतर्राष्ट्रीय संबंध *(International Relation)*

अंतर्राष्ट्रीय संबंध से तात्पर्य दो या अधिक राष्ट्रों के मध्य संबंधों के स्वरूप से है, जिसमें राजनीतिक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सामरिक संबंध स्थापित होते हैं। दो या दो से अधिक राष्ट्रों के मध्य संबंधों का निर्धारण अनेक पहलुओं के द्वारा निर्धारित होता है, जिसमें शामिल हैं- राष्ट्र की शासन व्यवस्था, भौगोलिक अवस्थिति, संसाधनों की उपलब्धता, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक विकासक्रम, विचारधारा एवं ऐतिहासिक मूल्य इत्यादि। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को अंतर्राष्ट्रीय संगठन, वैश्विक व्यापार प्रतिरूप एवं नेतृत्व क्षमता भी प्रभावित करती है। राष्ट्र की सुरक्षा एवं संपन्नता को सुनिश्चित करने के लिये न सिर्फ पड़ोसी देशों के साथ वल्कि अन्य राष्ट्रों के साथ भी सकारात्मक एवं सौहार्द्रपूर्ण संवंध सहायक सिद्ध होते हैं।

चूँकि मध्य युग तक राष्ट्र-राज्यों का अस्तित्व ही नहीं था, तकनीकी दृष्टि से उस समय से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय संबंध भी संभव नहीं थे। तथापि, इस वात के स्पष्टीकरण की कोई आवश्यकता नहीं है कि प्राचीन काल में अंतर्राष्ट्रीय मामलों को उजागर करने वाली राजनीतिक गतिविधियाँ प्रत्यक्ष थीं। हालाँकि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राष्ट्र-राज्य व्यवस्था की अवधारणा के उदय के संकेत 1648 की वेस्टफेलिया की संधि (Westphalia Treaty) से मिलते हैं, जिसने यूरोप में तीस वर्षों (1618-1648) के युद्ध को समाप्त कर दिया। यह संधि राज्य व राज्य-व्यवस्था को कानूनी मान्यता देती थी। वास्तव में इसके द्वारा दो राज्यों-स्विट्जरलैंड और नीदरलैंड का निर्माण हुआ। इसके बाद यूरोपीय शासकों ने रोमन कैथोलिक चर्च की सत्ता को अस्वीकार कर दिया।

कालांतर में राष्ट्र-राज्य की अवधारणा ने न केवल विभिन्न अर्थ एवं रूप ग्रहण किये हैं बल्कि इसकी सत्ता ने नवीन उपलब्धियों का भी सामना किया है। हाल के वर्षों में व्यापार, उत्पादन और वित्त का वैश्वीकरण; संचार एवं परिवहन के क्षेत्र में क्रांति, तकनीक एवं शस्त्रों के विस्तार तथा पर्यावरणीय एवं सतत् सामरिक संकट ने ऐसी समस्याएँ खड़ी की हैं, जिनका समाधान राष्ट्र-राज्यों की संरचना के अंतर्गत नहीं किया जा सकता। यह अधिराष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक संस्थाओं की खोज एवं विस्तार को अनिवार्य बनाता है जो कि राष्ट्रीय संप्रभुता (National Sovereignty) के परंपरागत मूल्य को दुर्बल बना सकता है। त्वरित वैश्वीकरण (Globalisation) के सांस्कृतिक प्रभाव अपने साथ उन विघटनकारी तत्त्वों को भी ला रहे हैं, जो समाज को अधोपतन की ओर प्रवृत्त करते हैं और जो पुरानी सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इकाइयों को विखंडित कर सकते हैं। अधोगमन की यह प्रवृत्ति पश्चिम के आर्थिक रूप से उन्नतिशील राष्ट्र-राज्यों में अधिक दिखाई देती है तथा इसका उद्देश्य राष्ट्र-राज्यों की एक संस्था के रूप में उनकी सत्ता के साथ-साथ उनके महत्त्व एवं औचित्य को भी कम करना प्रतीत होता है।

निकट भविष्य में हम शक्ति के केंद्र के रूप में राष्ट्र-राज्यों का आगामी ह्रास देख सकते हैं। इस प्रवृत्ति के लिये उत्तरदायी एक कारक है- गैर-राज्य संगठनों का उत्थान। महत्त्वपूर्ण रूप से, गैर-राज्य संगठन (Non-State Organizations) राज्य के उपरोक्त चार लक्षणों का समर्थन नहीं करते। जहाँ कुछ संगठनों का स्थान राज्यों से ऊपर है, जैसे कि यूरोपीय सं (European Union) एवं अन्य प्रादेशिक संगठन, वहाँ कुछ संगठन बिल्कुल भिन्न प्रकार के हैं, उदाहरणार्थ अंतर्राष्ट्रीय निका (International Bodies) एवं बहुराष्ट्रीय कॉर्पोरेट निकाय (Multinational Corporate Bodies)। उनमें एक सामान्य बा यह है कि वे सभी या तो राष्ट्र-राज्य की कुछ भूमिकाओं को स्वीकार करते हैं अथवा उसके नियंत्रण से बचने का प्रया करते हैं। आकार में राज्यों से बड़ा होने के कारण अथवा भौगोलिक सीमाओं के अभाव के कारण वे परिवहन एवं संच के वर्तमान विकास से अधिक लाभ उठा सकने की स्थिति में हैं। परिणामस्वरूप, उनकी शक्ति में वृद्धि हो रही है, जबकि राष्ट्र-राज्यों का ह्रास हो रहा है।

राष्ट्रों के मध्य संबंधों पर द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव (Consequences of second world war on relations amongst nations)

यूरोप एवं एशिया में जीवन, गृह, उद्योग एवं संचार की आधारभूत संरचना पर द्वितीय विश्वयुद्ध का भीषण प्रभाव प सबसे गंभीर बात तो यह थी कि इसमें लगभग 60 लाख यहूदियों (Jews) का नृजातीयसंहार हुआ और कई हज़ार गैर-य विनाशकारी शिविरों में पड़े थे। हिरोशिमा और नागासाकी पर पहली बार प्रयोग किये गए परमाणु अस्त्रों ने अपनी भी विनाशक शक्ति का प्रदर्शन किया। इसके बाद विश्व में परमाणु युद्ध का भय उत्पन्न हो गया जो कि समस्त पृथ्वी का न कर सकता था। द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत के साथ ही यूरोप का शेष विश्व पर से आधिपत्य समाप्त हो गया। जर्मनी, फ्रां इटली और ब्रिटेन-ये चार पश्चिमी यूरोपीय देश, जिन्होंने बीसवीं शताब्दी में अधिकांश समय तक वैश्विक मामलों में महत्त्व भूमिका निभाई थी, वे अब पहले से कहीं अधिक दुर्बल हो गए थे। यद्यपि ब्रिटेन सशक्त और विजयी सिद्ध हुआ क्यों उसका साम्राज्य अखंड बना रहा, परंतु युद्ध में हुआ व्यय निश्चय ही अनर्थकारी था।

विश्व में दो शक्तिशाली राष्ट्रों के रूप में उभरे संयुक्त राज्य अमेरिका (USA) और सोवियत संघ (USSR) अब इ विलग नहीं थे जितना कि वे युद्ध से पहले थे। संयुक्त राज्य अमेरिका पर युद्ध का अधिक प्रभाव नहीं पड़ा था और उ अन्य मित्रों को युद्ध और खाद्य-सामग्री की आपूर्ति से विशाल समृद्धि अर्जित की। अमेरिका के पास विश्व की सबसे ब नौसेना और वायुसेना थी और उसके नियंत्रण में परमाणु बम भी था। सोवियत संघ के पास भी विश्व में सबसे बड़ी सें थी। अब दोनों राष्ट्रों की संदेहात्मक दृष्टि एक-दूसरे पर थी। वर्ष 1945 के बाद लगभग आधे दशक तक शीतयुद्ध के दौ इन दो महाशक्तियों की प्रतिद्वंद्विता अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का सबसे महत्त्वपूर्ण लक्षण रही।

मित्र राष्ट्रों की विजय ने धुरी शक्तियों पर शक्ति का पुनर्वितरण किया तथा सीमाओं की व्यवस्था भी बदली, जि परिणामस्वरूप नए भौगोलिक क्षेत्र का निर्माण हुआ। जर्मनी को व्यावसायिक क्षेत्रों में बाँट दिया गया जिसने पूर्वी और पश्चि जर्मनी के लिये विभाजन का आधार प्रदान किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत ने अनिश्चयात्मकता (Inconclusiveness) अविश्वास (Distrust) को भी जन्म दिया। विश्व के तीन बड़े नेताओं- विंस्टन चर्चिल, फ्रैंकलिन रूज़वेल्ट और जो स्टालिन ने 1945 ई. में याल्टा सम्मेलन (Yalta Conference) में मुलाकात की ताकि एक नई विश्व व्यवस्था का नि किया जा सके। एक नई युद्धोत्तर अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को नियंत्रित करने के लिये एक नए अंतर्राष्ट्रीय संगठन संयुक्त संघ (United Nations) के निर्माण पर विचार किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ का उदय राष्ट्र संघ (League of Nations) उत्तराधिकारी के रूप में हुआ। इसका उद्देश्य था- विश्व शांति को कायम रखने का प्रयास करना। वैसे यह नई संस्था अ पूर्ववर्ती संस्था से अधिक और पूर्णरूपेण सफल रही।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद, संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ दो महाशक्तियों (Superpowers) के रूप में गए और उनकी प्रतिद्वंद्वात्मक शक्ति का अर्थ था कि वे अन्य सभी राष्ट्रों से अधिक महत्त्व रखते हैं और उनमें अपनी को थोपने का सामर्थ्य है। अन्य बड़े विजेता अशक्त हो चुके थे तथा वे विश्व शक्ति क्रम-व्यवस्था के शिखर से हट थे। युद्ध में परास्त जर्मनी और जापान भी महाशक्तियों की श्रेणी से निकल-चुके थे। वाशिंगटन (अमेरिका) और मॉ (सोवियत संघ) ने अनुभवहीन संयुक्त राष्ट्र का प्रयोग शांति बनाए रखने के लिये नहीं, वरन् आपसी प्रतियोगिता को ब रखने के लिये किया। उनकी बढ़ती हुई प्रतिद्वंद्विता में एक कारक जिसने उनकी गति का निर्धारण किया, वह थी उ विचारधारा (Ideology) अर्थात् उनके वैचारिक सिद्धांत।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में विचारधारा का प्रभाव
(Impact of Ideology in International Relations)

हमारी संस्कृति और सामाजिक समुदाय की जीवनशैली से स्पष्ट झलकती विश्वासों एवं मूल्यों की व्यवस्था ही हमारी विचारधारा कहलाती है। यह हमारे मौलिक विश्वास की वह व्यवस्था है जिसमें राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक व अन्य सामाजिक मूल्यों की मूल धारणाएँ शामिल होती हैं। इसमें एक आदर्श जीवन-शैली की संकल्पना, उसकी रक्षा की प्रतिबद्धता और संभवतः उसके विस्तार की आकांक्षा की स्वीकृति भी शामिल होती है। विचारधारा एक ऐसा बोधात्मक समपार्श्व अर्थात् प्रिज़्म (Prism) होता है, जिसके जरिये नीति-निर्माता विश्व का अवलोकन करते हैं। इसके अलावा ये नीति-निर्माता मौजूदा राष्ट्रीय विचारधारा का संदर्भ देते हुए अपने निर्णय का औचित्य और स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हैं।

वस्तुतः द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति शांति-युग की स्थापना की उद्घोषणा नहीं करती क्योंकि इस युद्ध के तत्काल बाद सोवियत संघ तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य तनाव स्पष्ट था। अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोपीय देशों ने पूर्वी यूरोप पर सोवियत आधिपत्य को विस्तारवाद (Expansionism) के रूप में देखा। दूसरी ओर, सोवियत संघ ने विश्व के अन्य भागों, जैसे कि लैटिन अमेरिका पर अमेरिकी आधिपत्य को अमेरिकी साम्राज्यवाद (American Colonialism) समझा। कालांतर में संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ, दोनों महाशक्तियों ने अपने मित्र बनाने शुरू कर दिये। एक गुट (Block), जो भी सुझाव देता था या जो भी कार्य करता उसे दूसरे द्वारा गुप्त षड्यंत्र और आक्रामक उद्देश्य समझा जाता। विवाद की मूल जड़ साम्यवादी (Communist) राज्यों और पूंजीवादी (Capitalist) अथवा उदारवादी लोकतांत्रिक (Liberal Democratic) राज्यों के मध्य विचारधारा की भिन्नता में निहित थी। राज्य और समाज के संगठन संबंधी साम्यवादी व्यवस्था कार्ल मार्क्स (Karl Marx) के विचारों पर आधारित थी। इसके अनुसार, उनका विश्वास था कि अर्थव्यवस्था का नियोजन केंद्रीय रूप से होना चाहिये और राज्य की सामाजिक नीतियों द्वारा श्रमिकों के अधिकारों को संरक्षण मिलना चाहिये। वर्ष 1917 में रूस में विश्व की पहली साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई। अधिकांश पूंजीवादी राज्यों ने इसमें अविश्वास दिखाया और उन्हें अन्य देशों में साम्यवाद के विस्तार का भय होने लगा। जब 1918 ई. में रूस में गृह युद्ध (Civil War) हुआ तो संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, फ्राँस और जापान जैसे विभिन्न पूंजीवादी राज्यों ने रूस में साम्यवाद-विरोधी दलों की मदद के लिये अपनी सेनाएँ भेजीं। बहरहाल, जीत साम्यवादियों की ही हुई। जोसेफ स्टालिन (Joseph Stalin), जिन्होंने लेनिन के बाद सत्ता में कदम रखा था, यह माना कि रूस में साम्यवाद का विनाश करने के लिये पूंजीवादी शक्तियों का यह एक अन्य प्रयास था। तदोपरांत वर्ष 1941 में रूस पर जर्मनी के आक्रमण ने उनकी इस धारणा को सत्य सिद्ध किया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् जहाँ एक ओर स्टालिन द्वारा यूरोप में रूस का प्रभाव बढ़ाने के लिये देश की सैन्य शक्ति का लाभ उठाया जा रहा था, वहीं यूरोप में संयुक्त राज्य अमेरिका के राजनीतिक प्रभाव को बढ़ाने के लिये मार्शल योजना (Marshall Plan) सरीखी अमेरिकी आर्थिक नीतियाँ तैयार की जा रही थीं। तथापि, यह भी विश्वास किया जा रहा था कि स्टालिन जिसके पास साम्यवाद के विस्तार के लिये कोई दीर्घकालिक योजनाएँ नहीं थीं, केवल एक अवसरवादी (Opportunist) था, जो पश्चिम की किसी भी दुर्बलता का लाभ उठा सकता था। अपनी सुदृढ़ स्थिति और एक-दूसरे के प्रति संदेहास्पद दृष्टि के कारण संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ ने एक ऐसे वातावरण को जन्म दिया, जिसमें किसी भी अंतर्राष्ट्रीय गतिविधि को दो प्रकार से परिभाषित किया जा सकता था अर्थात् एक ओर के आत्मरक्षा के दावे को दूसरी ओर आक्रामक उद्देश्य समझा जा रहा था। इसके द्वारा शक्ति-संतुलन एवं शून्य-योग खेल (Zero Sum Game) की ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई जिसमें यदि एक को फायदा था तो दूसरे को नुकसान।

वर्ष 1917 की बोल्शेविक क्रांति से प्रोत्साहित अमेरिका के विद्वेष ने सत्ता में एक ऐसी सरकार का स्वागत किया जो पूंजीवादी साम्राज्यवाद की मार्क्सवादी समीक्षा को अंगीकार कर चुकी थी। चाहे वास्तविक हो या काल्पनिक, मार्क्सवाद के प्रति अमेरिका के भय ने एक प्रतिपक्ष विचारधारा के रूप में साम्यवाद-विरोध को बढ़ावा दिया। अतः अमेरिका ने धरती से साम्यवाद का नामोनिशान हटाने के लिये अपना धर्मयुद्ध (Crusade) प्रारंभ कर दिया। इसी प्रकार सोवियत नीति में भी इस भावना का संचार हो चुका था कि पूंजीवाद और साम्यवाद एक साथ नहीं रह सकते। अतः सोवियत नीति का उद्देश्य ऐतिहासिक प्रक्रिया की गति को तेज करना था, ताकि अंततोगत्वा साम्यवाद का वर्चस्व कायम हो सके। वैसे सोवियत योजनाकारों (Planners) को यह संदेह होने लगा था कि अमेरिका के नेतृत्व में पूंजीवादी राज्य सोवियत संघ को घेर सकते हैं और हो न हो साम्यवाद का बाल्यावस्था (Childhood) में ही गला घोंट दिया जाएगा। अतः सोवियत संघ पर यह दायित्व था कि वह इस स्थिति का मुकाबला करे। इसी प्रक्रिया में उसने अपनी शक्ति को बढ़ाना शुरू कर दिया।

1.2 कुछ महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएँ *(Some Important Concepts)*

शीत युद्ध *(Cold War)*

सोवियत-अमेरिकी संबंधों में 'शीतयुद्ध' (Cold War) शब्द का प्रयोग तत्कालीन द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विकसित गहन विद्वेष और तनाव को संबोधित करने के लिये किया जाता है। प्रत्यक्ष रूप से आमने-सामने बिना किसी युद्ध के शीतयुद्ध एक वैचारिक संघर्ष, राजनीतिक अविश्वास, कूटनीतिक चालों, सैन्य प्रतियोगिता, गुप्तचर/गतिविधियों और मनोवैज्ञानिक संघर्ष की प्रक्रिया थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत के साथ ही यह स्पष्ट हो गया था कि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के एक नए युग का प्रारंभ हो रहा था। अपने क्षेत्र में अद्वितीय एवं विनाशकारिता में अपूर्व होने के कारण बीसवीं शताब्दी के द्वितीय महायुद्ध ने न केवल एक ऐसी व्यवस्था का सूत्रपात किया, जिसमें दो महाशक्तियों-संयुक्त राज्य अमेरिका एवं सोवियत संघ का आधिपत्य था बल्कि इसने पूर्व शताब्दियों में साम्राज्यवादी राष्ट्रों द्वारा संकलित विशाल औपनिवेशिक साम्राज्यों के विघटन को भी तीव्र बना दिया और इस प्रकार अनेक लोगों को विदेशी शासन से मुक्ति मिली। उभरती हुई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषता थी- यूरोपीय कोर क्षेत्र (European Core Area) के बाहर ऐसे अनेक प्रभुत्वसंपन्न राज्यों में शक्ति का वितरण, जो उक्त दो महाशक्तियों द्वारा नियंत्रित थे।

इस महाशक्ति प्रतिद्वंद्विता के लिये द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत जन्मे कुछ महत्त्वपूर्ण कारक उत्तरदायी थे। दो महाशक्तियों के बीच हितों का टकराव विवाद का एक प्रमुख कारक था। अंतर्राष्ट्रीय क्रम-व्यवस्था में शिखर पर अमेरिका और सोवियत संघ की सुदृढ़ स्थिति एक-दूसरे के लिये शंका का कारण थी। दूसरे, वैचारिक मतभेद ने न केवल दो शक्तिशाली राष्ट्रों बल्कि दो भिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं के मध्य भी शीतयुद्ध को एक संघर्ष बना दिया। तीसरे, दोनों महाशक्तियों की एक-दूसरे के उद्देश्यों के प्रति गलतफहमी भी एक कारण थी। शंकालु व्यक्ति अपने कार्यों को सद्भावना से और प्रतिपक्षी के कार्यों को दुर्भावना की दृष्टि से देखते हैं। यह प्रवृत्ति शस्त्रों की होड़ से स्पष्ट होती है। गलतफहमी का शिकार होकर यह अनुमान लगा लिया गया कि शत्रु आक्रामक युद्ध की तैयारी कर रहा है। अत: शीतयुद्ध के विकास-काल में अमेरिका के नेताओं एवं उनके मित्रों ने उत्पन्न संकटों को विश्व-आधिपत्य की सोवियत योजना का भाग माना। दूसरी ओर, सोवियत संघ ने इसे भिन्न नजरिये से देखा। उसने इसे अपनी सामाजिक व्यवस्था के नाश के लिये पश्चिम का प्रयास उत्तरदायी माना। अविश्वास ने गलतफहमियों को जन्म दिया जो संघर्ष में बदल गया। विभिन्न हितों के साथ-साथ विचारधाराओं और धारणाओं का अंतर भी एक अन्य कारक था। इन महाशक्तियों की प्रतिद्वंद्विता की गति को पूर्णत: समझने के लिये इसके कारकों को जानना एवं इसकी घटनाओं की जाँच करना महत्त्वपूर्ण है, जिसका हम आगे सविस्तार वर्णन करेंगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के तुरंत बाद सोवियत-अमेरिकी मित्रता पारस्परिक शत्रुता में बदल गई। वर्ष 1950 में कोरियाई युद्ध और तिब्बत में चीनी हमले के साथ ही दो शक्तियों का आमना-सामना स्पष्ट है। यह सार्वभौमिक रूप से एक कटु संबंध बन गया, जिससे एक मुक्त विवाद (Open Dispute) के बढ़ने का भय हो गया। दूसरी ओर, महाशक्तियों के संबंधों ने तब एक नया मोड़ लिया जब 1949 में सोवियत संघ ने संयुक्त राज्य के परमाणु शक्ति (Atomic Power) संबंधी एकाधिपत्य को समाप्त कर दिया। नए शक्ति संतुलन में परिवर्तन ने प्रत्यक्ष विरोध से आंदोलन की दिशा बदल दी। अब दोनों शक्तियों ने मित्रों के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण संसाधनों का विस्तार शुरू कर दिया। उनकी सफलताओं ने द्विध्रुवीय विश्व (Bipolar World) का निर्माण किया, जहाँ एक ओर अमेरिका और उसके मित्र थे तो दूसरी ओर सोवियत संघ और उसके मित्र। महाशक्तियों का केंद्र-बिंदु यूरोप था, जहाँ वे अपना प्रभाव स्थापित करना चाहते थे और जहाँ सर्वप्रथम शीतयुद्ध आरंभ हुआ। अमेरिका के यूरोपीय मित्र और सोवियत संघ क्रमश: उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO) और वारसा पैक्ट (Warsaw Pact) में विभाजित हो गए। ये गठबंधन महाशक्तियों की बाहरी नीतियों का आधार बन गए। इसके अतिरिक्त, परमाणु शस्त्रों (Nuclear Weapons) के आविष्कार ने विश्व राजनीति में युद्ध के भय से उत्पन्न हो रही भूमिका में व्यापक परिवर्तन [illegible] दिया।

जोसेफ स्टालिन के उत्तराधिकारी निकिता खुश्चेव (Nikita Khrushchev) ने पूंजीवाद के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति (Policy of Peaceful Co-existence) का प्रचार किया। वर्ष 1963 में अमेरिका और सोवियत की सैन्य क्षमता

बढ़ती प्रतिद्वंद्विता के संबंध में परमाणु युद्ध (Nuclear War) से संभावित पारस्परिक विनाश के बढ़ते भय ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि सह-अस्तित्व एकमात्र विकल्प रह गया। इसका परिणाम हुआ- 1968 की परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Nuclear Test Ban Treaty)। अब महाशक्तियाँ यूरोपीय सीमाओं के स्थायीकरण, जिसमें वह सीमा भी शामिल है, जो जर्मनी को विभाजित करती है, से सहमत थीं। इस प्रकार अमेरिका और सोवियत संघ ने अपनी पूर्व विवादित रणनीतियों से स्वयं को अलग करना आरंभ कर दिया और देतांत (Detente) अर्थात् अमन का आधार अपनाने का फैसला कर लिया।

शीघ्र ही अमेरिका और सोवियत संघ के बीच उनकी नीतियों में परिवर्तन के फलस्वरूप संबंध सामान्य हो गए। विद्वेषी संबंध अब सहयोगी संबंध में बदल गए। भय, चेतावनी और प्रतिद्वंद्विता का स्थान अब आपसी मेलजोल, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, व्यापार संधियों और संयुक्त तकनीकी सम्मेलनों ने ले लिया। सामरिक शस्त्र नियंत्रण वार्ता (Strategic Arms Limitation Talks – SALT) की संरचना के अंतर्गत शस्त्र नियंत्रण देतांत (Detente) अमन या तनाव शैथिल्य वाद-विवाद का केंद्र बन गया। देतांत (Detente) के सतर्कतापूर्वक विकास के बावजूद, विरोध की निरंतरता की प्रवृत्ति यह सुनिश्चित करती है कि वह 1970 ई. के दशकांत तक टिका नहीं रह सकता था। अनेक संदर्भों से 1979 में अफगानिस्तान पर सोवियत हमले से देतांत (Detente) को आघात लगा। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में इसे द्वितीय देतांत (Detente II) के बाद द्वितीय शीतयुद्ध (Cold War II) कहा जाता है। अमेरिका के राष्ट्रपति जिमी कार्टर (Jimmy Carter) ने सोवियत हमले पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, "अफगानिस्तान में सोवियत हमले ने समस्त विश्व को एक गंभीर रणनीतिक चुनौती के सामने ला खड़ा किया है।" तत्पश्चात् उन्होंने 1980 के मॉस्को ओलंपिक (Mosco Olympics) का विश्वव्यापी बहिष्कार संगठित करने का प्रयास किया और सोवियत संघ को अमेरिका द्वारा खाद्य निर्यात (Export) की आपूर्ति बंद कर दी। अतः इसके बाद से उनके संबंधों में त्वरित रूप से कटुता पैदा होने लगी। शीघ्र ही उनके बीच घरेलू आर्थिक समस्याओं की कीमत पर शस्त्रों की होड़ पुनः आरंभ हो गई। संकटपूर्ण घटनाओं ने विवाद के पुनरारंभ (Restart) को रोके रखा। सोवियत समर्थकों ने लॉस एंजिल्स में 1984 के ओलंपिक खेलों के बहिष्कार द्वारा अपना बदला लिया। रीगन के सिद्धांत (Reagan's Principles) ने उन गैर-साम्यवादी विद्रोहियों के लिये अमेरिका के समर्थन को सुनिश्चित करने का आश्वासन दिया जो अफगानिस्तान, अंगोला और निकारागुआ से सोवियत समर्थक सरकारों का तख्ता उलटने का प्रयास कर रहे थे। इन कार्रवाइयों के कारण अमेरिका और रूस के आपसी संबंध बिगड़ते चले गए। बहरहाल, स्थिति अभी नियंत्रण में ही थी।

मिखाइल गोर्बाचेव (Mikhail Gorbachev) के 'नवीन विचारों' की वकालत ने इन प्रतिद्वंद्वी राज्यों के हितों में मेल-मिलाप कायम करने के लिये एक अधिक रचनात्मक काल के पहलुओं में इज़ाफा किया। वे पश्चिम के पूंजीवादी राष्ट्र के साथ सोवियत संघ के मतभेद समाप्त करने के पक्ष में थे। अप्रत्याशित रूप से सोवियत संघ ने वही किया, जैसा कि उसने वचन दिया था। उसने एक दुश्मन की बजाय एक मित्र की तरह व्यवहार किया, जो कि 1987 की मध्यम-प्रास परमाणु बल निःशस्त्रीकरण संधि (Intermediate-range Nuclear Forces Disarmament Agreement) पर हस्ताक्षर एवं स्टार्ट अर्थात् रणनीतिक शस्त्र कटौती संधि (Strategic Arms Reduction Talks – START) वार्ताओं की शुरुआत से स्पष्ट होता है। इसके बाद इस समझौते की गति तेज़ हो गई तथा सोवियत-अमेरिकी संबंधों में तेजी से सुधार आने लगा। शीतयुद्ध जिसकी शुरुआत यूरोप में हुई तथा जिसका प्राबल्य यूरोप में 45 वर्षों तक रहा, वह 1991 में सोवियत संघ के विघटन के साथ समाप्त हो गया। तदोपरांत, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के विकास में भूमंडलीकरण के उदय के साथ 1991 के बाद के घटनाक्रम ने एक नए युग का आरंभ किया।

कुछ मुद्दे एवं संकल्पनाएँ जिनके अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के सिद्धांत एवं व्यवहार में महत्त्वपूर्ण निहितार्थ हैं, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से गुजरते हुए यहाँ संदर्भानुसार उनके विश्लेषण की भी आवश्यकता है।

मार्शल योजना *(Marshall Plan)*

द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत सोवियत साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिये यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं के पुनर्निर्माण हेतु अमेरिका ने मौद्रिक सहायता प्रदान की। इसे ही यूरोप की सहायतार्थ व्यापक अमेरिकी कार्यक्रम मार्शल योजना (Marshall Plan) के नाम से जाना जाता है। दरअसल, 1947 तक यह स्पष्ट हो चुका था कि युद्धोपरांत यूरोप का आर्थिक पुनर्निर्माण आसान नहीं था। मार्शल योजना अमेरिकी राज्य सचिव जॉर्ज सी. मार्शल (George Marshall) द्वारा 5 जून, 1947 को हार्वड

विश्वविद्यालय को संबोधित किया गया एक प्रस्ताव था। वस्तुतः यह ट्रूमैन सिद्धांत (Truman Doctrine) का आर्थिक वि था। अमेरिकी सहायता का प्रस्ताव रखते हुए मार्शल ने यूरोप के लोकतांत्रिक आर्थिक संकट (Democratic Econom Crisis) की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया और उनका यह विश्वास था कि अमेरिका युद्ध से प्रभावित देशों के स्थापि में मदद कर सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि आर्थिक पुनर्निर्माण यूरोपवासियों के व्यवसाय का हिस्सा है, परंतु अमेरि ऐसे कार्यक्रम का प्रारूप तभी तैयार करेगा, जब यूरोप इसमें पहल करे और उन्हें यह भी सुझाव दिया कि कोई भी कार्यक्र तभी संयुक्त रूप ले सकता है, जब यदि सभी नहीं तो अधिकांश यूरोपीय राष्ट्र उसमें शामिल हों। मार्शल ने अपने भाषण कहा- "हमारी नीति किसी देश या सिद्धांत के विरुद्ध नहीं है बल्कि यह भुखमरी, गरीबी, निराशा और अव्यवस्था को समा करने के लिये है। इसका उद्देश्य विश्व में एक, सक्रिय अर्थव्यवस्था का पुनरुद्धार करना होना चाहिये, ताकि ऐसी राजनीति एवं सामाजिक परिस्थितियों को जन्म दिया जा सके, जिनमें स्वतंत्र संस्थाएँ अपना अस्तित्व कायम कर सकें।"

उक्त अमेरिकी प्रस्ताव पर यूरोपीय प्रतिक्रिया उत्साहजनक थी। इस योजना का निर्माण 1948 में किया गया, जब कॉंग्रे ने यूरोपीय पुनर्निर्माण कार्यक्रम (European Recovery Program – ERP) की नींव रखी। सोलह यूरोपीय राष्ट्रों ने अमेरि सहायता प्राप्त करने के लिये संयुक्त योजना में भाग लिया। यूरोप के आर्थिक पुनर्निर्माण को बढ़ावा देना तो मार्शल योज का औपचारिक उद्देश्य था, उसका वास्तविक उद्देश्य तो राजनीतिक लाभ उठाना था अर्थात् पहले से ही समृद्धशाली पश्चि यूरोप में साम्यवाद की पकड़ को कमजोर करना।

यह स्पष्ट था कि सोवियत-अमरीकी रणनीतियाँ अब सैनिक संघर्ष से हटकर जनता की मनोवृत्ति पर नियंत्रण पाने संघर्ष में बदल गई थीं। यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं को स्थायित्व प्रदान करने और सामाजिक अशांति को दूर करने में मार्श योजना की सफलता ने अमेरिकी नीति-निर्माताओं को यह सोचने पर बाध्य कर दिया कि विदेशी सहायता तो अस्थायित्व सामना करने और तदनुसार साम्यवाद का मुकाबला करने में यह एक उपयोगी कूटनीतिक उपाय हो सकता है। मार्शल योज के तहत तीसरी दुनिया के विकासशील देशों को अमेरिकी विदेशी सहायता देने की प्रक्रिया वर्ष 1949 में तकनीकी सहाय के लिये प्वाइंट-फ़ोर कार्यक्रम (Point IV Program) के साथ आरंभ हुई। उसके बाद इनके विस्तार में 1950 एवं 19 के दशकों में विकास अनुदान और ऋण के साथ-साथ इन देशों को सैनिक सहायता दिया जाना भी शामिल कर लिया ग

चीनी क्रांति और चीन में साम्यवादी शासन

(Chinese Revolution and Communist Regime in China)

चीन गणराज्य के इतिहास में 1916 से 1928 ई. तक का काल युद्धनेता युग (Warlord Era) के नाम से जाना जा है। वस्तुतः यह युद्धनेता (Warlord) प्रवृत्ति का ही परिणाम था कि देश असंख्य राज्यों में बँट गया। प्रत्येक राज्य एक युद्धने द्वारा नियंत्रित होता था। चूँकि सभी युद्धनेता आपस में लड़ रहे थे। अतः इसे घोर अव्यवस्था का युग माना जाता है। इ दिनों कौमिंटांग नामक एक पार्टी (Kuomintang-KMT) अथवा राष्ट्रीय जनवादी पार्टी, जिसका निर्माण 1912 में डॉ सनयात-सेन (Sun Yat-Sen) द्वारा किया गया था, राष्ट्रवादी चीन पर अपना शासन कायम करने का प्रयास कर रही थी औ उन अध्यक्षों पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास कर रही थी, जो आपसी टकराव में व्यस्त थे। डॉ॰ सनयात-सेन औ अध्यक्ष चियांग काई-शेक (Chiang Kai-Shek) कौमिंटांग पार्टी के नेता थे। सनयात-सेन ने अपने उद्देश्यों को इन ती सिद्धांतों में व्यक्त किया है-राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और भूमि सुधार। चीन साम्यवादी दल (China Communist Party-CC की स्थापना 1921 में हुई थी और कौमिंटांग पार्टी के सहयोग से उन्होंने युद्धनेताओं के साथ संघर्ष किया। चूँकि संयुक्त रा अमेरिका के सहयोग से कौमिंटांग पार्टी ने धीरे-धीरे अधिकांश चीन पर नियंत्रण स्थापित कर लिया था। वहीं दूसरी ओ माओ त्से-तुंग (Mao Tse-tung) के नेतृत्व में साम्यवादियों ने प्रबल प्रतिक्रिया दिखाई।

बुद्धिजीवी लोग साम्यवादी दल में शामिल तो थे लेकिन उनकी सैन्य शक्ति बहुत कम थी जो कि कौमिंटांग पा (KMT) के साथ उनके कार्य करने की मंशा स्पष्ट करता है। वर्ष 1931 में माओ पार्टी की केंद्रीय कार्यकारी समिति के अध्यक्ष नियुक्त हुए और तब से धीरे-धीरे उन्होंने चीनी साम्यवाद के वास्तविक नेता के रूप में अपनी स्थिति मज़बूत कर ली। परिणाम यह हुआ कि अगले दस वर्षों में साम्यवादियों को समर्थन मिलता रहा, जबकि चियांग काई-शेक और कौमिंटांग पार्टी (KMT) ने स्थायी रूप से अपनी लोकप्रियता खो दी। जब 1945 ई. में जापानियों की हार हुई तब कौमिंटांग पा

(KMT) और चीनी साम्यवादी दल (CCP) शक्ति के लिये अंतिम संघर्ष में जुट गए। अमेरिकियों ने जापान द्वारा खाली किये गए पिछले सभी क्षेत्रों पर कब्जा करने में कौमिंटांग पार्टी (KMT) की मदद की। यहाँ रूसियों ने कौमिंटांग पार्टी (KMT) को रोका और चीनी साम्यवादी दल (CCP) के गुरिल्लाओं के आगे बढ़ने का समर्थन किया। वास्तव में, कौमिंटांग पार्टी (KMT) की बाहरी शक्ति भ्रामक थी। वर्ष 1948 में निरंतर प्रयासरत साम्यवादी सेनाएँ गुरिल्ला अभियान छेड़ने तथा चियांग की सेनाओं को प्रत्यक्ष चुनौती देने में समर्थ हो गईं। जैसे ही वे प्रत्यक्ष दबाव में आईं, कौमिंटांग पार्टी (KMT) की सेनाएँ विघटित होने लगीं। जनवरी 1949 में साम्यवादियों ने बीजिंग को अपने अधिकार में ले लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि चियांग काई-शेक मुख्य भूमि चीन को माओ के हाथों में छोड़ अपनी सेनाओं सहित ताइवान पलायन कर गया।

कौमिंटांग पर साम्यवादी विजय के बाद 1949 में माओत्से-तुंग ने बिखरे चीन के पुनर्निर्माण का कार्य आरंभ किया। प्रारंभ में वहाँ रूसी सहायता और सलाह ली गई, परंतु 1950 के दशकांत तक संबंधों में उतनी मधुरता न रहने के कारण रूसी आर्थिक सहायता को कम कर दिया गया। माओ ने चीन की आर्थिक माँगों को पूरा करने के लिये व्यापक रूप से महाछलाँग अभियान (Great Leap Forward) चलाया। हालाँकि 1970 ई. के उत्तरार्द्ध में माओ की सांस्कृतिक क्रांति (Cultural Revolution) (1966-1969) तथा डेंग जियोपिंग (Deng Xioping) के शासन काल में तियानानमेन स्क्वेयर (Tiananmen Square) घटना के संदर्भ में विश्व स्तर पर जनता क्षुब्ध हुई, परंतु साम्यवाद के झंडे तले राजनीतिक व्यवस्था जस की तस बनी रही।

वियतनाम संकट *(Vietnam Crisis)*

सदियों तक चीन के विरुद्ध असफल क्रांतियों के बाद अंततः वियतनाम ने 938 AD में स्वतंत्रता प्राप्त कर ली थी। उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ तक देश के अधिकांश क्षेत्र में वनीय पर्वत और पठार थे। फ्राँस ने 1850 एवं 1860 के दशक में वियतनाम, लाओस और कंबोडिया पर अपना औपनिवेशिक नियंत्रण स्थापित कर लिया जिसे वे संयुक्त रूप से इंडो-चीन (हिंद-चीन) के रूप में प्रकाशित करते थे। साम्राज्यवादी जापान ने 1940 से 1945 ई. तक उस क्षेत्र में अपना आधिपत्य जमाए रखा। जापान और फ्राँस के विरोध में वियत मिन्ह (Viet Minh) नामक एक वियतनामी स्वतंत्र लीग (League for the Indendependence of Vietnam) संगठित हुई जिसका नेतृत्व एक साम्यवादी नेता हो ची मिन्ह (Ho Chi Minh) कर रहे थे। यद्यपि वियतनाम का नेतृत्व साम्यवादी कर रहे थे परंतु उसमें विभिन्न राजनीतिक मतों के समर्थक शामिल थे, जिन्हें विदेशी नियंत्रण स्वीकार नहीं था और वे इसे समाप्त करना चाहते थे। वर्ष 1945 में द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर हो ची मिन्ह ने संपूर्ण वियतनाम को स्वतंत्र घोषित कर दिया। लेकिन जब उन्हें इस मंशा का पता चला कि फ्राँस का उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता देने का कोई इरादा नहीं तो वियतनाम के ध्वज के नीचे संगठित सेनाओं ने उन पर धावा बोल दिया। यह संघर्ष आठ वर्ष (1946-1954) चला, जिसकी समाप्ति डियेन बियेन फू (Dien Bien Phu) (उत्तरी वियतनाम में हनोई के पास एक स्थान) में फ्राँस की पराजय के साथ हुई। आंशिक रूप से वियतनाम सफल रहा क्योंकि उसे गुरिल्ला रणनीतियों में कुशलता हासिल थी और साथ ही उसे वियतनाम के लोगों का व्यापक समर्थन भी प्राप्त था। इसके अतिरिक्त, फ्राँसीसी अभी भी विश्वयुद्ध के परिणामों से प्रभावित थे। ऐसा माना जाता है कि निर्णायक कारक 1950 ई. से शुरू होता है, जब नई चीनी साम्यवादी सरकार ने विद्रोहियों को शस्त्र एवं युद्ध-सामग्री की आपूर्ति कराई।

वर्ष 1954 के जेनेवा समझौते (Geneva Conference, 1954) के अनुसार, लाओस और कंबोडिया को स्वतंत्रता मिलनी थी और वियतनाम का अस्थाई रूप से 17वें अक्षांश पर दो राज्यों के रूप में विभाजन होना था। संयुक्त राज्य अमेरिका को यह आभास होने पर कि यह संघर्ष शीतयुद्ध का ही एक भाग है और यह लड़ाई साम्यवाद के विरुद्ध है, वह इस सीमांकन पर राजी हो गया। उत्तरी वियतनाम में हो ची मिन्ह की सरकार को मान्यता मिल गई थी। दक्षिणी वियतनाम के लिये उस समय एक पृथक् सरकार निर्वाचित होनी थी तथा 1956 ई. तक समस्त देश में निर्वाचन होने थे, जिसके द्वारा उसका एकीकरण अपेक्षित था। हालाँकि हो ची मिन्ह विभाजन से निराश थे, फिर भी वे इस बात से आश्वस्त थे कि राष्ट्रीय चुनावों में साम्यवाद की विजय होगी। चूँकि राष्ट्रपति नगो डिन डीम (Ngo Dinh Diem) के नेतृत्व में दक्षिण वियतनाम की सरकार ने संपूर्ण वियतनाम के लिये चुनावों की तैयारी करने से मना कर दिया था अतः चुनाव समय पर नहीं हो पाए। दक्षिण वियतनाम में

शासन का समर्थन कर रहे अमेरिका ने साम्यवाद की विजय के डर से उस पर दबाव नहीं डाला। यद्यपि डीम ने उत्साहपूर्ण शुरुआत की, फिर भी उसकी सरकार ने जल्द ही लोकप्रियता खो दी। वर्ष 1960 में विभिन्न समूह से जिनमें वियत मिन्ह (Viet Minh) के पूर्ववर्ती साम्यवादी सदस्य भी शामिल थे, ने एक नेशनल लिबरेशन फ्रंट (National Liberation Front-NLF) की स्थापना की। उन्होंने एक ऐसी लोकतांत्रिक राष्ट्रीय गठबंधन सरकार की मांग की जो एकीकृत वियतनाम के लिये शांतिपूर्वक सुधार एवं संधियों का प्रस्ताव ला सके। जब यह स्पष्ट हुआ कि डीम स्थिति से नहीं निपट सकता तो अमेरिका ने दक्षिण वियतनाम में अपनी सेना बढ़ाने का निर्णय ले लिया। अमेरिका अपने निश्चय में इसलिये दृढ़ था क्योंकि वह जानता था कि 'गुरिल्ला' के नाम से विख्यात वियत खांग (Viet Khang) उत्तरी वियतनाम से वस्तु आपूर्ति, सैन्य सामग्री और सैन्य सहयोग प्राप्त कर रहे थे। हो ची मिन्ह का विश्वास था कि देश के दो टुकड़ों को जोड़ने के लिये ऐसी सहायता उचित है। वर्ष 1972 के अंत में, वियत खांग ने देश के समूचे पश्चिमी भाग पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। मार्च 1968 में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी। अमेरिकी सेनाओं ने माई लाई (My Lai) और माई खे (My Khe) नामक गाँवों के निवासियों को घेर लिया जिसमें बच्चों सहित वूढ़े लोग भी शामिल थे। उन सबकी हत्या कर दी गई और वड़ी तादाद में उन्हें दफ़ना दिया गया। तदनंतर, उत्तरी वियतनाम, लाओस और कंबोडिया में भीषण बमबारी, वन संपदा का रसायनों द्वारा विनाश और हज़ारों निर्दोष लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा। इसके विरुद्ध विश्व जनमत तैयार हुआ। फलतः राष्ट्रपति निक्सन वियतनाम छोड़ जाने के दबाव में आ गए।

जनवरी 1973 में युद्धविराम के साथ यह सुनिश्चित हुआ कि सभी अमेरिकी सैन्य दलों को वियतनाम से बेदखल किया जाएगा और उत्तरी व दक्षिणी वियतनाम दोनों 17वें अक्षांश के साथ ही सीमा-रेखा का सम्मान करेंगे। परंतु 1975 में, वियत कांग और उत्तरी वियतनाम ने दक्षिण को अपने अधिकार में ले लिया। अंततः, साम्यवादी सरकार के अधीन वियतनाम का एकीकरण हो गया और वह विदेशी हस्तक्षेप से मुक्त हो गया। उसी वर्ष लाओस और कंबोडिया में साम्यवादी सरकारों की भी स्थापना हुई। अमेरिका की असफलता का प्रमुख कारण वियत खांग और नेशनल लिबरेशन फ्रंट (NLF) को प्राप्त सामान्य जनता का समर्थन था। वियत मिन्ह की तरह वियत अन्ह भी गुरिल्ला युद्ध में दक्ष था और वह समान प्रदेश के लिये संघर्षरत था तथा वियत खांग को उत्तरी वियतनाम से सैन्य दलों के रूप में एवं चीन और रूस से शस्त्रों के रूप में आवश्यक सहायता मिली। अंततः उत्तरी वियतनाम अपनी विजय के प्रति समर्पित था और वह देश का एकीकरण भी चाहता था।

कोरिया संकट *(The Korean Crisis)*

कोरिया जापान के नियंत्रण में 1910 ई. से था। जब अगस्त 1945 में जापानियों की पराजय हुई तो अमेरिका और सोवियत रूस 38 वीं समानांतर रेखा के साथ-साथ देश को दो भागों में विभक्त करने पर सहमत हो गए ताकि वे संयुक्त रूप से जापानियों को आत्मसमर्पण और निष्कासन के लिये तैयार कर सकें। उत्तर में रूसी प्रभाव से किम इल-सुंग (Kim Il-Sung) की साम्यवादी सरकार के अंतर्गत कोरिया लोकतांत्रिक जन गणराज्य (Democratic People's Republic of Korea) जिसे उत्तरी कोरिया (North Korea) कहा जाता है का गठन किया गया तथा दक्षिण में अमेरिकी प्रभाव से सिंगमैन री (Syngman Rhee) के अधीन कोरिया स्वतंत्र गणराज्य (Independent Republic of Korea) अर्थात् दक्षिण कोरिया (South Korea) का गठन किया गया।

अधिकांश कोरियाई लोग बाहरी लोगों द्वारा देश के इस बलपूर्वक किये गए विभाजन से रुष्ट थे। जून 1950 में बि किसी चेतावनी के उत्तरी कोरियाई सैन्य दलों ने दक्षिणी कोरिया पर हमला कर दिया। संयुक्त राज्य अमेरिका के तत्का राष्ट्रपति ट्रूमैन ने माना कि यह हमला स्टालिन के दिमाग की उपज था। उन्होंने इसे एक गंभीर चुनौती के रूप में प्र किया तथा इसे व्यापक रूप से साम्यवाद के प्रसार के लिये रूस की एक विस्तृत योजना का भाग समझा। इस प्रकार उ अमेरिकी नीति में एक निर्णायक परिवर्तन आया। तत्कालीन आर्थिक मदद और समर्थन की बजाय ट्रूमैन ने निर्णय किया कि पश्चिम को अपनी जगह बनाने के लिये दक्षिणी कोरिया को सहयोग देना आवश्यक है। इससे पहले कि संयुक्त राष्ट्र (UN) किसी कार्यवाही पर विचार करता, उससे पहले ही जापान ने अमेरिकी दलों को कोरिया में हस्तक्षेप करने का आ दे दिया। संयुक्त राष्ट्र के सैन्य दल सितंबर 1950 के अंत में सिओल (दक्षिणी कोरिया की राजधानी) में प्रवेश कर और उन्होंने दक्षिण से साम्यवादी सेनाएँ हटा दीं। युद्ध विराम घोषित करने की बजाय ट्रूमैन ने उत्तरी कोरिया में हमले

आदेश दे दिया ताकि देश का एकीकरण कर वहाँ मुक्त चुनाव करवाए जा सके। चीन ने पलटवार करते हुए चेतावनी दी कि यदि संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं ने उत्तरी कोरिया में प्रवेश किया तो वे इसका प्रतिरोध करेंगे। परंतु इस चेतावनी को अनदेखा कर दिया गया। अक्टूबर के अंत में संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं ने प्योंगयांग (उत्तरी कोरिया की राजधानी) को अपने कब्ज़े में कर लिया। नवंबर में हज़ारों चीनियों ने दलों सहित, जिन्हें 'स्वयंसेवक' की संज्ञा दी गई, इसका व्यापक प्रतिरोध किया। जनवरी 1951 में उन्होंने उत्तरी कोरिया से संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं को बाहर खदेड़ दिया और 38वीं समानांतर रेखा को पार कर सिओल पर पुनः अधिकार कर लिया। इसके पश्चात् ट्रूमैन ने विचार किया कि यदि आगे भी कार्यवाही की गई तो इससे व्यापक स्तर पर युद्ध भड़क सकता है, जो कि अमेरिका नहीं चाहता था। अतः उन्होंने मात्र साम्यवाद के अवरोध द्वारा समाधान का निर्णय लिया और जून 1951 में संयुक्त राष्ट्र के सैन्य दलों ने दक्षिणी कोरिया से पुनः साम्यवादियों को बाहर धकेला तथा 38वीं समानांतर रेखा के साथ सीमा अवरुद्ध कर दी गई।

क्यूबा मिसाइल संकट–1962 *(Cuban Missile Crisis–1962)*

अमेरिका के निकट एक टापू, क्यूबा (Cuba) 1959 में शीतयुद्ध में शामिल हो गया। यहाँ 1958 ई. में फिदेल कास्त्रो (Fidel Castro) के नेतृत्व में साम्यवादी (Socialist) शासन की स्थापना हुई थी। अब कास्त्रो ने सोवियत संघ (USSR) के साथ घनिष्ठ संबंध बढ़ाने शुरू कर दिये। अमेरिका के लिये निश्चय ही यह चिंता का विषय था क्योंकि उसकी सीमा पर साम्यवादी रूस का क्यूबा के माध्यम से प्रभाव बढ़ रहा था।

शीघ्र ही सोवियत संघ से क्यूबा को बड़ी मात्रा में आर्थिक और सैनिक सहायता मिलने लगी। वर्ष 1962 के आसपास तो अमेरिका ने क्यूबा में नए-नए सैनिक अड्डों की स्थापना की निंदा करते हुए क्यूबा के नाकेबंदी की घोषणा कर दी। इसका उद्देश्य अमेरिकी जहाजों द्वारा क्यूबा को घेर लेना था ताकि वहाँ सोवियत संघ से भेजी जाने वाली सैनिक सामग्री न पहुँच सके। तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति कैनेडी का यह कदम सोवियत संघ के लिये एक स्पष्ट चुनौती थी कि या तो वह क्यूबा को सैनिक सहायता देना बंद कर दे अथवा युद्ध के लिये तैयार हो जाए। इस प्रकार संसार परमाणु युद्ध (Nuclear War) के कगार पर खड़ा दिखाई देने लगा, तब संयुक्त राष्ट्र (UN) के तत्कालीन महासचिव यू थाण्ट (U. Thant) ने दोनों पक्षों से आत्मसंयम बरतने की अपील की। सोवियत प्रधानमंत्री ख्रुश्चेव ने इस समय दूरदर्शिता से काम लिया और क्यूबा से सोवियत संघ के मिसाइल ठिकानों (Missile Bases) को हटाना स्वीकार कर लिया। कैनेडी ने भी बयान दिया कि अमेरिका दोबारा क्यूबा पर चढ़ाई नहीं करेगा। यह संकट हालाँकि केवल कुछ दिनों का ही था, परंतु इसने अत्यधिक तनाव की स्थिति उत्पन्न कर दी। दोनों पक्षों को परमाणु युद्ध की भयावहता का बोध था। अतः तात्कालिक मंत्रणा के लिये मॉस्को (USSR) और वाशिंगटन (USA) के बीच दूरभाष संपर्क (Hot Line) स्थापित किया गया। तदोपरांत जुलाई 1963 में संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस और ब्रिटेन ने परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Nuclear Test Ban Treaty–NTBT) पर हस्ताक्षर किये, जिसमें इस बात पर सहमति हुई कि पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिये केवल भूमिगत (Underground) परमाणु परीक्षण ही किये जाएंगे। बहरहाल शस्त्रों की होड़ फिर भी जारी रही। वर्ष 1970 में जब अमेरिका वियतनाम युद्ध (Vietnam War) में गंभीरता से शामिल हो गया तब उसने परमाणु शस्त्रों पर व्यय करना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे रूस ने भी कमर कस ली। 1970 के दशक की शुरुआत में रूस ने अंतर-महाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्रों (Inter-continental Ballistic Missiles–ICBM) और अंतःसागरी प्रक्षेपास्त्रों (Submarine Launched Ballistic Missiles–SLBM) की कुल संख्या में अमेरिका को पीछे छोड़ दिया। उसने एक नए शस्त्र का भी विकास किया। यह प्रक्षेपास्त्र-निरोधी मिसाइल (Anti-Ballistic Missile–ABM) थी, जो शत्रु की आने वाली मिसाइल को लक्ष्य तक पहुँचने से पहले ही नष्ट कर देती है। तथापि, अमेरिका अन्य मामलों में आगे था। उसने मल्टीपल इंडिपेंडेंटली टारगेटेबल रीएंट्री व्हीकल (Multiple Independently Targetable Reentry Vehicle–MIRV) द्वारा और भी अधिक भयंकर शस्त्रों का निर्माण किया। यह एक ऐसा प्रक्षेपास्त्र था जिसमें से 14 पृथक् शीर्ष (Head) निकल सकते थे, जिसका प्रयोजन भिन्न-भिन्न लक्ष्यों को साधना हो सकता था। शीघ्र ही रूस ने भी 1977 ई. में उक्त प्रक्षेपास्त्र (MIRV) का विकल्प तैयार कर लिया। इसका नाम था एसएस-20 (SS-20)। बहरहाल, उत्तर-शीतयुद्ध काल में अनेक राज्यों के सामने उनके सैन्य प्राधार में, कहीं अधिक जटिल विकल्प है, क्योंकि अब आकस्मिक संभावनाओं एवं भय की प्रकृति में परिवर्तन आ चुका था।

नवीन शीतयुद्ध *(New Cold War)*

शीतयुद्ध में शक्ति संतुलन 1975 और 1979 ई. के बीच निरंतर सोवियत संघ के पक्ष में जाने लगा। सोवियत संघ ने अफ्रीका के एक बड़े भाग में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था। उसी समय में 1979-80 ई. के दौरान ईरान में अमेरिका की प्रतिष्ठा को धक्का लगा। ईरान का शाह, जिसे अमेरिका अपना एक सुरक्षित मित्र समझता था, का तख्ता अचानक इस्लामी क्रांति के बाद 1979 में एक हिंसक क्रांति में अयातुल्लाह खोमैनी (Ayatollah Khomeini) द्वारा उलट दिया गया। वर्ष 1979 ई. में अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप देतांत के लिये एक घातक हवा का झोंका था। सोवियत नेताओं को यह लगता था कि उक्त सैनिक गतिविधि छोटी होगी और विदेशी प्रतिक्रिया भी सीमित और अस्थायी होगी। लेकिन वे दोनों ही पहलुओं पर गलत सावित हुए। यह सैन्य अभियान नौ वर्षों तक चला और विदेशी प्रतिक्रिया भी कठोर और दीर्घकालिक सिद्ध हुई। अमेरिकियों ने आश्चर्यजनक तीव्रता दिखाई। दिसंबर 1979 के आरंभ में अमेरिकी राष्ट्रपति कार्टर ने मॉस्को तक दूरभाष संपर्क (Hot Line) का प्रयोग करते हुए आशंका व्यक्त की कि सोवियत-अमेरिकी संबंध खतरे में पड़ सकते हैं। वर्ष 1980 में हमले की शुरुआत से एक वर्ष के भीतर ही अमेरिका ने सोवियत संघ को खाद्यान्नों और उच्च तकनीकी के निर्यात पर आंशिक रूप से निषेध लागू कर दिया और द्वितीय सामरिक शस्त्र परिसीमन वार्ता (SALT-2) के समझौते को मानने से इंकार कर दिया। इसके अलावा उसने वर्ष 1980 में मॉस्को में आयोजित होने जा रहे ओलंपिक खेलों का बहिष्कार किया। अंततोगत्वा 3 जनवरी, 1980 को संयुक्त राष्ट्र संघ (UN) में अभिव्यक्त अंतर्राष्ट्रीय जनमत प्रवल रूप से सोवियत संघ के खिलाफ हो गया।

उत्तर-शीतयुद्ध काल *(Post-Cold War Era)*

उत्तर-शीतयुद्ध काल में वर्ष 1989 से 1991 की घटनाओं ने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अनेक पहलुओं में एक नया मोड़ उपस्थित कर दिया। जहाँ एक ओर द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में सोवियत-अमेरिकी प्रतिद्वंद्विता पर आधारित द्वि-ध्रुवीय संरचना (Bipolor Structure) का अंत हो गया। वहीं दूसरी ओर राष्ट्र-राज्य स्तर पर महत्त्वपूर्ण बदलाव आए। पूर्व साम्यवादी राज्यों ने आर्थिक संकट से लेकर राज्य विघटन जैसी गंभीर समस्याओं का सामना किया। शीतयुद्ध की समाप्ति ने सभी राज्यों के राष्ट्रीय हितों और मामलों में राज्यों को नवीन आकार देने के लिये विवश कर दिया। इसका विभिन्न एवं बहुआयामी संगठनों पर भी प्रभाव पड़ा। वारसा संधि (Warsaw Pact) को भंग कर दिया गया, लेकिन नाटो (NATO) नए संदर्भ में संघर्परत रहा। अब वैचारिक और सुरक्षात्मक मुद्दों का स्थान नैतिक, मानवीय और सांस्कृतिक मुद्दों ने ले लिया। चूँकि सोवियत संघ में साम्यवाद को नकार दिया गया था, इसलिये नए युग की शुरुआत होना स्वाभाविक था। शीतयुद्ध के आकस्मिक अंत ने पिछले दो महायुद्धों की सीख से परे एक भिन्न सबक लिया। महाशक्तियों की प्रतिद्वंद्विता का अंत सशस्त्र संघर्ष की बजाय शांतिपूर्ण ढंग से हुआ। इस बात से यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि महाशक्तियाँ यदि चाहें तो युद्ध व रक्तपात के बिना भी अपनी समस्याओं के लिये शांतिपूर्ण समाधान ढूंढ सकती हैं।

शीतयुद्ध के अंत का आकस्मिक परिणाम था कि अब संयुक्त राज्य अमेरिका अंतर्राष्ट्रीय संरचना के शिखर पर अकेला खड़ा था। अब सोवियत संघ कहीं से भी वर्चस्व में उसके आड़े नहीं था। शीतयुद्ध की समाप्ति ने अमेरिका और सोवियत संघ को उस प्रतिद्वंद्विता से मुक्त कर दिया था जिसने उनके अपार संसाधनों को निचोड़ लिया था और अन्य शक्तियों जैसे कि चीन, जर्मनी और जापान की तुलना में उनकी आर्थिक शक्ति को भी काफी कमज़ोर कर दिया था।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है अब एक ऐसी नई विश्व व्यवस्था की पृष्ठभूमि तैयार की जा रही थी जिसमें अमेरिका को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UN Security Council) तथा अन्य सदस्यों के साथ मिलकर विश्व में स्थायित्व प्रदान करने वाली भूमिका वहन करनी थी। शीत युद्धोत्तर विश्व बहुध्रुवीय (Multipolar) न होकर वह एकध्रुवीय (Unipolar) हो गया था। अब विश्व शक्ति का केंद्र संयुक्त राज्य अमेरिका था, जिसकी ओर पश्चिम के देश निहार रहे थे। वर्ष 1991 के खाड़ी युद्ध (Gulf War) को एक नए प्रकार की सामूहिक अंतर्राष्ट्रीय गतिविधि मॉडल के रूप में देखा गया जिसमें प्रबल अमेरिका के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र एक वास्तविक सामूहिक सुरक्षा संगठन की भूमिका निभा सकता था। शीतयुद्ध ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में स्थायीकरण की भूमिका निभाई है। हम इस दृष्टिकोण को भी प्रसंगवश नकार नहीं सकते। इस दृष्टिकोण से शीतयुद्ध का अंत अस्थायीकरण की घटना थी। सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के उत्तरवर्ती राज्यों में अव्यवस्था और हिंसा

के निराशावादी पूर्वानुमान लगाए जा रहे थे। जहाँ एक ओर कुछ राष्ट्रों ने तीन प्रमुख आर्थिक खंडों- अमेरिका, यूरोपीय यूनियन और पूर्वी एशिया पर आधारित बहुध्रुवीयता पर विचार किया तो वहीं दूसरी ओर अन्य राष्ट्रों ने अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में अमेरिका के प्रभुत्व पर आधारित एकध्रुवीयता का समर्थन किया।

दो महाशक्तियों के स्थान पर एक महाशक्ति हो जाने के बावजूद ऐसे कुछ कारण हैं, जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि विश्व में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। उदाहरण के लिये, अमेरिका पहले की ही भाँति बेहद शक्तिशाली है, यूरोप एकीकरण के रास्ते पर चल रहा है, उत्तर-दक्षिण संवाद समाप्त नहीं हुआ है आदि। विश्व की कुछ प्रमुख समस्याएँ शीतयुद्ध की समाप्ति से जुड़ी न होकर नए समय की उपज प्रतीत होती हैं। कुछ समस्याओं का संबंध शीतयुद्ध की समाप्ति और उनके परिणामों से जुड़ा हुआ है, जैसे कि खाड़ी युद्ध (Gulf War), युगोस्लाविया में राज्य भंग (Break up of Yugoslavia) तथा परमाणु-प्रसार (Nuclear Proliferation)। ये वास्तव में कुछ ऐसे परिवर्तन हैं जो शीतयुद्ध काल के अध्ययन के महत्त्व को स्थापित करते हैं।

एकध्रुवीय विश्व का उदय *(Emergence of Unipolar World)*

ऐसा माना जाता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका अपने सैनिक सामर्थ्य में समस्त रूप से अपने सभी प्रतियोगियों से आगे था। कुछ विचारकों के मत के अनुसार, शीत युद्धोत्तर काल में समकालिक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की संरचना एकध्रुवीय थी अर्थात् अमेरिका का ही वर्चस्व था। उसके द्वारा प्रतिरक्षा पर होने वाला व्यय अन्य सभी शक्तियों के संयुक्त रक्षा-व्यय से कहीं अधिक था। आर्थिक रूप से भी वह विश्व में शक्तिशाली रहा है। उसके घरेलू बाज़ार का वृहत् आकार उसकी संसाधन निधि और उसकी नम्र शक्ति के तत्त्व, जैसे कि वैचारिक व सांस्कृतिक अपील एवं भाषा आदि यह निर्धारित करते हैं कि कोई भी अन्य शक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका से शत्रुता की सोच भी नहीं सकता। इस प्रकार शक्ति का एकध्रुवीय वितरण बड़ी-बड़ी शक्तियों के मध्य सहयोगी संबंधों को आयाम (Dimension) प्रदान करता है। कुछ देशों ने उत्साहपूर्वक तो कुछ ने बेमन से ही अमेरिका के वर्चस्व को स्वीकार किया है।

खाड़ी युद्ध में अमेरिकी सैन्य शक्ति के विशाल प्रदर्शन द्वारा खाड़ी के देश इराक के राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन की भारी पराजय ने अमेरिका के आत्मविश्वास को और अधिक बढ़ाया। इसने तथाकथित 'वियतनाम संलक्षण' (Vietnam Syndrome) को उखाड़ फेंका। तथापि, तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बुश के उत्तरवर्ती बिल क्लिंटन ने विदेश नीति में कोई व्यापक रुचि नहीं दिखाई। उनका विशेष उत्साह आर्थिक वर्चस्व या अर्थव्यवस्था को स्थापित करने में था। उनके कुशल राजनीतिक नेतृत्व में अमेरिका का भाग्य चमक गया। वर्ष 1992 और 2000 की अवधि में अमेरिका ने युद्धोत्तर काल की सबसे लंबी गूँज अनुभव की। न केवल अर्थव्यवस्था ने अमेरिकियों में आत्मविश्वास को बढ़ावा दिया, बल्कि उसकी लोकप्रिय संस्कृति ने भी उसका साथ दिया। इस विशिष्ट प्रभाव का जिम्मा सुदृढ़ अमेरिका ने अपने ऊपर ले लिया, ताकि वह अपनी सर्वोच्चता को बनाए रख सके। बदले में शेष विश्व राजनीतिक व सैनिक नेतृत्व के लिये अमेरिका की ओर निहारने लगा। तब एकमात्र राष्ट्रीय मुद्रा शक्तिशाली डॉलर था, जिसे सभी देशों ने मान्यता दे दी। अमेरिका की पहुँच प्रशांत एवं अटलांटिक तक, मध्य एवं लैटिन अमेरिका में और मध्य व दक्षिण एशिया के केंद्रीय भाग तक हो गई। यह भी कहा जा सकता है कि अमेरिका वैश्विक रूप से अधिनायक बन गया। इन सभी महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में अमेरिका ने अन्य देशों के बीच प्रायः समझौता कराने के लिये रेफरी और खिलाड़ी दोनों की भूमिका निभानी आरंभ कर दी।

वर्ष 1991 से अमेरिका हर प्रकार से मध्यस्थ की भूमिका निभा रहा है। चाहे वह उत्तरी आयरलैंड शांति प्रक्रिया हो, 1994 के बाद नाटो के आकार में वृद्धि हो या अफगानिस्तान में तालिबान विरोधी संघर्ष हो अथवा इराक से सद्दाम हुसैन का तख्ता पलट हो, सभी मामलों में अमेरिका ने अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका दर्ज कराई है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंध: महत्त्वपूर्ण शब्दावली *(International Relations: Important Terminologies)*

- **एशियाई मुद्रा इकाई (Asian Currency Unit)**- एशियाई विकास बैंक द्वारा सैद्धांतिक तौर पर एशियाई करेंसी यूनिट को प्रस्तावित किया गया है जो एशियाई मुद्राओं के संकलन से बनी है। यद्यपि यह व्यापारिक मुद्रा नहीं है, तथापि संकेतक का कार्य करती है, जो क्षेत्रीय मुद्राओं के संयुक्त रूप तथा डॉलर और यूरो के तुलनात्मक मान को प्रदर्शित करती है।

- **शांति हेतु परमाणु एजेंसी (Atoms for Peace Agency)**- 'अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण' (IAEA) की स्थापना विश्व की 'एटम्स फॉर पीस' एजेंसी के रूप में 1957 में की गई थी, जो संयुक्त राष्ट्र तंत्र में सुरक्षित व शांतिपूर्ण परमाणु तकनीकी को बढ़ावा देती है।
- **विपरीत अधिकार क्षेत्र (Area of Adverse Possession)**- ये ऐसे क्षेत्र हैं, जिसमें बांग्लादेशी क्षेत्र में भारतीय तथा भारतीय क्षेत्र में बांग्लादेशी निवास करते हैं। इन क्षेत्रों में प्रशासन का निर्धारण स्पष्ट नहीं है। ये क्षेत्र दोनों देशों के मध्य विवाद का विषय हैं। हालिया समय में इन्हें लेकर भारत और बांग्लादेश के बीच विस्तृत समझौता किया गया है।
- **अप्रवासी घाट (The Immigration Depot)**- यह मॉरीशस का वह स्थान है, जहाँ 18वीं सदी के मध्य व 19वीं सदी में चार लाख से अधिक भारतीय मजदूर गन्ने के खेतों में काम करने के लिये पहुँचे थे।
- **शांति-समझौता (Armistice)**- यह युद्ध की प्रभावी समाप्ति है। इसके तहत युद्धरत देश लड़ाई को रोकने पर आपस में सहमत हो जाते हैं। यह ज़रूरी नहीं कि इसके तहत युद्ध की समाप्ति हो जाए।
- **अंटार्कटिक संधि (Antarctic Treaty)**- इस संधि पर वाशिगंटन में 1959 में हस्ताक्षर किये गए थे। इसके द्वारा अंटार्कटिक में किसी प्रकार की क्षेत्रीय दावेदारी तथा यहाँ मौजूद संसाधनों के आर्थिक दोहन का निषेध किया गया है। इस क्षेत्र में संधि के अनुसार सैनिक गतिविधियों की मनाही है, भारत भी इसका हस्ताक्षरकर्ता देश है। वर्तमान में इस संधि में 53 राष्ट्र शामिल हैं।
- **बेसल समिति (Basel Committee)**- यह समिति बैंकिंग पर्यवेक्षण का कार्य करती है। इसका गठन जी-10 राष्ट्रों द्वारा 1974 में किया गया था। यह जी-10 देशों में केंद्रीय बैंकों व बैंक पर्यवेक्षकों का एक समूह है। इस समिति ने अपने प्रथम मानक बेसल-1 को 1988 में विकसित किया था। इसके बाद बेसल-2 तथा बेसल-3 मानक भी इसके द्वारा विकसित किये गए हैं जो बैंकिंग विनियमन पर केंद्रित हैं।
- **जैविक युद्ध (Biological Warfare)**- जब किसी ऐसे जीवाणु (बैक्टीरिया, वायरस आदि) का प्रयोग, जो बीमारियाँ फैलाते हैं या जैव विपों का प्रयोग, जो प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं, युद्ध में हथियार के तौर पर प्रयुक्त होता है, तब इसे जैविक युद्ध की संज्ञा दी जाती है।
- **बांगडुंग कॉन्फ्रेंस (Bangdung Conference)**- यह कॉन्फ्रेंस 1955 में हुई थी, इसका उद्देश्य अफ्रीका व एशियाई देशों के मध्य आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग को बढ़ावा देना तथा उपनिवेशवाद व नव-उपनिवेशवाद का विरोध करना था।
- **बाल्कनीकरण (Balkanisation)**- एक क्षेत्र को पारस्परिक शत्रुता वाले स्वशासी व अर्द्ध-स्वशासी क्षेत्रों में जानबूझकर खंडित करना, ताकि वे संगठित रूप से इनको तोड़ने वाले के विरुद्ध खतरा न उत्पन्न कर सकें। इस राजनैतिक प्रारूप को बाल्कनीकरण कहा जाता है।
- **बॉक्सकार (Bockscar)**- यह अमेरिकी वायु सेना के 'B-29 बमवर्षक' का नाम है। इसने नागासाकी पर 9 अगस्त 1945 को विश्व का द्वितीय परमाणु बम गिराया था, जिसका नाम 'Fat Man' था।
- **बेसल कन्वेन्शन (Basel Convention)**- इस कन्वेंशन के अंतर्गत इसके सदस्य देशों ने स्वीकार किया है, कि वे खतरनाक रासायनिक अपशिष्ट पदार्थ (Hazardous Waste) को सदस्य देशों को निर्यात नहीं करेंगे। इस कन्वेंशन में 18 राष्ट्र सहभागी हैं एवं हस्ताक्षरकर्त्ता देश 53 हैं।
- **BTC पाइपलाइन/ट्रांस-कॉकेशस ऑयल पाइपलाइन (Trans Caucasus Oil Pipeline)**- यह कॉकेशस क्षेत्र की एक ऑयल पाइपलाइन है जो कैस्पियन सागर के तेल को 'बाकु (अज़रबैजान) से तबिलिसी (जार्जिया)' के रास्ते भूमध्य सागर के तट पर अवस्थित सेहन बंदरगाह (तुर्की) तक ले जाती है। इसका कैस्पियन तथा मध्य एशियाई क्षेत्रों के लिये बहुत ही राजनैतिक व आर्थिक महत्त्व है।
- **ब्लू-स्ट्रीम पाइपलाइन (Blue Stream Pipeline)**- यह समुद्री तलहटी पर बिछी गैस पाइपलाइन है जिसे रूस और इटली ने संयुक्त रूप से बनाया है। यह पाइपलाइन 'काला सागर' के रूसी किनारे से लेकर तुर्की तक है। 2005 में इसकी विधिवत् शुरुआत हुई।
- **ब्लू-वाटर नौसेना (Blue Water Navy)**- एक ऐसी नौसेना जो अपनी राष्ट्रीय समुद्री सीमा से आगे भी अपना विस्तृत प्रभाव रखती है तथा जो अपने हितों को सुदूर समुद्र में भी साध सकती है, ब्लू वाटर नेवी कहलाती है।

- **सभ्य इस्लाम (Civilisational Islam)**- मलेशिया के पूर्व प्रधानमंत्री अब्दुल्ला अहमद बादावी इस अवधारणा के प्रमुख हैं। इन्होंने अपने देश के विप्लवकारी कट्टरपंथियों के विरुद्ध एक वैकल्पिक कार्यक्रम के रूप में इसे प्रस्तावित किया है। इसे 'इस्लाम हदारी' भी कहा जाता है। यह मूलत: सरकार का एक प्रकार है जो कुरान की शिक्षाओं पर केंद्रित होगा।
- **कैटालोनिया (Catalonia)**- यह स्पेन का संपन्न व अर्द्ध-स्वशासी क्षेत्र है। इसे अपने कार्यों के संचालन हेतु जनमत-संग्रह द्वारा नवीन शक्तियाँ प्राप्त हैं।
- **डियागो गारसिया (Diago Garcia)**- 'डियागो गारसिया' हिंद महासागर में अवस्थित है, जिसे वियतनाम युद्ध के समय ब्रिटेन ने अमेरिका को लीज पर दिया था। अमेरिका का यहाँ पर स्थाई नौसैनिक केंद्र है।
- **कू डे इटेट (Coup d'etat)**- बल प्रयोग के द्वारा किसी देश की कानूनी व संवैधानिक पद्धति से निर्वाचित सरकार को अपदस्थ करना ही 'कू डे इटेट' कहलाता है। यह प्राय: सेना द्वारा प्रोत्साहित व संचालित होता है।
- **रासायनिक हथियार अभिसमय (Chemical Weapons Convention)**- इस संधि पर 165 देशों ने हस्ताक्षर किये हैं तथा यह 1997 से लागू है। यह एक बहुआयामी संधि है, जो रासायनिक हथियारों पर प्रतिबंध लगाती है तथा उनको एक निश्चित समय सीमा में नष्ट करने को बाध्य करती है।
- **शीतयुद्ध (Cold War)**- द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद सोवियत संघ और अमेरिका के कटुतापूर्ण संबंधों ने विश्व को दो ध्रुवों में बाँट दिया तथा इनके मध्य सर्वोच्चता पाने के कूटनीतिक प्रयास हुए। यह शीतयुद्ध सोवियत संघ के विघटन (1991) के बाद समाप्त हुआ।
- **यूरोपीय नाभिकीय अनुसंधान संगठन (European Organization for Nuclear Research)**- यह जेनेवा स्थित विश्व का सबसे बड़ा भौतिक तत्त्व केंद्र है। 1954 में इसकी स्थापना फ्राँस-स्विट्जरलैंड की सीमा पर जेनेवा में की गई। वर्तमान में 22 राष्ट्र इसमें शामिल हैं। इसे CERN कहते हैं।
- **दिल्ली घोषणा, 1986 (Delhi Declaration)**- यह घोषणा राजीव गाँधी और सोवियत रूस के तत्कालीन राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव द्वारा 27 नवंबर, 1986 को की गई थी, जिसमें परमाणु हथियारों को सदी के अंत तक नष्ट करने तथा किसी समस्या को अहिंसक तरीके से सुलझाने पर बल दिया गया था।
- **डेटन पीस डील (1995) (Dayton Peace Deal)**- इस समझौते पर नवंबर 1995 में हस्ताक्षर हुए थे, जिसके तहत बोस्निया के अंतर्गत बोस्नीयन सर्व-रिपब्लिक व मुस्लिम क्रोट फेडरेशन अस्तित्व में आए थे और पूर्व येगोस्लाविया में चल रहा गृहयुद्ध समाप्त हो गया था।
- **निर्भरता सिद्धांत (Dependency Theory)**- यह सिद्धांत एक विश्व दृष्टिकोण का प्रतिपादन करते हुए यह स्पष्ट करता है कि विकसित और संपन्न राष्ट्रों को स्वयं को यथास्थिति में रखने के लिये अल्पविकसित राष्ट्रों की 'परिधि समूह' (Peripheral Group) की आवश्यकता होती है।
- **अस्थानीयकरण (Delocalization)**- यह एक प्रक्रिया है, जिसमें विकसित देशों से कंपनियाँ अपने को विकासशील देशों में प्रतिस्थापित करती हैं, क्योंकि विकासशील देशों में मजदूरी की दर कम होती है।
- **सतत् विकास हेतु शिक्षा दशक (Decade of Education for Sustainable Development)**- 'सतत् विकास हेतु शिक्षा का संयुक्त राष्ट्र दशक'। इसको संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा वर्ष 2005 से 2014 तक मनाने की घोषणा की गई है। इसे संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 2002 में स्वीकृत किया गया।
- **लोकतांत्रिक पहल (Democratic Initiative)**- अमेरिका ने संपूर्ण विश्व में लोकतंत्र को स्थापित करने का प्रस्ताव किया है तथा इसके लिये उसने 'संयुक्त राष्ट्र लोकतंत्र कोष' का प्रस्ताव किया है।
- **असाधारण पृच्छा (Extraordinary Rendition)**- इस शब्द का प्रयोग प्राय: अमेरिकी संदर्भ में द्वारा किया जाता है। किसी कैदी को किसी तीसरे देश में पूछताछ के लिये भेजा जाना ही असाधारण पृच्छा (Rendition) कहलाता है। इसके पीछे मंतव्य उस देश में मानवाधिकार कानूनों का लचीला होना होता है।
- **प्रत्यर्पण (Extradition)**- एक देश या सरकार द्वारा उसके अपराधी को न्यायिक जाँच तथा दंड के लिये दूसरे देश या सरकार को सौंप देना प्रत्यर्पण कहलाता है।

- **एनोला गे (Enola Gay)**- यह अमेरिकी वायुसेना के उस बमवर्षक B-29 का नाम है, जिसने प्रथम परमाणु बम 'लिटिल बॉय' (Little Boy) को हिरोशिमा पर गिराया था।
- **पंचशक्ति रक्षा व्यवस्था (Five Power Defence Arrangement – FPDA)**- FPDA एक औपचारिक रक्षा समूह है, जिसमें ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, यूनाइटेड किंगडम, सिंगापुर और मलेशिया शामिल हैं, जिनके राजनीतिक हित एशिया-प्रशां क्षेत्र से जुड़े हुए हैं। यह 1971 में अस्तित्व में आया।
- **फैट मैन (Fat Man)**- यह उस परमाणु बम का कोड नाम था, जिसे 9 अगस्त, 1945 को नागासाकी पर गिराया गया था। इसमें प्लूटोनियम का उपयोग किया गया था।
- **फ्यूचर जेन प्रोजेक्ट (Future Gen Project)**- यह विश्व का पहला ऐसा कोयला संचालित विद्युत गृह है, जो उत्सर्ज रहित (धूम्र आदि से रहित) है। इसके ढाँचे का निर्माण व संचालन सार्वजनिक निजी साझेदारी से किया जाएगा। यह ए अमेरिकी पहल है। 2003 में इसकी घोषणा अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश द्वारा की गई।
- **पाँचवाँ स्तंभ (Fifth Column)**- यह किसी देश के व्यक्तियों का ऐसा समूह है, जो अपने राष्ट्र के हितों के विरु विदेशों के साथ मिलकर षड्यंत्र रचते हैं।
- **हरित लवण परियोजना (Green Salt Project)**- ग्रीन सॉल्ट प्रोजेक्ट ईरान द्वारा कथित रूप से चलाया जा रहा यूरेनि संवर्द्धन कार्यक्रम है, जिसे वहाँ की सेना से संबद्ध करके देखा जाता है। यूरेनियम संवर्द्धन की प्रक्रिया में उत्पन्न होने वा यूरेनियम टेट्राफ्लोराइड (Uranium Tetrafluoride) को ग्रीन साल्ट भी कहा जाता है, जो इस नामकरण का आधार है।
- **ग्रीन कार्ड (Green Card)**- यह अमेरिकी सरकार द्वारा जारी किया जाता है। इसका धारक 5 वर्ष तक लगातार अमेरि में रहने के बाद वहाँ की नागरिकता के लिये अर्हता प्राप्त कर लेता है।
- **गुआंतानामो बे (Guantanamo Bay)**- यह अमेरिकी नौसेना का बेस है, जो क्यूबा के निकट स्थित है। यह यु अपराधियों और आंतकवादियों को गैर-कानूनी तरीके से निरुद्ध करने के लिये कुख्यात है। अफगानिस्तान और इराक पकड़े गए युद्धबंदियों को यहाँ रखा जाता है।
- **गुड फ्राइडे एग्रीमेंट 1998 (Good Friday Agreement 1998)**- इस समझौते के अंतर्गत 'आयरिश रिपब्लिकन आ (IRA) को बाध्य किया गया कि वह अपनी हिंसात्मक गतिविधि को समाप्त कर अपना निःशस्त्रीकरण करे। जु 2005 में 'IRA' ने घोषणा की कि वह शस्त्रों को त्याग कर शांतिपूर्ण साधनों द्वारा 'यूनाइटेड आयरलैंड' के लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास करेगा।
- **वैश्विक आण्विक ऊर्जा कार्यक्रम (Global Nuclear Energy Programme – GNEP)**- यह अमेरिका की प पर 2006 से चलाया जा रहा कार्यक्रम है, जिसमें परमाणु ईंधन पाने वाले राष्ट्र परमाणु संवर्द्धन या प्लूटोनियम के पु उपयोग में लाने के कार्यक्रमों को बंद कर देंगे। इसके बदले उनको आपूर्तिकर्ता राष्ट्रों (Suppliers Nations) द्वारा के साथ परमाणु ईंधन दिया जाएगा। इसे अब 'नाभिकीय ऊर्जा सहयोग हेतु अंतर्राष्ट्रीय फ्रेमवर्क' नाम से जाना जाता
- **ग्लोबल फ्लक्स नेटवर्क (Global Flux Network)**- यह टॉवरों का नेटवर्क (जाल) है, जिसमें 'अत्याधुनिक मॉनि सिस्टम' लगाया गया है जो पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों के आँकड़ों का संकलन करता है।
- **गुजराल सिद्धांत (Gujral Doctrine)**- यह गैर-पारस्परिक आदान-प्रदान पर आधारित सिद्धांत है। इसके अंतर्गत अपने पड़ोसियों को एकपक्षीय रियायतें देने पर विचार करता है, ताकि पड़ोसियों में विश्वास की भावना पैदा हो तथा उनके संदेह में कमी आए।
- **वैश्वीकरण (Globalization)**- सामाजिक-आर्थिक संबंधों का संपूर्ण विश्व में विस्तार ही वैश्वीकरण है, जि परिणामस्वरूप वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार व सांस्कृतिक परिवर्तनों की गति तीव्र हुई है।
- **हरित राजनीति (Green Politics)**- यह पर्यावरणवाद से संबद्ध राजनैतिक विचारों का एक संकलन है, जिसमें समाज (Sustainable Society) के निर्माण का उद्देश्य निहित होता है। इसकी अनेक कार्यवाहियाँ वैश्वीकरण की वि
- **चतुर्थ पीढ़ी अंतर्राष्ट्रीय फोरम (Generation-IV International Forum)**- यह 13 देशों का फोरम है, जो पीढ़ी के परमाणु रिएक्टरों को विकसित करेगा, ताकि कम कीमत पर सुरक्षित तरीके से परमाणु ऊर्जा का उत्पा सके। इसके सदस्य राष्ट्रों में अमेरिका, रूस, चीन, कनाडा, फ्राँस, जापान, ब्राजील आदि प्रमुख हैं। वाणिज्यिक स इस पीढ़ी के रिएक्टर वर्ष 2015 से 2030 की अवधि के बीच कार्यरत हो सकेंगे।

- **हमास (HAMAS)**- हरकत-अल-मुकावामा-अल-इस्लामिया (Harkat-Al-Muqawama-Al-Islamia) इसका अर्थ-इस्लामिक प्रतिरोध आंदोलन है। इस संगठन की स्थापना 1987 में फिलिस्तिनियों के हितों की रक्षा के लिये संघर्ष को हिंसात्मक रूप देने के लिये हुई थी।
- **होमस डी पैरोल (Hommes de Parole)**- यह पेरिस स्थित एक चर्चित शांति संस्था है। नवबंर 2011 में भारत में आध्यात्मिक गुरु श्री श्री रविशंकर के नेतृत्व में इमामों और यहूदी धर्मगुरुओं के मध्य संवाद का आयोजन इस संस्था द्वारा किया गया।
- **हाइड संशोधन (Hyde Amendment)**- यह अमेरिका और भारत परमाणु सहयोग अधिनियम, 2006 का नया नाम है, जो इसके प्रस्तावक के नाम पर रखा गया है।
- **हुदूद ऑर्डिनेंस (Hudood Ordinance)**- इसे 1979 में जनरल जिया-उल-हक ने जारी किया था, ताकि पाकिस्तानी कानून को इस्लाम के अनुरूप बनाया जा सके। बहुत से बुद्धिजीवी मानते हैं कि ये न केवल विभेदपरक है, बल्कि सच्चे इस्लामी दर्शन को भी प्रदर्शित नहीं करता है।
- **हैप्पी प्लैनेट इंडेक्स (Happy Planet Index)**- यह विश्व की प्रगति को नापने का नया सूचकांक है, जिसे 'न्यू इकोनॉमिक फाउंडेशन' (NEF) और 'फ्रेंड्स ऑफ अर्थ' ने 3 कारकों (जीवन प्रत्याशा, जन कल्याण और किसी देश के पर्यावरण का नुकसान) को लेकर बनाया है।
- **होलोकॉस्ट (Holocaust)**- राज्य द्वारा प्रायोजित व्यवस्था, जिसमें द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान नृजातीय, धार्मिक व राजनीतिक समूहों का उत्पीड़न व जनसंहार, नाजियों व उनके सहयोगियों द्वारा किया गया।
- **हेलसिंकी प्रोसेस (Helsinky Process)**- यह राष्ट्रों का एक समूह है जो वैश्वीकरण के समर्थकों व विरोधियों के बीच की खाई को भरने के लिये प्रयासरत है। 1975 में इसके अंतर्गत 35 राष्ट्रों ने पश्चिमी जगत और कम्युनिस्ट ब्लॉक के मध्य मतभेदों को न्यूनतम करने संबंधी उद्घोषणा पर हस्ताक्षर किये।
- **हब अर्थ स्टेशन (Hub Earth Station)**- यह 'पैन अफ्रीकन नेटवर्क प्रोग्राम' के अंतर्गत एशियाई और अफ्रीकी भागीदारों का मुख्य संपर्क विंदु है, जिसे हब अर्थ स्टेशन की संज्ञा दी गई है।
- **ईरानियन ऑयल बॉर्स (Iranian Oil Bourse)**- यह तेल व्यापार का बाज़ार है, जो 'अमेरिकी डॉलर' की अपेक्षा 'यूरो' तथा अन्य मुद्राओं को आधार मुद्रा के रूप में उपयोग में लाता है। अपने तेल भुगतान के लिये अब देशों को गिरते मूल्यों के डॉलर को खरीद कर रखने की आवश्यकता नहीं रह गई है। 2008 में इस व्यवस्था की शुरुआत ईरान द्वारा की गई।
- **INS तिलांगचांग**- भारत और मालदीव की सहयोग श्रृंखला के तहत आतंकवाद, तस्करी आदि को रोकने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ के दिशा निर्देशों के अंतर्गत भारत द्वारा जहाज 'INS तिलांगचांग' मालदीव को सौंपा गया।
- **भारत-अमेरिका ज्ञान पहल (Indo-US Knowledge Initiative)**- यह ICAR व अमेरिकी प्राइवेट सेक्टर कृषि क्षेत्र की कम्पनियों का कृषि, शिक्षा, अनुसंधान-सेवा व आर्थिक संबंधों पर केंद्रित एक नवीन प्रयास है।
- **इंड-इंडो कोरपाट (Ind-Indo Corpat)**- यह 'इण्डिया-इण्डोनेशिया ज्वाइंट को-ऑर्डिनेशन पैट्रोल' का संक्षिप्तीकरण है। इस पहरेदारी (Patroling) का उद्देश्य पारस्परिक समझ व सहयोग को दोनों देशों की नौसेनाओं में व्याप्त कराना है, ताकि तस्करी, लूटपाट, नशीले पदार्थों की तस्करी व गैरकानूनी मत्स्य व्यापार को रोका जा सके।
- **इंप्रो (INPRO)**- यह अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी का प्रोजेक्ट है, जिसका पूरा नाम 'इण्टरनेशनल प्रोजेक्ट ऑन इनोवेटिव न्यूक्लियर रिएक्टर एंड फ्यूल साइकिल्स' है। इस प्रोजेक्ट का केंद्र विंदु सुरक्षा अपव्यय रोकना, नाभिकीय अपशिष्ट पदार्थ प्रबंधन, सततता व परमाणु अप्रसार है। इसकी शुरुआत वर्ष 2000 में की गई।
- **अंतर्राष्ट्रीय संस्कृति नीति पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क (International Network on Cultural Policy – INCP)**- यह एक अनौपचारिक अंतर्राष्ट्रीय फोरम है, जहाँ अनेक देशों के संस्कृति मंत्री सांस्कृतिक नीति व सांस्कृतिक विविधता को बढ़ावा देने वाली रणनीतियों पर विचार-विमर्श करते हैं।
- **संयुक्त यूरोपियन टॉरस (Joint European Torus – JET)**- यह एक प्रायोगिक संलयन रिएक्टर है जिसका निर्माण 1983 में ऑक्सफोर्ड के निकट कलहम (Culhum) में किया गया है। यह विश्व का पहला 'संलयन रिएक्टर' है।

- **लिटिल बॉय (Little Boy)**- यह उस परमाणु बम का कोड नाम था जिसे 6 अगस्त, 1945 को हिरोशिमा (जापान) पर गिराया गया था। यह पहला परमाणु बम था जो विनाशकारी था।
- **लिटोरल स्टेट (Littoral State)**- वह राज्य जो किसी विशिष्ट समुद्र के किनारे होता है, उसे उस समुद्र का 'लिटोरल स्टेट' कहते हैं। उदाहरणतः मल्क्का जलडमरूमध्य' के 'लिटोरल स्टेट' इण्डोनेशिया, सिंगापुर और मलेशिया हैं।
- **मेगाफोन कूटनीति (Megaphone Diplomacy)**- कूटनीति का ऐसा प्रकार जिसमें पक्षों के बीच सीधी वार्ता नहीं होती है। ये पक्ष अपनी बात को मीडिया या अन्य एजेंसियों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। उदाहरणतः म्यांमार मुद्दे पर विश्व समुदाय का दृष्टिकोण।
- **मैड्रिड सिस्टम (Madrid System)**- यह 'विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन' (WIPO) की एक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था है, जो विभिन्न राष्ट्रों के ट्रेडमार्क और सर्विस मार्क के पंजीकरण को एक व्यवस्था के अंतर्गत लाती है।
- **मेकांग नदी आयोग (Mekong River Commission)**- 1995 में एक समझौते द्वारा इसका गठन किया गया। इस आयोग के सदस्य कम्बोडिया, वियतनाम, लाओस और थाईलैंड हैं, जो मेकांग नदी प्रबंधन से जुड़े हुए हैं। इस नदी का जलग्रहण क्षेत्र चीन, म्यांमार, लाओस, थाईलैंड, कम्बोडिया और वियतनाम में है।
- **मागेन डेविड एडोम (Magen David Adome – MDA)**- 'मागेन डेविड एडोम' (Magen David Adom) एक इजरायली सहायता संगठन है। 'रेड क्रॉस' और 'रेड क्रेसेन्ट' मानवतावादी आन्दोलन में इसको सदस्यता मिली तथा 'रेड क्रिस्टल' के प्रतीक-चिह्न के उपयोग की अनुमति मिल गई।
- **मार्शल प्लान (Marshal Plan)**- इस प्लान को अमेरिकी विदेश सचिव जॉर्ज मार्शल ने 1947 में दिया था। जिसमें कहा गया था कि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका को ऐसा कार्यक्रम बनाना चाहिये जिससे यूरोपीय देशों की सरकारें तथा जनता स्वयं को आर्थिक रूप से सुदृढ़ कर सकें।
- **मुनरो सिद्धांत (Monroe Doctrine)**- यह सिद्धांत अमेरिका द्वारा 1823 में प्रतिपादित किया गया। यह इस सोच पर आधारित था कि यूरोपीय शक्तियाँ, दक्षिण अमेरिका में शक्ति का प्रसार न कर पाएँ। इसके तहत अमेरिकी सरकार ने सेना के माध्यम से दक्षिण अमेरिकी देशों में चुनावों को प्रभावित किया। इसके द्वारा यूरोपीय शक्तियों को यह चेतावनी दी गई कि वे दक्षिण अमेरिका में अपनी शक्ति का प्रसार न करें।
- **मॉण्ट्रियल प्रोटोकोल (Montreal Protocol) (1987)**- यह प्रोटोकोल ओजोन परत को क्षति पहुँचाने वाले पदार्थों पर केंद्रित था जिसमें इन पदार्थों के आयात-निर्यात के लिये लाइसेंसिंग व्यवस्था को स्थापित किया गया।
- **विदेशी नीति का निगमीकरण (Corporatisation of Foreign Policy)**- जब राज्य सरकारों तथा अन्य क्षेत्रीय व स्थानीय शक्तियों का महत्त्व विदेश नीति में बढ़ जाता है तो उसे विदेश नीति का निगमीकरण कहते हैं।
- **आधुनिक मार्शल प्लान (Modern Marshal Plan)**- यह एक ब्रिटिश प्लान है, जिसके अनुसार अफ्रीका की गरीबी को समाप्त करने की बात कही गई है। इसमें कर्ज, सहायता, राहत और व्यापार तथा वैश्विक स्तर पर बॉण्ड्स की बिक्री कर धन इकट्ठा किया जाना प्रस्तावित था जिससे अफ्रीकी देशों का पूरा कर्ज माफ किया जा सके।
- **मेक पॉवर्टी हिस्ट्री (Make Poverty History)**- यह 400 से अधिक स्वयं-सेवी संगठनों का विश्वव्यापी गठबंधन है। ये सभी गरीबी और भुखमरी को हटाने में लगे हुए हैं। 2005 में इसकी शुरुआत हुई।
- **'नेशनल मिसाइल डिफेंस' (NMD)**- यह अमेरिका की ऐसी रक्षा व्यवस्था है जिसमें वह सीमित संख्या में अन्तर महाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइल के हमले से स्वयं की रक्षा कर सकता है। ये मिसाइलें नाभिकीय, रसायनिक या जैविक में से किसी भी हथियार से लैस हो सकती हैं।
- **नई विश्व व्यवस्था (New World Order)**- नई वैश्विक व्यवस्था से तात्पर्य वैश्विक राजनीतिक विचार और शक्ति संतुलन में आए नाटकीय परिवर्तनों से है, जो शीतयुद्ध की समाप्ति के कारण उत्पन्न हुए थे।
- **उत्तर-दक्षिण विभाजन (Division of North-South)**- यह धनी उत्तर, जिसे विकसित विश्व कहा जाता है तथा निर्धन दक्षिणं जिसे विकासशील या तीसरा विश्व कहा जाता है, के मध्य विकराल आर्थिक अंतर को प्रदर्शित करती अवधारणा है।
- **बाह्य अंतरिक्ष संधि (Outer Space Treaty)**- इस संधि पर वर्ष 1967 में हस्ताक्षर हुए थे जिसके द्वारा स्वीकार किया गया, कि अंतरिक्ष में किसी प्रकार के सामूहिक विनाश के हथियार को नहीं रखा जाएगा। अंतरिक्ष का उपयोग केवल शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिये किया जाएगा। वर्तमान में 107 राष्ट्र इसे बाध्यकारी रूप में स्वीकार कर रहे है जबकि 23 राष्ट्र इसके हस्ताक्षरकर्त्ता हैं।

- **मुक्त आकाश संधि (Open Sky Treaty)**- इसके अंतर्गत सदस्य राष्ट्रों के शस्त्रविहीन, अनुसंधान के उपयोग में आने वाले विमान अल्प सूचना देकर एक-दूसरे के क्षेत्र में प्रवेश कर वहाँ की सेना तथा उसकी गतिविधियों के आँकड़ों का संग्रह कर सकते हैं। 1 जनवरी, 2002 को यह संधि बाध्यकारी स्वरूप में आई। वर्तमान में इसके 34 सदस्य राष्ट्र हैं।
- **पिसको (Pisco)**- यह पेरू की राष्ट्रीय शराब का नाम है जो अंगूरों से बनी है। यह पेरू और चिली के मध्य राजनीतिक-आर्थिक विवाद का केंद्र रही है। चिली इसे ऐतिहासिक रूप से अपने यहाँ की मानता है तथा इसी नाम से विश्व बाज़ार में बेचता है।
- **पैन अफ्रीकी संचार नेटवर्क (Pan African Telecommunication Network – PATN)**- भारत द्वारा प्रस्तावित इस योजना के तहत भारत अफ्रीका में उपग्रह आधारित नेटवर्क बनाएगा। जो टेली-मेडिसिन व टेली-एजुकेशन के साथ-साथ विशिष्ट एजेंसियों के मध्य संपर्क बनाए रखने का कार्य करेगा।
- **शांति निर्माण आयोग (Peace Building Commission)**- यह संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्थापित उन देशों की एक अंतर्देशीय सलाहकारी संस्था है, जो युद्ध उपरांत, विचारधारा, नेतृत्व तथा अतार्किक व्यवहार के कारण विश्व समुदाय से अलग-थलग पड़ जाते हैं। उदाहरणतः ईरान व उत्तर कोरिया।
- **प्रोलिफैरेशन सिक्युरिटी इनिशिएटिव (Proliferation Security Initiative – PSI)**- यह एक अमेरिकी प्रस्ताव है, जिसमें कुछ प्रमुख राष्ट्र गैर-कानूनी तौर पर होने वाले परमाणु तकनीकी व परमाणु पदार्थों के व्यापार का पूर्वानुमान कर व्यापार करने वाले राष्ट्रों के विरुद्ध सैन्य कार्यवाही करते हैं।
- **प्रतिबंधक कूटनीति (Preventive Diplomacy)**- यह कूटनीतिक कार्यकलाप है, जिसके द्वारा दो पक्षों के मध्य उत्पन्न होने वाले विवाद को तथा वर्तमान के विवादों को बढ़ने से रोका जाता है।
- **युद्धबंदी (Prisoner of War)**- एक सैनिक जो अपने राष्ट्र के आदेश पर युद्ध करते समय शत्रु सेना द्वारा बंदी बनाया जाता है, उससे 'जेनेवा कन्वेंशन' 1949 के अनुसार व्यवहार किया जाता है।
- **पर्ल हार्बर (Pearl Harbour)**- हवाई के 'ओहू द्वीप' में स्थित अमेरिकी नौसेना के प्रशांत महासागरीय जहाजी बेड़े का मुख्यालय। दिसंबर 1941 में जापान द्वारा पर्ल हार्बर पर आक्रमण के कारण अमेरिका ने द्वितीय विश्वयुद्ध में भाग लिया था।
- **सकारात्मक एकपक्षवाद (Positive Unilateralism)**- यह एक राष्ट्रीय रणनीति है, जिसके तहत कोई राष्ट्र अपने औपचारिक कार्यकलापों के अलावा अन्य राष्ट्रों को एकपक्षीय सुविधाएँ प्रदान करता है ताकि लंबे समय से चले आ रहे संबंधों की दुविधाओं को दूर किया जा सके।
- **अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का 'प्रागमेटिक मॉडल' (Pragmatic Model of International Relations)**- इस मॉडल के अनुसार राष्ट्रों के मध्य विवादों को भविष्य के संबंध में समझौतों आदि से पृथक् कर दिया जाता है, ताकि पारस्परिक संबंधों को सुदृढ़ किया जा सके। इस मॉडल का प्रयोग भारत के अमेरिका व चीन के साथ संबंधों के लिये किया जाता है।
- **कुतुबिज़्म (Qutubism)**- इस्लामिक विचारधारा व कार्यकलाप जो सैयद कुतुब के विचारों व रचनाओं पर आधारित है। यह माना जाता है कि ओसामा बिन लादेन इस विचारधारा से प्रभावित था।
- **रोशन खयाली और इत्तेदाल (Roshan Khyali and Ittedal)**- प्रबुद्ध विचार और संयम दोनों को मिलाकर 'प्रबुद्ध संयम' कहा जाता है। इस्लामिक विश्व में पुनर्जागरण लाने के लिये यह पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ की एक बड़ी योजना है।
- **रिजिम (Regime)**- यह नियमों, अपेक्षाओं और वर्णनों का एक ढाँचा है, जो अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राष्ट्रों द्वारा उपयोग में लाया जाता है।
- **रीजनल को-ऑपरेशन एग्रीमेंट ऑन एंटी-पायरेसी (RECAAP)**- यह एक जापानी पहल है, जिसके तहत 20 एशियाई देश समुद्री लूट-पाट को रोकने के लिये एक साथ कार्य करते हैं। इसके सदस्य राष्ट्र हैं- आसियान, जापान, भारत, चीन, दक्षिण, कोरिया, श्रीलंका, बांग्लादेश तथा नार्वे।
- **स्वदेशागमन (Repatriation)**- शरणार्थियों व युद्धबंदियों को अपने देश वापस भेजने की प्रक्रिया को स्वदेशागमन कहते हैं।
- **शेंज़ेन ज़ोन (Schengen Zone)**- यूरोपीय संघ का सीमाविहीन क्षेत्र जिसके अंतर्गत विचरण के लिये 'वीज़ा' की आवश्यकता नहीं होती है, इसे शेंज़ेन ज़ोन कहा जाता है।

- **सभ्यताओं का गठजोड़ (The Alliance of Civilisation)**- यह भूतपूर्व संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान द्वार प्रारंभ की गई एक परियोजना है जिसके अंतर्गत सरकारों व समाजों के मध्य नवीन संबंधों को बनाने का कार्य किय जाता है। यह सांस्कृतिक विभाजन की चुनौती का सामना कर रहे विश्व को जोड़ने के लिये एक वैश्विक प्रयास है।
- **तृतीय विश्व (Third World)**- प्राय: यह उन देशों के लिये प्रयोग किया जाता था जो कि शीतयुद्ध के दौरान न तो पूर्व (रूस) के न तो पश्चिम (अमेरिका) के साथ थे, परंतु अब यह 'मानव विकास सूचकांक' के आधार पर कम विकसित देशों के लिये प्रयोग होता है। ये देश दक्षिणी गोलार्द्ध/अल्प विकसित राष्ट्र/बहुसंख्यक संसार के नाम से भी जाने जाते हैं।
- **ट्रूमैन सिद्धांत (Truman Principles)**- इस सिद्धांत के अंतर्गत अमेरिका उन लोगों की सहायता करेगा जो लोग हथियारबद्ध व बाहरी लोगों के द्वारा उत्पीड़न का विरोध कर रहे हैं।
- **विकासशील देशों के बीच तकनीकी सहयोग (Technical Co-operation between Developing Countries –TCDC)**- यह एक ऐसी प्रक्रिया हैं, जिसके तहत दो या उससे अधिक विकासशील राष्ट्र पारस्परिक सहयोग से अपने व्यक्तिगत तथा सामूहिक विकास हेतु ज्ञान, निपुणता तथा तकनीकी जानकारी का आदान-प्रदान करते हैं।
- **अस्थायी युद्ध विराम (Temporary Cease Fire)**- अस्थायी युद्ध विराम से तात्पर्य आपसी सहमति द्वारा सीमित अवधि व सीमित क्षेत्र में अस्थाई रूप से युद्ध बंद करने से है।
- **ट्रिनिटी टेस्ट (Trinity Test)**- 16 जुलाई, 1945 को अमेरिका द्वारा किये गए विश्व के प्रथम परमाणु हथियार परीक्षण को 'ट्रिनिटी टेस्ट' कहा जाता है जहाँ से विश्व में परमाणु युग की शुरुआत हुई।
- **गोल्डेन क्रेसेंट (Golden Crescent)**- दक्षिण-पश्चिम एशिया के अफगानिस्तान, पाकिस्तान व ईरान के वे क्षेत्र जो अफीम उत्पादन करते हैं गोल्डेन क्रेसेंट कहलाते हैं।
- **स्वर्णिम त्रिभुज (Golden Triangle)**- म्याँमार, थाईलैंड व लाओस को सम्मिलित रूप से स्वर्णिम त्रिभुज की संज्ञा दी गई है। यहाँ आर्थिक उदारीकरण के बावजूद मादक द्रव्यों का कुप्रभाव कम नहीं हुआ है।
- **आसियान वे (ASEAN Way)**- इस नीति के अंतर्गत अपने सदस्य देशों के आन्तरिक मामलों में आसियान हस्तक्षेप नहीं करता है।
- **उमरा वीज़ा (Umra Viza)**- सऊदी अरब द्वारा देश में स्थित पवित्र स्थलों के दर्शन हेतु जारी किया जाने वाला तीर्थयात्री वीजा, द उमरा वीज़ा कहलाता है। सऊदी अरब ने 40 साल से कम उम्र वालों को यह वीजा देना प्रतिबंधित कर दिया है।
- **वेलवेट तलाक (Velvet Divorce)**- युगोस्लाविया के विभाजन के बाद सर्बिया व मोंटीनेग्रो के संप्रभु राष्ट्र के रूप में जन्म लेने को ही वेलवेट तलाक कहते हैं।
- **ऐच्छिक प्रस्ताव (Voluntary Offer)**- यह समझौता संयुक्त राष्ट्र के पाँच (5) स्थायी सदस्यों (रूस, अमेरिका, ब्रिटेन, फ्राँस, चीन) ने IAEA के साथ किया है। इस अतिरिक्त प्रोटोकॉल के तहत ये देश अपनी राष्ट्र सुरक्षा के लिये अपने नागरिक परमाणु ऊर्जा केंद्र को IAEA के नियमों की सीमा से बाहर ला सकते हैं।
- **एंटी-बैलिस्टिक मिसाइल (ABM)**- दुश्मन देश से किसी भी प्रकार के मिसाइली हमले की आशंका से, रडार और इंटरसेप्टर मिसाइलों से युक्त एंटी-बैलिस्टिक मिसाइल एक रक्षात्मक प्रणाली है। इसका प्रस्ताव सबसे पहले 1960 में किया गया था, जो विभिन्न (प्रतिरक्षा)/उपायों के उपयोग की आशंका से काफी विवाद का विषय बना। इसके अंतर्गत शामिल प्रतिरक्षा उपायों में रडार पर पहला हमला, ऊँचाई पर बीच रास्ते में ही दुश्मन की मिसाइल का अन्तर्रोध (Interception) और उसको नष्ट करना, जो रक्षा कूटनीति करने वाले देश के पर्यावरण को वह नष्ट कर सकता है।
- **एजेंट ऑरेंज (Agent Orange)**- यह एक शक्तिशाली रासायनिक उत्पाद है जिसका अमेरिका द्वारा वियतनाम युद्ध के दौरान दुश्मन देश के वन क्षेत्र को नष्ट करने के लिये प्रयोग किया गया था। वियतनाम के स्वास्थ्य अधिकारियों ने दावा किया है कि यह एजेंट देश में जन्म दोष, कैंसर की उच्च दर और अन्य कई बीमारियों के लिये जिम्मेदार है, लेकिन अमेरिका इस बात से इंकार करता है।
- **क्षमादान (Amnetsy)**- कुछ विशेष प्रकार के अपराधियों (प्राय: राजनीतिक) के लिये अभियोजन या सजा से राहत देने के लिये अपनाया गया निर्णय क्षमादान होता है। यह क्षमा के जैसा ही है लेकिन इसमें क्षमा का वह भाव निहित नहीं रहता जो सामान्यत: क्षमा शब्द में होता है। यह शब्द व्यापक रूप से युद्धबंदियों के संदर्भ में प्रयोग में लाया जाता है।

- **आत्मनिर्भरता (Autarky)**- एक ऐसी स्थिति जहाँ एक देश पूर्ण आर्थिक तौर पर रूप से आत्मनिर्भर होता है और उसका अन्य देशों से व्यापार नहीं होता। आर्थिक व्यवस्था की बढ़ती जटिलताओं एवं औद्योगीकरण से देश की संपूर्ण आत्म-निर्भरता आज एक असंभव सी अवधारणा बन चुकी है।
- **सहशासित राज्य (Condominium)**- दो या अधिक देशों द्वारा एक देश के ऊपर प्रभुसत्ता/कायम रखना ही सहशासित राज्य है। उदाहरण के लिये सूडान वर्ष 1956 में एक स्वतंत्र देश बनने से पहले, ब्रिटेन और मिस्र द्वारा सहशासित राज्य था।
- **डेमार्के (Demarche)**- कूटनीति के अंतर्गत किसी राष्ट्र द्वारा किसी अन्य राष्ट्र से किसी महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर जानकारी प्राप्त करने के लिये अपनाई जाने वाली राजनयिक प्रक्रिया को डेमार्के कहते हैं।
- **डॉलर कूटनीति (Dollar Diplomacy)**- यह अवधारणा विशेष रूप से वर्ष 1909 से 1913 के बीच अमेरिकी राष्ट्रपति की विदेश नीति से संबंधित है। अब यह आमतौर पर वित्तीय एवं आर्थिक मामलों के नियंत्रण द्वारा अपने उद्देश्यों को सुरक्षित करने के अमरीकी प्रयासों के लिये उपयोग में लाई जाती है।
- **नृजातीयवाद (Ethnocentrism)**- यह वह प्रवृत्ति है जिसमें अपने समूह, संस्कृति और राष्ट्र को उच्च और अन्य समूहों, संस्कृतियों और राष्ट्रों को निम्न कोटि का समझा जाता है।
- **चौथी दुनिया (Fourth Column)**- यह शब्द उस समय अस्तित्व में आया जब पेट्रोलियम निर्यातक देश संगठन (OPEC) से प्रभावित होकर, पेट्रोल की कीमत में अभूतपूर्व वृद्धि होने लगी। चौथी दुनिया से तात्पर्य ऐसे देशों के समूह से है जो ऊर्जा संकट के कारण आर्थिक रूप से पहले से अधिक पिछड़ गए और विदेशी ऋण चुका पाने में असमर्थता के दौर से गुजरे।
- **भूराजनीति (Geo Politics)**- विदेश नीति के विश्लेषण की वह विधि जिसमें अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवहार को भौगोलिक विभिन्नताओं जैसे-स्थिति, आकार, जलवायु, टोपोग्राफी, जनांकिकी, प्राकृतिक संसाधनों तथा तकनीकी विकास एवं क्षमता के संदर्भ में समझने, व्याख्या करने और पूर्वानुमान स्थापित करने की कोशिश की जाती है।
- **प्रेक्षक प्रास्थिति (Observer Status)**- प्रेक्षक प्रास्थिति अर्द्धविधिक शब्द है। इस प्रस्थिति का आशय सम्मेलन कूटनीति से है जिसमें कुछ निष्पक्ष और बाहरी देश के अभिकर्ताओं को बिना मताधिकार के ही कुछ विशेष अधिकार और सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं।
- **पी-5 (P5)**- यह संयुक्त राष्ट्र संघ के सुरक्षा परिषद के पाँच स्थायी सदस्यों को अभिव्यक्त करने वाली लघु शब्दावली है। कुल 15 सदस्यों में से पाँच 'स्थायी सदस्य' हैं और इन्हें वीटो (Veto) अधिकार प्राप्त है। ये देश हैं- चीन, फ्राँस, ब्रिटेन संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस।
- **वेस्टफेलिया की शांति (Peace of Westphalia)**- वेस्टफेलिया (आधुनिक जर्मनी) की शांति, युद्ध के तीस वर्ष पूरा होने के पश्चात् सन् 1648 में अस्तित्व में आई। यह धार्मिक युद्ध के एक सदी के समापन को स्थापित करती है। इस संधि का मुख्य उद्देश्य था कि सभी राष्ट्रों को अन्य राष्ट्रों की संप्रभुता (Sovereignty) का सम्मान करना चाहिये।
- **प्री-एंपशन (Pre-emption)**- किसी बाहरी देश या व्यक्ति विशेष (राष्ट्राध्यक्ष) द्वारा अपने देश के ऊपर आक्रमण के खतरे की स्थिति को समझते हुए, देश की रक्षा और संप्रभुता के हित में उठाया जाने वाला कदम अग्र-अधिकार या प्रि-एंपशन कहलाता है। यह सामरिक अध्ययन के क्षेत्र के लिये व्यापक रूप से अपनाया जाता है जिसमें किसी देश के द्वारा अन्य देश के ऊपर पहले आक्रमण या हमले की स्थिति में यह कदम उठाया जाता है।
- **संगरोध (Quarantine)**- सामान्य भाषा में, लोगों, पशुओं, पौधों या व्यापारियों को जानबूझकर किसी विदेशी हवाई अड्डे या समुद्र के रास्ते से आने पर पृथक् समूह में विभाजित करने को Quarantine कहते हैं। सामान्यत: संक्रामक बीमारियों आदि को रोकने के लिये ऐसा किया जाता है।
- **प्रभाव क्षेत्र (Sphere of Influence)**- प्रभाव क्षेत्र से तात्पर्य ऐसे क्षेत्र से है जिसके ऊपर बाहरी देश अपने नियंत्रण या प्रभाव का दावा करता है। बाहरी राज्य उस क्षेत्र की प्रभुसत्ता पर तो दावा नहीं करता लेकिन विशेष रूप से सैन्य, राजनीतिक या आर्थिक क्षेत्र में दावा करता है और ऐसा करते हुए वह न केवल अन्य विदेशी/बाहरी शक्तियों को उस क्षेत्र के अधिकार से वंचित रखता है बल्कि उस लक्षित क्षेत्र (Targeted Area) की स्वतंत्रता और स्वायत्तता पर भी सीमाएँ थोप देता है।

- **स्पार्टली आइलैंड्स (Spartly Islands)**- स्पार्टली आइलैंड्स प्रवाल भित्तियों (Coral Reefs) आदि का समूह है जो दक्षिण चीन सागर में 960 किलोमीटर से अधिक के क्षेत्र में फैला हुआ है। यद्यपि ये द्वीप सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। द्वीपों पर अपना दावा करने वाले देशों में चीन, वियतनाम, फिलीपींस, ताईवान और मलेशिया शामिल हैं।
- **एकतरफा आजादी की घोषणा (Unilateral Declaration of Indepedence)**-एकतरफा आजादी की घोषणा एक कदम है जो एक समूह अथवा एक राजनीतिक दल द्वारा किसी अप्रिय शासन के विरुद्ध अपने जन प्रतिनिधियों के लिये उठाया जाता है।
- **व्यापक विनाश के हथियार (Weapons of Mass Destruction)**- तीन प्रकार के हथियार जिनमें व्यापक जनसंहार की क्षमता है- परमाणु हथियार, जैविक हथियार और रासायनिक हथियार, सम्मिलित रूप से व्यापक विनाश के हथियार कहलाते हैं। इसके लिये कभी-कभी ABC (Atomic, Biological and Chemical) शब्दावली भी प्रयुक्त की जाती है। ये एक अलग प्रकार के पर्यावरण चुनौती को भी जन्म देते हैं। इन तीनों वर्गों के व्यापक विनाश के हथियारों को नियंत्रित करने के लिये नियम बनाए गए हैं।
- **विदेशी द्वेष (Xenophobia)**- यह चरम रूप में राष्ट्रवाद और नृजातीयवाद (Ethnocentrism) से संबंधित है। यह किसी विदेशी व्यक्तियों या समूहों के प्रति घृणा और नफरत के फलस्वरूप जन्म लेती है। यह भावना पूरे समूह, राष्ट्र (अंग्रेज-विरोध) के विरुद्ध भी हो सकती है।
- **येलो पेरिल (Yellow Peril)**- 19वीं शताब्दी के पूर्व में अमेरिका द्वारा एक भय/आशंका अकसर व्यक्त की जाती थी कि प्राच्य मंगोल जाति विशेषकर चीनी एक दिन गोरी जातियों को दबा देंगे और पूरे विश्व पर अपना एकछत्र अधिकार स्थापित कर लेंगे। चीन के प्रति अमेरिका की यह आशंका अब भी व्याप्त है, इसलिये वह चीन की हर गतिविधि पर हमेशा नजर रखता है।
- **यहूदीवाद (Zionism)**- यहूदी राष्ट्रवाद का आदर्श-यहूदीवाद कहलाता है। इसके अंतर्गत विश्वभर में फैले यहूदियों की समस्याओं का समाधान इस तर्क के साथ किया गया कि इस समस्या का केवल एक ही समाधान है और वह है यहूदियों के लिये एक स्थायी (निवास) व्यवस्था जहाँ वे किसी निश्चित क्षेत्र में अल्पसंख्यक नहीं वरन् बहुसंख्यक के रूप में जीवन बिता सकें।
- **मोलोटॉव रिबेनट्राप समझौता (Molotov-Ribbentrop Pact)**- इसे हिटलर-स्टॉलिन पैक्ट/जर्मन-रूस आक्रमण समझौता या नाजी-सोवियत समझौता भी कहा जाता है। यह जर्मनी (Third reich) और सोवियत संघ के बीच, एक अनाक्रमण समझौता था। इस समझौते पर (रूस की राजधानी) मॉस्को में वर्ष 1939 में हस्ताक्षर किये गए थे। यह परस्पर अनाक्रमण समझौता 22 जून, 1941 के पहले तक चला जब ऑपरेशन वारबारोसा (Operation Barbarossa) के तहत, जर्मनी ने सोवियत संघ पर हमला बोल दिया।
- **‘सामरिक सुरक्षा पहल’ (Strategic Defence Initiative – SDI)**- सामरिक सुरक्षा पहल का प्रस्ताव तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन (Ronald Reagon) ने 23, मार्च 1983 को किया था। इसके अंतर्गत किसी भी सामरिक परमाणु मिसाइल से अमेरिका पर होने वाले आक्रमण की स्थिति में जमीन और हवाई दोनों मार्गों का इस्तेमाल राष्ट्र की सुरक्षा हेतु करने पर बल दिया गया था। यह पहल, पूर्व के Mutual Assured Destruction (MAD) के सामरिक हमले के सिद्धांत के विपरीत सामरिक सुरक्षा पर केंद्रित थी। हालाँकि इसे कभी पूर्ण रूप से तैनात नहीं किया गया, सामरिक सुरक्षा पहल की शोध एवं तकनीक ने वर्तमान के एंटी बैलिस्टिक मिसाइल (प्रक्षेपास्त्र) प्रणाली को जन्म दिया। राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के शासनकाल वर्ष 1993 में इसका नाम बदलकर ‘‘बैलिस्टिक मिसाइल डिफेंस ऑर्गनाइजेशन’’ रख दिया गया। इसको वैश्विक सुरक्षा से हटाकर क्षेत्रीय सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया। बीएमडीओ को बाद में मिसाइल सुरक्षा एजेंसी (Missile Defence Agency) का नया नाम दिया गया।
- **दुष्ट राष्ट्रों की धुरी (Axis of Evil)**- यह शब्दावली अमेरिका राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू बुश द्वारा उन सरकारों के लिये प्रयुक्त की गई, जिन पर उन्होंने आंतकवाद को बढ़ावा देने और व्यापक विनाश के हथियार इकट्ठा करने का आरोप लगाया था। बुश ने जिन देशों का नाम इसमें लिया था वे हैं- इराक, ईरान और उत्तर कोरिया। वर्तमान में जो राष्ट्र Axis of Evil में आते हैं वे हैं-ईरान, उत्तर कोरिया, क्यूबा, लीबिया और सीरिया।
- **गोलन की ऊँचाइयाँ (The Golan Heights)**- सीरिया के दक्षिण-पश्चिम का एक चट्टानी पठार क्षेत्र, गोलन की ऊँचाइयाँ, आकार में छोटा परंतु अपने राजनीतिक और सामरिक दृष्टिकोण से बहुत ही महत्त्वूपर्ण है और इसे पश्चिम एशिया संकट की धुरी के रूप में देखा जाता है।

- **गोलन ऊँचाइयों का राजनीतिक महत्त्व (Political Importance of Golan Heights)**- उत्तरी इज़रायल और दक्षिणी सीरिया से लगी गोलन की ऊँचाइयाँ सीरिया की गतिविधियों पर नजर रखने के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है यहाँ की स्थलाकृति किसी भी प्रकार के सीरियाई हमले के लिये एक प्राकृतिक अवरोधक का काम करती है, अर्थात् सुरक्षा कवच प्रदान करती है।

  यह क्षेत्र यहाँ की शुष्क जलवायु के लिये प्रमुख जल स्रोत भी है। गोलन की पहाड़ियों से गिरने वाला वर्षा जल जार्डन नदी के लिये वरदान है। इस क्षेत्र से इज़रायल के एक तिहाई जल की आपूर्ति होती है। ज्वालामुखी मिट्‌टी वाला क्षेत्र होने की वजह से यहाँ की भूमि उपजाऊ है जिस पर अंगूर और अन्य फलों की खेती तथा पशुपालन किया जाता है। गोलन, इज़रायल का एकमात्र स्की रिसोर्ट (Ski Resort) भी है।
- **पश्चिम एशिया शांति हेतु चतुष्क ''अनुप्रयोग'' (Quartet- Roadmap for Peace in West Asia)**- शांति प्रक्रिया हेतु ''ग्रेड मैप'' चार अंतर्राष्ट्रीय शक्तियों अमेरिका, यूरोपीय संघ, रूस और संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इज़रायल-फिलीस्तीन संघर्ष को सुलझाने की एक महत्त्वाकांक्षी शांति योजना है। यह मध्य एशिया में स्थायी शांति और सुरक्षा की ओर बढ़ने का आधार है।
- **ई टी ए (Euskadi Ta Askatasuna):** अर्द्धसैनिक बास्क राष्ट्रवादी संगठन जो मुख्यतया स्पेन, फ्राँस एवं अन्य यूरोपीय देशों में केंद्रित है। यूरोपीय संघ, अमेरिका और संयुक्त राष्ट्र संघ ने ETA को एक आतंकवादी संगठन माना है। वर्ष 1959 में स्थापित यह संगठन बड़ी तेजी से एक ऐसे समूह के रूप में आया, जो बास्क की आजादी के लिये सशस्त्र संघर्ष का हिमायती है। इस संगठन का आदर्श-मार्क्सवाद और लेनिनवाद है।
- **तवांग भूभाग (Tawang Tract)**- यह अरुणाचल प्रदेश में स्थित तिब्बती बौद्ध धर्मावलंबियों का पवित्र स्थल है जो भारत-चीन सीमा विवाद के केंद्रीय बिंदुओं में से एक रहा है।
- **जेनेवा सम्मेलन (Geneva Convention)**- जेनेवा सम्मेलनों में चार संधियाँ शामिल हैं जो मानवीय हितों के लिये अंतर्राष्ट्रीय कानून का मानक निर्धारित करती हैं। इस सम्मेलन को 1859 में हेनरी डुनान्ट (Henry Dunant) के प्रयासों के परिणामस्वरूप देखा जा सकता है। वर्ष 1977 और वर्ष 2005 में तीन अलग-अलग संशोधनों-जिन्हें प्रोटोकॉल्स कहा गया- को जेनेवा सम्मेलनों का अंश बनाया गया।
  - युद्ध क्षेत्र में घायल और बीमार सैन्य बलों की स्थिति (हालत) में सुधार करना।
  - समुद्री क्षेत्र (युद्ध) में घायल, बीमार और पोतविध्वंश सैन्य बलों की स्थिति (हालत) में सुधार लाना।
  - युद्धबंदियों से व्यवहार संबंधी प्रोटोकॉल।
  - युद्ध के समय आम नागरिकों की सुरक्षा से संबंधित प्रोटोकॉल।
- **हेग सम्मेलन (The Hague Convention)**- हेग सम्मेलन अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ थीं जो वर्ष 1899 और वर्ष 1907 में हेग में आयोजित क्रमशः पहले और दूसरे शांति सम्मेलन में संपन्न हुई थीं। इनका महत्त्व यह है कि युद्ध के अंतर्गत विधियों और युद्धबंदियों के संदर्भ में यह प्रथम प्रामाणिक बिंदु प्रस्तुत करती है। इसी के अनुसार संयुक्त राष्ट्र संघ की मानव अधिकार की विश्वव्यापी घोषणा में स्पष्ट उल्लेख किया गया है- ''सभी मनुष्य गरिमा और अधिकारों के मामले में जन्मजात स्वतंत्र और समान हैं। वे बुद्धि एवं विवेक से संपन्न हैं और उन्हें एक-दूसरे के प्रति भाईचारे की भावना प्रदर्शित करनी चाहिये।''
- **ग्लास्नोस्त (Glasnost)**- ग्लास्नोस्त एक रूसी शब्द है जिसका अर्थ है 'पारदर्शिता' या 'खुलापन।' मिखाइल गोर्बाचेव (Mikhail Gorbachev) ने यह शब्द एक सुधार कार्यक्रम की व्याख्या करने के लिये प्रयुक्त किया था। यह सुधार कार्यक्रम वर्ष 1985 में शुरू किया गया था जिसके उद्देश्यों में भ्रष्टाचार से लड़ना और राजनीतिक दलों (वर्गों) द्वारा विशेषाधिकार के दुरुपयोग को रोकना शामिल था। व्यापक दृष्टि से इसका लक्ष्य प्रेस की स्वतंत्रता को क्रमशः उदार बनाना और विरोध का अधिकार प्रदान करना था।
- **पेरेस्त्रोइका (Perestroika)**- यह आर्थिक सुधारों के लिये प्रयुक्त होने वाला एक रूसी शब्द है जो वर्ष 1985 में तत्कालीन रूसी नेता मिखाइल गार्बाचेव द्वारा प्रचलित किया गया। इसका शाब्दिक अर्थ है ''पुनर्गठित करना'' जिसका मतलब था सोवियत अर्थव्यवस्था में सुधार लाना या उसका पुनर्गठन।

- **विश्वव्यापी मानव अधिकारों की घोषणा (Universal Declaration of Human Rights)**- द्वितीय विश्वयुद्ध की बर्बरता से खिन्न होकर संयुक्त राष्ट्र आम सभा ने वर्ष 1948 में विश्वव्यापी मानवाधिकारों की घोषणा की। हालाँकि यह कानून बाध्य नहीं था, फिर भी सदस्य राष्ट्रों को मानवीय, नागरिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को प्रोत्साहन दे का आग्रह किया गया था। साथ ही साथ इन अधिकारों का पालन करते हुए 'विश्व में स्वतंत्रता, न्याय और शांति की स्थापना' करना था। यह घोषणा देशों के व्यवहार को नियंत्रित करने और उनके ऊपर अधिकार एवं कर्त्तव्य का पालन कर अपने नागरिकों के प्रति उनके कर्त्तव्यों के पालन हेतु दबाव डालने का अपने तरह का पहला अंतर्राष्ट्रीय कानूनी प्रयास था।
- **तीन बीघा गलियारा (The Teen Bigha Corridor)**- तीन बीघा गलियारा पश्चिम बंगाल-बांग्लादेश सीमा पर एक जमीन की पट्टी है जो कभी भारत की थी, जिसे अब अनिश्चित काल के लिये पट्टे पर बांग्लादेश को दे दिया गया है ताकि बांग्लादेश अपने देहग्राम-अंगलपोटा अन्त:क्षेत्र (Enclave) तक पहुँच सके।
- **एक चीन नीति (One China Policy)**- एक चीन नीति वह सिद्धांत है जिसमें एक ही चीन के होने की बात कही गई है और मुख्य भूमि चीन (मेनलैंड चाइना), हॉन्गकॉन्ग, मकाऊ और ताइवान इन सभी को एकीकृत चीन का ही अभिन्न अंग स्वीकार किया गया है।
- **'स्वेज़ संकट' (Suez Crisis)**- असवान बाँध (Aswan Dam) के निर्माण में ब्रिटेन और अमेरिका के अपने समर्थन देने के वचन से मुकरने के बाद, मिस्र के राष्ट्रपति गमाल आब्देल नासिर ने इस नहर से आने वाले राजस्व से बाँध परियोजना को आर्थिक मदद सुलभ कराने हेतु, स्वेज नहर को वर्ष 1956 में राष्ट्रीयकृत किया। इससे स्वेज संकट गहरा गया (कई सप्ताह तक), जिसमें इंग्लैंड, फ्राँस और इज़रायल की गठबंधन सेना ने मिस्र पर हमला कर दिया। इस युद्ध को फैलने से रोकने और गठबंधन सेना (या लड़ाकुओं) को अलग करने की दृष्टि से लेस्टर बी. पियर्सन (Lester B. Pearson) ने सबसे पहला संयुक्त राष्ट्र संघ शांति सेना (UN Peace Keeping Force) निर्माण का प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।
- **कार्बन-कर/पिगोवियन टैक्स (Pigovian Tax)**- कार्बन कर, वायुमंडल में कार्बन-डाइऑक्साइड की मात्रा बढ़ाने वाले ऊर्जा स्रोतों पर लगने वाला एक प्रकार का कर (Tax) है। इस कर का उद्देश्य पर्यावरण से कार्बन-डाइऑक्साइड की मात्रा को कम करना और इसके फलस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming) की गति को धीमा बनाना है। इसका आरोपण जीवाश्म ईंधनों से निकलने वाले धुएँ में कार्बन की मात्रा के समानुपात में कर लगाने से किया जा सकता है। हाल ही में न्यूजीलैंड में इस कर को आरोपित किया गया है।
- **"सभ्यताओं का संघर्ष" (Clash of Civilisation) सिद्धांत**-सैम्युअल हंटिंग्टन (Samuel Huntington) के इस प्रसिद्ध सिद्धांत के अनुसार अपने मूल अंतर्द्वंद्वों के कारण भविष्य में इस्लामी और पश्चिमी सभ्यता के बीच मुख्य संघर्ष होना निश्चित है।
- **"ब्रेन ड्रेन" (Brain Drain)**- विकासशील देशों से अति शिक्षित वर्गों का विकसित देशों में बेहतर आजीविका की तलाश में उत्प्रवासन, "ब्रेन ड्रेन" कहलाता है।
- **साइबर आतंकवाद (Cyber Terrorism)**- यह एक प्रकार का अपराध है जिसमें इंटरनेट द्वारा कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्र को नुकसान पहुँचाने का प्रयास किया जाता है जिससे विश्व में आतंक का एक नया रूप सामने आया है।
- **इलेक्ट्रॉनिक युद्ध (Electronic Warfare):** युद्ध में रेडियो वेव, राडार, इन्फ्रारेड जैसे इलेक्ट्रोमैग्नेटिक स्पेक्ट्रम का प्रयोग करना जबकि शत्रु देश को इनके प्रयोग से रोकना।
- **नृजातीय संहार (Ethnic Cleansing):** किसी एक निश्चित क्षेत्र से किसी नृजातीय समूह या समूहों को बलपूर्वक बाहर करना। इसमें बड़े पैमाने पर जनसंहार एवं अन्य प्रकार के मानवाधिकारों का उल्लंघन शामिल हो सकता है।
- **प्रशुल्क एवं व्यापार संबंधी सामान्य समझौता (GATT):** बहुपक्षीय आधार पर मुक्त व्यापार को बढ़ावा देने के लिये वर्ष 1947 में स्थापित एक विश्व संगठन। गैट ने एक प्रशासनिक संस्था के मुकाबले एक समझौता वार्ता संरचना के रूप में ज्यादा सक्रिय कार्य किया।
- **वरीयता संबंधी सामान्य प्रणाली (Generalised System of Preferences – GSP):** एक व्यवस्था (Mechanism) जिसके अंतर्गत कुछ औद्योगिक देशों ने वर्ष 1970 के दशक में तृतीय विश्व के देशों को प्रशुल्क संबंधी छूट देना शुरू कर दिया। यह सबसे पसंदीदा देश (Most Favoured Nation – MFN) सिद्धांत [illegible] था।

- **भूराजनीति (Geopolitics):** भूगोल को शक्ति राजनीति के एक तत्त्व के रूप में प्रयोग करना तथा राजनीतिक नेताओं एवं विद्वानों द्वारा ऐसा विचार रखना।
- **वैश्विक संस्कृति (Global Culture):** सेटेलाइट टेलीविजन, रेडियो तथा इंटरनेट आधारित संचार के फैलाव के फलस्वरूप वैश्विक सांस्कृतिक एकीकरण को वैश्विक संस्कृति कहा जाता है।
- **समूह चिंतन (Group Think):** समूहों की वह प्रवृत्ति जिसके अंतर्गत अतिविश्वास में जोखिमों को कम कर आँका जाता है और गलत निर्णयों को वैधता प्रदान की जाती है।
- **हाई सी (High Seas):** समुद्र का वह क्षेत्र जो किसी देश के विशिष्ट क्षेत्राधिकार में नहीं आता है और जिसे सामान्य समुद्री क्षेत्र समझा जाता है।
- **मानवीय हस्तक्षेप (Humanitarian Intervention):** किसी राज्य में हथियारों के साथ बलात् प्रवेश करना ताकि व्यापक और गंभीर मानवाधिकारों के उल्लंघन को रोका जा सके।
- **अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष शर्तें (IMF Conditionality):** अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण लेने के लिये कुछ शर्तों का पालन करना होता है जिसके अंतर्गत सरकार को कुछ नीतियों में परिवर्तन करना होता है।
- **अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Norms):** अंतर्राष्ट्रीय समुदाय या सहभागियों द्वारा सामान्य संबंध स्थापित करने के संबंध में की गई अपेक्षाएँ।
- **समझौता ज्ञापन (Memorandum of Understanding):** अनौपचारिक प्रकार का एक समझौता (Instrument) जिसके लिये अभिपुष्टि (Ratification) की आवश्यकता नहीं होती है। इसका ज्यादातर प्रयोग द्विपक्षीय समझौतों में किया जाता है।
- **शिखर सम्मेलन (Summit):** एक ऐसा सम्मेलन जिसमें राज्य या सरकार प्रमुख भाग लेते हैं।
- **अंतर्राष्ट्रीय प्रावधान (International Regime):** नियमों, मानकों एवं प्रक्रियाओं का समूह जिनमें अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों से संबंधित कुछ क्षेत्रों में देशों की आशाएँ एवं आकांक्षाएँ शामिल रहती हैं।
- **अंतर्राष्ट्रीय संबंध (International Relation – IR):** विश्व के देशों की सरकारों के बीच आपसी संबंध तथा इनका संपर्क संयुक्त राष्ट्र संघ, बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं व्यक्तियों से होना। भौगोलिक एवं ऐतिहासिक प्रभावों के साथ अर्थव्यवस्था, संस्कृति तथा घरेलू राजनीति से भी संबंधित होना।
- **अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था (International System):** विश्व के देशों के संबंधों की स्थिति जो कुछ निश्चित नियमों एवं अंतर्क्रियाओं पर आधारित होती है।
- **वाशिंगटन सहमति (Washington Consensus):** आर्थिक विषयों से संबंधित नीतियाँ, जिनकी वाशिंगटन स्थित अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ वकालत या समर्थन करती हैं। कभी-कभी इन नीतियों को विकासशील देशों द्वारा ऋण लेने के लिये पूर्व शर्त के रूप में लागू करना होता है।
- **वासेनार प्रावधान (Wassenaar Arrangement):** एक मंच जहाँ सहभागी देश परंपरागत हथियारों एवं दोहरे प्रयोग में आने वाली सामग्रियों एवं तकनीक के निर्यात प्रतिबंध संबंधी वार्ता करते हैं।
- **प्रतिबंध (Sanction):** यह कठोर कदम का एक रूप है। इसके अंतर्गत एक राज्य दूसरे राज्य के व्यवहार या कार्य में बदलाव लाने के लिये कुछ अवपीड़क उपाय (Coercive Measures) अपनाता है। यद्यपि तकनीकी तौर पर प्रतिबंध के अंतर्गत सैन्य कार्रवाई की जा सकती है। कूटनीतिक प्रतिबंध के अंतर्गत किसी देश के साथ औपचारिक संबंध समाप्त किये जा सकते हैं या किसी देश के दूतावास को बंद किया जा सकता है। इसके अन्य रूपों में कुछ प्रकार के व्यापार पर रोक, किसी देश के नागरिकों के अंतर्राष्ट्रीय खेल प्रतिस्पर्द्धाओं में भाग लेने पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है।
- **स्मार्ट शक्ति (Smart Power):** कठोर एवं नम्य शक्ति का संयुक्त रूप। विदेश नीति संबंधी किसी चुनौती को पार करने के लिये सैन्य बल या आर्थिक प्रतिबंध जैसी कठोर शक्ति एवं राजनयिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव जैसी नम्य शक्ति का प्रयोग करना ही स्मार्ट शक्ति कहलाता है।
- **अनुसमर्थन (Ratification):** संधि जैसे प्रावधानों को औपचारिक मंजूरी देना।
- **मिशन (Mission):** किसी अंतर्राष्ट्रीय संगठन का राजनयिक प्रतिनिधित्व करना। कभी-कभी किसी दूतावास (Embassy) को भी मिशन कहा जाता है।

- **विदेश नीति (Foreign Policy):** विदेशों के संदर्भ में राष्ट्रीय हितों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सरकार के प्रमुख व्यक्तियों या वरिष्ठ नीति-निर्माताओं द्वारा परिभाषित एवं स्थापित नीति विदेश नीति कहलाती है।
- **अभिसमय (Convention):** दो या दो से अधिक राज्यों के बीच वाणिज्य-व्यापार जैसी सामान्य हितों के संबंध में किया जाने वाला एक प्रकार का समझौता।
- **अटैसे (Attache):** किसी अधिकारी को राजनयिक मिशन का कार्य सौंपना। सामान्य तौर पर यह अधिकारी कृषि, वाणिज्य या सैन्य क्षेत्र का विशेषज्ञ होता है।
- **ऐक्सेशन (Accession):** एक प्रक्रिया जिसके द्वारा कोई देश कुछ अन्य देशों के बीच पहले से लागू समझौता में शामिल होता है।
- **समझौता (Accord):** ऐसे अंतर्राष्ट्रीय समझौते जिनमें संधि के मुकाबले हल्के या कम महत्त्व के विषय शामिल किये जाते हैं। लेकिन अब ये संधि के बराबर ही महत्त्व रखते हैं।
- **शरण या आश्रय (Asylum):** शरण प्राप्ति का तात्पर्य अन्य देश या कुछ मामलों में स्वयं अपने ही देश से संरक्षण प्राप्त करने से होता है। ऐसा तब भी देखने को मिलता है जब व्यक्तियों को दूतावासों में रहने की इजाजत दे दी जाती है। यह तब भी देखने को मिलता है जब कोई देश किसी व्यक्ति को अपने देश की सीमा में रहने की इजाजत देता है।
- **युद्धावस्था (Belligerency):** युद्धावस्था एक ऐसी स्थिति है जिसमें सशस्त्र संघर्ष होता है। लडाके इस संघर्ष में प्रत्यक्ष भागीदारी करते हैं।
- **उत्तर-आधुनिकतावाद (Post-Modernism):** एक उपागम जो किसी एक निश्चित वास्तविकता (Single Fixed Reality) से इंकार करता है और लेखन एवं वार्तालाप पर विशेष ध्यान देता है। तात्पर्य यह है कि किसी विषय के बारे में लोग किस तरह की बातें करते और लिखते हैं।
- **संरचनावाद (Constructivism):** अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के सिद्धांत में एक आंदोलन जो इस बात का परीक्षण करता है कि किस तरह परिवर्तित हो रहे अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Norms) राज्य के हितों को आकार देते हैं और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के चरित्र या लक्षण में बदलाव लाते हैं।
- **यथार्थवाद (Realism):** अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का वह सिद्धांत जो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को शक्ति संघर्ष मानता है। इस सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक राज्य अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिये कार्य करता है। यथार्थवाद अंतर्राष्ट्रीय संगठन, अंतर्राष्ट्रीय विधि तथा नैतिकता को नहीं मानता है।
- **आदर्शवाद (Idealism):** आदर्शवादियों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय राजनीति शक्ति एवं सहयोग का क्षेत्र है। आदर्शवादियों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा विश्व में शांतिपूर्ण सहअस्तित्व को बढ़ावा दिया जा सकता है। ये अंतर्राष्ट्रीयवाद के समर्थक हैं तथा ये मानव स्वभाव को अच्छा मानते हैं। इनके अनुसार नैतिकता, शिक्षा एवं लोकतंत्र को बढ़ावा देकर शांति स्थापित की जा सकती है।
- **महाशक्ति (Super Power):** विश्व की सर्वोच्च सैन्य शक्ति वाला देश जो दुनिया में इस शक्ति का व्यावहारिक प्रयोग भी सुनिश्चित करे।
- **जीरो सम गेम (Zero Sum Game):** अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की ऐसी प्रतिस्पर्द्धात्मक स्थिति, जिसमें एक राज्य की विजय का परिणाम दूसरे राज्य का पराजय हो।
- **चीन का शांतिपूर्ण उदय (Peaceful rising of China):** स्वयं चीन द्वारा प्रतिपादित विचार जिसमें चीन अपनी उदय को पश्चिमी देशों के उदय से अलग बताता है। चीन के अनुसार चीन का उदय समूची दुनिया के लिये लाभकारी होगा। चीन की बढ़ती आर्थिक, सैन्य एवं राजनीतिक शक्ति के संदर्भ में इस शब्द का प्रयोग किया जाता है।
- **सुरक्षा (Security):** यथार्थवादी 'सुरक्षा' राष्ट्रीय हित का केंद्रबिंदु है। सुरक्षा से तात्पर्य दूसरे राज्य द्वारा किये गए आक्रमण को रोकने से है और आक्रमण की स्थिति में उसे पराजित करने से है। वर्तमान समय में सुरक्षा के अंतर्गत सैन्य के अलावा मानवीय आर्थिक एवं पर्यावरणीय कारकों को भी शामिल किया जाता है।
- **सुरक्षा उभयपास या सुरक्षा दुविधा (Security Dilemma):** मुख्यत: यथार्थवादियों की मान्यता जिसके अनुसार एक राज्य हथियारों के बिना तथा हथियारों के साथ भी असुरक्षित महसूस कर सकता है। इस कारण प्रत्येक राज्य शत्रु राज्य के संदर्भ में अपनी शक्ति बढ़ाना चाहता है।

- **कठोर शक्ति (Hard power):** राज्य की सैन्य शक्ति को कठोर शक्ति कहा जाता है।
- **सौम्य शक्ति (Soft Power):** राज्य की आर्थिक, तकनीकी एवं वैचारिक शक्ति को सौम्य शक्ति कहा जाता है।
- **सामूहिक सुरक्षा (Collective Security):** यह सुरक्षा की आदर्शवादी संकल्पना है। इसका अभिप्राय 'एक के लिये सभी तथा सभी के लिये एक' से होता है। सामूहिक सुरक्षा की संकल्पना के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इसके व्यवहारिक प्रयोग के रूप में शांति निर्माण कार्यक्रम संचालित किया जाता है।
- **द्विध्रुवीय विश्व (Bipolar World):** शक्ति संतुलन की यह मान्यता जिसके अनुसार शक्ति दो शक्तियों के बीच केंद्रित हो।
- **बहुध्रुवीय विश्व (Multipolar World):** शक्ति संतुलन की एक मान्यता जिसके अनुसार शक्ति दो से अधिक शक्तियों के बीच केंद्रित हो। शीत युद्धोत्तर विश्व में बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था विद्यमान है। अमेरिका, रूस, बिट्रेन, जर्मनी, चीन, ब्राजील जैसे देश बहुध्रुवीयता को बढ़ावा दे रहे हैं।
- **शांति रक्षक सेना (Peace Keeping Army):** युद्धरत् पक्षों को अलग-अलग करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट संघ द्वारा शांति सेनाएँ भेजी जाती हैं। ये सेना युद्धरत् पक्षों को अलग-अलग करने का कार्य करती हैं। शांति रक्षक सेना द्वारा हथियारों का प्रयोग आत्मरक्षा के अलावा नहीं किया जाता है।
- **आतंक का संतुलन (Balance of Terror):** परमाणु हथियार रखने वाले देश एक-दूसरे पर आक्रमण नहीं करते। शीतयुद्ध के दौर में अमेरिका एवं सोवियत संघ के बीच आतंक का संतुलन विद्यमान था। आज भी परमाणु हथियार संपन्न पड़ोसी देशों के बीच यह देखने को मिलता है।
- **शस्त्र नियंत्रण (Arms control):** शस्त्र नियंत्रण हथियारों की मात्रा में कमी करने का एक व्यावहारिक उपाय है। इसमें हथियारों की कटौती या सीमांकन (Limitation) शामिल हो सकता है। साल्ट (S.A.L.T.) सामरिक हथियारों की सीमांकन की संधि है।
- **जनसंहार के घातक हथियार (Weapons of Mass Destruction):** जैविक, रासायनिक एवं परमाणु हथियारों को जनसंहार का घातक हथियार कहा जाता है। ये हथियार परंपरागत हथियारों से इसलिये अलग माने जाते हैं क्योंकि इनके प्रयोग से बड़े पैमाने पर लोग मारे जाते हैं।
- **आतंकवाद (Terrorism):** राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हिंसा (violence) का व्यवस्थित प्रयोग आतंकवाद कहलाता है। आतंकवाद अपने बड़े रूप में वैश्विक आतंकवाद बन जाता है जो समूचे राष्ट्र-राज्यों की सुरक्षा के लिये खतरा बन जाता है।
- **पीस मेकिंग (Peace Making):** पीस मेकिंग संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अंतर्गत प्रावधान है जिसे 'प्रतिबंधात्मक कूटनय' के रूप में भी जाना जाता है। इसके अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र संघ विवादरत् पक्षों के बीच विवाद सुलझाने का प्रयास करता है।
- **भू-आवद्ध देश (Land Locked Country):** भूमि आवद्ध देश की कोई भी सीमा समुद्र से नहीं मिलती है। इस कारण ऐसा देश चारों ओर से पड़ोसी देशों से घिरा रहता है। भूमि आवद्ध देशों की विदेश नीति पर इनके पड़ोसी देशों का काफी प्रभाव होता है। भूटान, नेपाल, अफगानिस्तान भूमि आवद्ध देशों के उदाहरण हैं।
- **बफर राज्य (Buffer State):** दो बड़े राज्यों या महाशक्तियों के बीच अवस्थित देश को बफर राज्य कहा जाता है। बफर राज्य के कारण दो शक्तियाँ आमने-सामने आने से बच जाती हैं। जैसे भारत एवं चीन के बीच नेपाल एक बफर राज्य है।
- **अधिराष्ट्रीय कर्त्ता (Supranational Actor):** सदस्य राज्यों की सदस्यता से निर्मित आसियान, यूरोपीय यूनियन एवं दक्षेस (SAARC) जैसे संगठनों को अधिराष्ट्रीय कर्त्ता कहा जाता है।
- **नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था (N.I.E.O.):** विकासशील या तीसरी दुनिया के देशों द्वारा विश्व में आर्थिक समानता लाने एवं इसे न्यायपूर्ण बनाने की मांग नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था कहलाती है। नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग 1974 से शुरू की गई। इसमें तीसरी दुनिया के देशों को कर्ज एवं तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने की मांग की गई थी। ब्रेटेनबुड्स संस्थाओं में भी सुधार की मांग की गई थी।
- **अराजकता (Anarchy):** अंतर्राष्ट्रीय राजनीति सिद्धांत में 'एनार्की' पूर्ण अराजकता का संकेत नहीं करता बल्कि उस केंद्रीय सरकार के अभाव को प्रदर्शित करता है जो कानूनों का प्रवर्तन कर सके।

- **शस्त्र प्रतिस्पर्द्धा (Arms Race):** एक पारस्परिक प्रक्रिया जिसमें दो या दो से अधिक देश अपनी सैन्य क्षमताओं को बढ़ाते हैं।
- **सत्तावादी सरकार (Authoritarian Government):** एक ऐसी सरकार जो बिना निष्पक्ष चुनाव करवाए सत्ता में बनी रहती है। ऐसी सरकार नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का सम्मान नहीं करतीं है, न तो वहाँ प्रेस की स्वतंत्रता होती है।
- **ब्लू हेलमेट (Blue Helmet):** संयुक्त राष्ट्र शांति रक्षक सेनाओं को ब्लू हेलमेट के नाम से जाना जाता है क्योंकि वे संयुक्त राष्ट्र के चिह्न के साथ ब्लू हेलमेट पहनते हैं।
- **गृहयुद्ध (Civil War):** एक राज्य के अंदर विभिन्न गुटों द्वारा देश के कुछ क्षेत्रों में या पूरे देश में सरकार बनाने या उसे रोकने के प्रयास में होने वाला सशस्त्र संघर्ष गृहयुद्ध कहलाता है।
- **बुर्जुवा (Bourgeoisie):** मार्क्सवादी सिद्धांत के अंतर्गत एक वर्ग जो पूंजी का स्वामी होता है जो अपने श्रम के बजाय निवेश से संपत्ति बनाता है।
- **पूंजीवाद (Capitalism):** एक आर्थिक व्यवस्था जो पूंजी एवं उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व (Private Ownership) पर आधारित होती है।
- **कार्टेल (Cartel):** कुछ निश्चित उत्पादों के उत्पादकों का संघ जिसका गठन विश्व बाज़ार में इन उत्पादों के मूल्यों में हेर-फेर करने के लिये किया जाता है।
- **रासायनिक हथियार समझौता (Chemical Weapon Convention):** यह रासायनिक हथियारों के निर्माण एवं उसके रखने पर प्रतिबंध लगाता है। वर्ष 1992 में किये गए इस समझौते में सख्त सत्यापन का प्रावधान किया गया है। उल्लंघनकर्त्ताओं तथा समझौता में शामिल नहीं होने वाले देशों पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है।
- **साझा बाज़ार (Common Market):** एक क्षेत्र जिसमें सीमाओं के आर-पार श्रम एवं पूंजी का मुक्त प्रवाह होता है।
- **स्पिल ओवर प्रभाव (Spillover Effect):** एक गतिशील प्रक्रिया जिसके अंतर्गत एक नीतिगत क्षेत्र में एकीकरण का प्रभाव दूसरे नीतिगत क्षेत्र में पड़ता हो, इससे नए दबाव एवं नए लक्ष्य पैदा हो जाते हैं।
- **पीस कीपिंग (Peace Keeping):** संयुक्त राष्ट्र (UN) द्वारा संघर्ष से पीड़ित या अस्त-व्यस्त देश में पीस कीपिंग को दीर्घकालिक शांति का विकास करने के एक उपाय के रूप में किया जाता है। इसके अंतर्गत ऐसे उपाय किये जाते हैं जिससे शांति बनाए रखा जा सके। लड़ाई समाप्त होने के बाद शांति निर्माताओं (Peace Makers) द्वारा समझौतों के क्रियान्वयन में सहायता की जाती है।
- **शांति प्रवर्तन (Peace Enforcement):** इसके अंतर्गत आक्रमण की कार्रवाई की स्थिति में शांति एवं सुरक्षा को पुनः बहाल करने के लिये अवपीड़क उपायों (Cercive Measures) का प्रयोग किया जाता है।
- **शांति निर्माण (Peace Building):** व्यापक संदर्भ में शांति निर्माण हिंसात्मक संघर्ष के संरचनात्मक कारणों (Structural Causes) का हल करते हुए सतत विकास के लिये आवश्यक परिस्थितियों का निर्माण करना है। ताकि सतत शांति की प्राप्ति की जा सके। यदि स्पष्ट शब्दों में कहें तो शांति निर्माण का कार्य शांति रक्षण (Peace Keeping) का कार्य समाप्त होने के बाद शुरू होता है। हालाँकि इनकी गतिविधियों में अतिच्छादन (Overlapping) होता है। शांति निर्माण (Peace Building) को बहुआयामी शांति रक्षण (Multidimentional Peace Keeping) भी कहा जाता है। शांति निर्माण (Peace Building) की प्रक्रिया में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सैनिक रणनीतियों को शामिल किया जा सकता है।
- **वैश्विक शासन (Global Governance):** वैश्विक शासन संवाद युक्त निर्णयन की एक व्यापक गतिशील एवं जटिल प्रक्रिया है। इसमें सरकारी, गैर-सरकारी, औपचारिक, गैर-औपचारिक तंत्र भाग लेते हैं। वैश्विक शासन में अंतर-सरकारी संगठन एवं कभी-कभी अधिराष्ट्रीय (Supranational) निकाय भी भाग लेते हैं। वैश्विक शासन के अंतर्गत सरकार के विभिन्न शाखाओं के अधिकारी दूसरे देश के अपने समकक्षों के साथ कार्य करते हैं। इसके अलावा वे कार्यकर्त्ताओं (Activists), वैज्ञानिकों, वैंक अधिकारियों तथा सरकार के बाहर के व्यक्तियों के साथ मिलकर भी कार्य करते हैं। संकीर्ण अर्थ में ये अंत:क्रियाएँ जिन संस्थाओं के माध्यम से होती हैं वह वैश्विक शासन कहलाता है।
- **अधिराष्ट्रवाद (Supranationalism):** अधिराष्ट्रवाद एक ऐसी सत्ता का अस्तित्त्व है जो राष्ट्र-राज्य की सत्ता से ऊँचा है और जो अपनी इच्छाओं को राष्ट्र-राज्य पर थोपने में सक्षम है। इस प्रकार अधिराष्ट्रवाद संप्रभुता एवं निर्णयन सत्ता

(Sovereignty and Decision Making Authority) को सदस्य या घटक राज्यों से क्षेत्रीय या अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को सौंप देता है। विशेषकर यथार्थवादियों के अनुसार विश्व सरकार की संभावना से युक्त होने के बावजूद यह न केवल संप्रभुता के लिये खतरा है बल्कि राष्ट्रीय पहचान एवं लोकतंत्र के लिये भी खतरा है।

- **विश्व सरकार (World Government):** विश्व सरकार एक ऐसी अभिकल्पना है जिसमें सभी मानव एक सामान्य राजनीतिक सत्ता के अधीन होंगे। विश्व सरकार की सभी संकल्पनाएँ एक अधिराष्ट्रीय निकाय (Supranational Body) में सत्ता के केंद्रीयकरण पर अवस्थित हैं।
- **अंतर-सरकारवाद (Inter-Governmentalism):** अंतर सरकारवाद राज्यों के बीच ऐसी अंतर्क्रिया के रूप में जाना जाता है जो संप्रभु देशों के बीच होती है। इसी रूप में यह अधिराष्ट्रवाद से अलग होती है कि अधिराष्ट्रवाद में एक ऐसी सत्ता होती है जो राष्ट्र राज्यों से ऊपर होती हैं। अंतर-सरकारवाद का सबसे सामान्य रूप संधि या गठबंधन (Treaty or Alliance) होता है। इसका सबसे सामान्य रूप द्विपक्षीय समझौता है। अंतर-सरकारवाद के अन्य प्रमुख रूप ओपेक (OPEC) तथा आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) हैं। इस तरह के निकायों में राज्य संप्रभुता का संरक्षण सर्वसम्मत निर्णयन (Unanimous Decision Making) द्वारा होता है। इसके अंतर्गत प्रत्येक सदस्य को राष्ट्रीय महत्त्व के महत्त्वपूर्ण मामलों में वीटो (Veto) प्राप्त होता है।
- **बहुपक्षीयवाद (Multilateralism):** मोटे तौर पर बहुपक्षीयतावाद को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके अंतर्गत तीन या अधिक राज्यों के व्यवहारों में समन्वय या सामन्जस्य स्थापित किया जाता है। बहुपक्षीयतावाद के अंतर्गत तीन सिद्धांत अवश्य शामिल होने चाहिये। पहला, भागीदारी करने वाले देशों के बीच भेदभाव नहीं होना चाहिये। दूसरा, सहभागी देशों द्वारा एकल इकाई (Single Entity) के रूप में कार्य करना चाहिये। तीसरा, सहभागी देशों के बीच सामान्य एवं दीर्घकालिक दायित्व (Obligation) भावना होनी चाहिये।
- **संरक्षणवाद (Protectionism):** घरेलू उद्योगों को संरक्षण देने के उद्देश्य से प्रशुल्क, कोटा तथा अन्य उपायों को अपनाना ताकि आयात को सीमित किया जा सके।
- **गैर-प्रशुल्क बाधाएँ (Non-tariff Barriers):** ऐसे नियम, विनियमन एवं अन्य उपाय जो आयात को प्रभावित करते हैं। जैसे सरकार की खरीद नीतियाँ (procurement policies), व्यवस्थागत सीमा संबंधी विलंब (Systematic Border Delays) तथा जटिल स्वास्थ्य एवं अन्य राष्ट्रीय मानक।
- **अंतर्राष्ट्रीय विधि (International Law):** अंतर्राष्ट्रीय विधि वह विधि है जो राज्यों एवं अंतर्राष्ट्रीय कर्त्ताओं को शासित करती है। हालाँकि अंतर्राष्ट्रीय विधि घरेलू विधि या राष्ट्रीय विधि से इस मायने में अलग होती है क्योंकि यह अंतर्राष्ट्रीय विधायी निकाय या प्रवर्तन प्रणाली के अभाव में भी संचालित होती है।
- **संस्था (Institution):** व्यवहारों एवं आकांक्षाओं को आकार देने वाले मानकों, कानूनों एवं कार्य प्रणालियों से युक्त निकाय संस्था कहलाती है। कोई ज़रूरी नहीं कि यह अपने भौतिक स्वरूप में अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की तरह ही हो।
- **कूटनीति (Diplomacy):** राज्यों के बीच वार्ता एवं संवाद की एक प्रक्रिया जिसके अंतर्गत वे बिना युद्ध किये संघर्ष का समाधान करना चाहते हैं। कूटनीति विदेशी नीति का एक तंत्र (Mechanism) होती है।
- **पारराष्ट्रीय (Transnational):** यह एक ऐसा विन्यास या स्वरूप (Configuration) है जो राष्ट्रीय सरकारों या राज्य सीमा से बाहर की घटनाओं, व्यक्तियों, समूहों या संगठनों पर लागू होता है। यह अंतर्राष्ट्रीय या बहुराष्ट्रीय स्वरूप से अलग होता है।
- **अंतर्निर्भरता (Interdependence):** अंतर्निर्भरता दो पक्षों के बीच एक ऐसे संबंध को बताता है जिसमें एक पक्ष द्वारा लिये गए निर्णय से दूसरा पक्ष प्रभावित होता है। अंतर्निर्भरता से पारस्परिक प्रभाव का पता चलता है। सामान्य रूप से अंतर्निर्भरता का तात्पर्य अंतर्राष्ट्रीय मामलों में सहयोग एवं एकीकरण से लिया जाता है।
- **अराजकता (Anarchy):** शाब्दिक रूप से अराजकता का मतलब कानून का अभाव या केंद्रीय या उच्च सत्ता के अभाव से है। कभी-कभी इसका अस्थिरता या अव्यवस्था से अर्थ लिया जाता है लेकिन यह आवश्यक नहीं है।
- **वैश्विकवाद (Globalism):** एक विचारधारात्मक परियोजना जो वैश्वीकरण के विस्तार के प्रति प्रतिबद्ध है। सामान्य रूप से यह मुक्त बाज़ार आधारित पूंजीवाद के मूल्यों एवं सिद्धांतों को प्रदर्शित करता है।

- **शक्ति राजनीति (Power Politics):** राजनीति का एक उपागम जो यह मानता है कि शक्ति की प्राप्ति मनुष्य का अंतिम लक्ष्य होता है।
- **आधुनिकीकरण (Modernization):** एक प्रक्रिया जिसके माध्यम से समाज आर्थिक उन्नति, तकनीकी विकास तथा राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन का तार्किक संगठन कर आधुनिक एवं विकसित होता है।
- **पुनर्जागरण (Renaissance):** इसका शाब्दिक अर्थ पुनर्जन्म (Rebirth) होता है। इसे मुख्यत: प्राचीन ग्रीस एवं रोम की उस सांस्कृतिक आंदोलन से जोड़कर देखा जाता है जिसमें शिक्षा एवं कला के क्षेत्र में वहुत सारा विकास देखने को मिला था।
- **प्रबोधन या ज्ञानोदय (Enlightenment):** एक बौद्धिक आंदोलन जिसने विवेक बुद्धि, तर्क एवं प्रगति के नाम पर धर्म, राजनीति एवं शिक्षा के क्षेत्र में परंपरागत मान्यताओं को चुनौती दिया।
- **साम्राज्य (Empire):** प्रभुत्व की एक संरचना जिसके अंतर्गत भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक एवं जातीय समूह, राष्ट्रीयताएँ एक ही सत्ता के अधीन कर दी जाती हैं।
- **सकारात्मक शांति (Positive Peace):** ऐसी शांति जो युद्ध के मूल कारणों को समाप्त करे। यह केवल युद्ध विराम नहीं है बल्कि उन संबंधों का परिवर्तन है जिसमें आर्थिक शोषण एवं राजनीतिक उत्पीड़न खत्म कर दिया जाता है या उसमें कमी लाई जाती है।
- **सैन्यवाद (Militarism):** युद्ध, सैन्यबल एवं हिंसा का महिमामंडन।
- **संरचनात्मक हिंसा (Structural Violence):** कुछ बुद्धिजीवियों द्वारा प्रयोग किया जाने वाला शब्द जो गरीबी, भूख, उत्पीड़न एवं संघर्ष के सामाजिक एवं आर्थिक स्रोत का संकेत करता है।
- **राज्य प्रायोजित आतंकवाद (State Sponsored Terrorism):** राज्यों द्वारा राजनीतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये आतंकवादी समूहों का सहारा लेना। सामान्यतया राज्य की इंटेलिजेंस एजेंसियों के नियंत्रण में आतंकवादी समूह कार्य करते हैं।
- **युद्ध अपराध (War Crimes):** युद्धबंदियों के साथ दुर्व्यवहार करने या नागरिकों को ज़रूरत से ज़्यादा लक्षित करने जैसे युद्ध नियमों का उल्लंघन करना।
- **अंधराष्ट्रीयता (Chauvinism):** किसी वजह या समूह के प्रति समालोचना एवं तर्क रहित समर्पण जो ज़्यादातर इसकी सर्वोच्चता में विश्वास के कारण होता है। जैसे- राष्ट्रीय अंधभक्ति।
- **हर्जाना (Reparation):** ऐसी क्षतिपूर्ति जिसमें वित्तीय भुगतान या वस्तुओं की प्राप्ति शामिल हो सकती है। इस तरह का ज़्यादातर हर्जाना विजयी देशों द्वारा हारे हुए देशों पर दंडस्वरूप लगाया जाता है।
- **तुष्टीकरण (Appeasement):** विदेश नीति का एक उपाय जिसके अंतर्गत एक आक्रामक राज्य को इसके राजनीतिक उद्देश्यों में वदलाव लाने और विशेषकर युद्ध को टालने के उद्देश्य से कई तरह के छूट दिये जाते हैं।
- **प्राकृतिक राज्य (State of Nature):** ऐसा समाज जहाँ किसी प्रकार की राजनीतिक सत्ता न हो या व्यक्ति पर कोई औपचारिक (कानूनी) नियंत्रण न हो।
- **जेनोफोबिया (Xenophobia):** अन्य समूहों विशेषकर विदेशियों का भय होना।
- **सांस्कृतिक साम्राज्यवाद (Cultural Imperialism):** वैश्विक संस्कृति के रूप अमेरिका के बढ़ते प्रभुत्व की आलोचना स्वरूप उपयोग किया जाने वाला शब्द।
- **लोकतांत्रिक शांति (Democratic Peace):** व्यावहारिक साक्ष्यों से समर्थित एक मान्यता कि लोकतांत्रिक देश एक-दूसरे के खिलाफ युद्ध नहीं करते यद्यपि वे सत्तावादी शासन (Authoritarian Rule) के खिलाफ युद्ध करते हैं।
- **निर्भरता सिद्धांत (Dependency Theory):** मार्क्सवाद की ओर उन्मुख एक सिद्धांत जो यह बताता है कि देश के अंदर का पूंजीपति वर्ग एवं विदेशी पूंजी के बीच साठगाँठ होने के कारण तृतीय विश्व के देशों में पूंजी का अभाव बना रहता है।
- **विकास सहायता समिति (Development Assistance Committee):** पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका तथा जापान की सदस्यता से बनी समिति जो दक्षिण या तीसरे विश्व के देशों को 95 प्रतिशत आधिकारिक विकास सहायता (Official Development Assistance) उपलब्ध कराती है।
- **राजनयिक उन्मुक्ति (Diplomatic Immunity):** इसका तात्पर्य राजनयिक गतिविधियों को मेजबान देश (Host Country) के राष्ट्रीय न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से बाहर रखने से है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राष्ट्र राज्य की संकल्पना सर्वप्रथम वेस्टफेलिया की संधि में प्रकट हुई।
- वेस्टफेलिया जर्मनी में उत्तर पश्चिमी क्षेत्र है, जो 1815 से 1918 तक प्रशा साम्राज्य का हिस्सा रहा है।
- उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO) अमेरिकी नेतृत्व में एक अंतर्सरकारी सैन्य गठबंधन है।
- NATO में वर्तमान में 29 सदस्य देश हैं। मांटेनेग्रो इस संगठन में शामिल होने वाला 29वाँ राज्य है।
- START (Strategic Arms Reduction Treaty रणनीतिक शस्त्र कटौती संधि) संयुक्त राज्य अमेरिका एवं रूस के बीच 31 जुलाई, 1991 को हस्ताक्षरित हुई। इसके अंतर्गत दोनों देश परमाणु शस्त्रों के अपने भंडार में कटौती करने को तैयार हुए।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. 'राष्ट्र' से आप क्या समझते हैं?
2. 'अंतर्राष्ट्रीय संबंध' क्या है?
3. शीत युद्ध को परिभाषित करें।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दजिये)

1. 'राष्ट्र' एवं 'राज्य' में अंतर स्पष्ट करते हुए 'राष्ट्र राज्य' की संकल्पना को स्पष्ट करें।
2. मार्शल योजना ने यूरोप को कैसे प्रभावित किया?
2. अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को विचारधारा किस प्रकार प्रभावित करती है? तर्क सहित उत्तर दीजिये।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. नवीन शीत युद्ध से आप क्या समझते हैं?
2. द्वितीय विश्व युद्ध ने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को किस प्रकार प्रभावित किया? सविस्तार वर्णन करें।
3. एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था के उदय में सहायक घटनाएँ कौन-सी थीं? इसके परिणामस्वरूप अमेरिका की भूमिका कैसे परिवर्तित हुई?

अध्याय
2

शीत युद्धोत्तर विश्व व्यवस्था (World Order After Second World War)

शीतयुद्ध के अंत का आकस्मिक परिणाम था कि अब संयुक्त राज्य अमेरिका अंतर्राष्ट्रीय संरचना के शिखर पर अकेला खड़ा था। अब सोवियत संघ कहीं से भी वर्चस्व में उसके आड़े नहीं था। शीतयुद्ध की समाप्ति ने अमेरिका और सोवियत संघ को उस प्रतिद्वंद्विता से मुक्त कर दिया था जिसने उनके अपार संसाधनों को निचोड़ लिया था और अन्य शक्तियों जैसे कि चीन, जर्मनी और जापान की तुलना में उनकी आर्थिक शक्ति को भी काफी कमज़ोर कर दिया था।

2.1 शीत युद्ध *(Cold War)*

सोवियत-अमेरिकी संबंधों में 'शीतयुद्ध' (Cold War) शब्द का प्रयोग तत्कालीन द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विकसित गहन विद्वेष और तनाव को संबोधित करने के लिये किया जाता है। प्रत्यक्ष रूप से आमने-सामने बिना किसी युद्ध के शीतयुद्ध एक वैचारिक संघर्ष, राजनीतिक अविश्वास, कूटनीतिक चालों, सैन्य प्रतियोगिता, गुप्तचर/गतिविधियों और मनोवैज्ञानिक संघर्ष की प्रक्रिया थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत के साथ ही यह स्पष्ट हो गया था कि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के एक नए युग का प्रारंभ हो रहा था। अपने क्षेत्र में अद्वितीय एवं विनाशकारिता में अपूर्व होने के कारण बीसवीं शताब्दी के द्वितीय महायुद्ध ने न केवल एक ऐसी व्यवस्था का सूत्रपात किया जिसमें दो महाशक्तियों संयुक्त राज्य अमेरिका एवं सोवियत संघ का आधिपत्य था बल्कि इसने पूर्व शताब्दियों में साम्राज्यवादी राष्ट्रों द्वारा संकलित विशाल औपनिवेशिक साम्राज्यों के विघटन को भी तीव्र बना दिया और इस प्रकार अनेक लोगों को विदेशी शासन से मुक्ति मिली। उभरती हुई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषता थी- यूरोपीय कोर क्षेत्र (European Core Area) के बाहर ऐसे अनेक प्रभुत्वसंपन्न राज्यों में शक्ति का वितरण जो उक्त दो महाशक्तियों द्वारा नियंत्रित थे।

इस महाशक्ति प्रतिद्वंद्विता के लिये द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत जन्मे कुछ महत्त्वपूर्ण कारक उत्तरदायी थे। दो महाशक्तियों के बीच हितों का टकराव विवाद का एक प्रमुख कारण था। अंतर्राष्ट्रीय क्रम-व्यवस्था में शिखर पर अमेरिका और सोवियत संघ की सुदृढ़ स्थिति एक-दूसरे के लिये शंका का कारण थी। दूसरे, वैचारिक मतभेद ने न केवल दो शक्तिशाली राष्ट्रों बल्कि दो भिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं के मध्य भी शीतयुद्ध को एक संघर्ष बना दिया। तीसरे, दोनों महाशक्तियों की एक-दूसरे के उद्देश्यों के प्रति गलतफहमी भी एक कारण थी। शंकालु व्यक्ति अपने कार्यों को सद्भावना से और प्रतिपक्षी के कार्यों को दुर्भावना की दृष्टि से देखते हैं। यह प्रवृत्ति शस्त्रों की होड़ से स्पष्ट होती है। गलतफहमी का शिकार होकर यह अनुमान लगा लिया गया कि शत्रु आक्रामक युद्ध की तैयारी कर रहा है। अतः शीतयुद्ध के विकास-काल में अमेरिका के नेताओं एवं उसके मित्रों ने उत्पन्न संकटों को विश्व-आधिपत्य की सोवियत योजना का भाग माना। दूसरी ओर, सोवियत संघ ने इसे भिन्न नज़रिये से देखा। उसने अपनी सामाजिक व्यवस्था के नाश के लिये पश्चिम को उत्तदायी माना। अविश्वास ने गलतफहमियों को जन्म दिया जो संघर्ष में बदल गया। विभिन्न हितों के साथ-साथ विचारधाराओं और धारणाओं का अंतर भी एक अन्य कारक था। इन महाशक्तियों की प्रतिद्वंद्विता की गति को पूर्णतः समझने के लिये इसके कारकों को जानना एवं इसकी घटनाओं की जाँच करना महत्त्वपूर्ण है जिसका हम आगे सविस्तार वर्णन करेंगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के तुरंत बाद सोवियत-अमेरिकी मित्रता पारस्परिक शत्रुता में बदल गई। वर्ष 1950 में कोरियाई युद्ध और तिब्बत में चीनी हमले के साथ ही दो शक्तियों का आमना-सामना स्पष्ट है। यह सार्वभौमिक रूप से एक कटु संघर्ष बन गया जिससे एक मुक्त विवाद (Open Dispute) के बढ़ने का भय हो गया। दूसरी ओर, महाशक्तियों के संबंधों ने तब एक नया मोड़ लिया जब 1949 में सोवियत संघ ने संयुक्त राज्य के परमाणु शक्ति (Atomic Power) संबंधी एकाधिपत्य को समाप्त कर दिया। नए शक्ति संतुलन में परिवर्तन ने प्रत्यक्ष विरोध से आंदोलन की दिशा बदल दी। अब दोनों शक्तियों ने मित्रों के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण संसाधनों का विस्तार शुरू कर दिया। उनकी सफलताओं ने द्विध्रुवीय विश्व (Bipolar World) का निर्माण किया जहाँ एक ओर अमेरिका और उसके मित्र थे तो दूसरी ओर सोवियत संघ और उसके मित्र।

महाशक्तियों का केंद्र-विंदु यूरोप था जहाँ वे अपना प्रभाव स्थापित करना चाहते थे और जहाँ सर्वप्रथम शीतयुद्ध आरंभ हुआ। अमेरिका के यूरोपीय मित्र और सोवियत संघ क्रमशः उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO) और वारसा पैक्ट (Warsaw Pact) में विभाजित हो गए। ये गठबंधन महाशक्तियों की बाहरी नीतियों का आधार बन गए। इसके अतिरिक्त, परमाणु शस्त्रों (Nuclear Weapons) के आविष्कार ने विश्व राजनीति में युद्ध के भय से उत्पन्न हो रही भूमिका में व्यापक परिवर्तन ला दिया।

जोसेफ स्टालिन के उत्तराधिकारी निकिता खुश्चेव (Nikita Khrushchev) ने पूंजीवाद के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति (Policy of Peaceful Co-existence) का प्रचार किया। वर्ष 1963 में अमेरिका और सोवियत की सैन्य क्षमता से बढ़ती प्रतिद्वंद्विता के संबंध में परमाणु युद्ध (Nuclear War) से संभावित पारस्परिक विनाश के बढ़ते भय ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि सह-अस्तित्व एक मात्र विकल्प रह गया। इसका परिणाम हुआ- 1968 की परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Nuclear Test Ban Treaty)। अब महाशक्तियाँ यूरोपीय सीमाओं के स्थायीकरण, जिसमें वह सीमा भी शामिल है जो जर्मनी को विभाजित करती है, से सहमत थीं। इस प्रकार अमेरिका और सोवियत संघ ने अपनी पूर्व विवादित रणनीतियों से स्वयं को अलग करना आरंभ कर दिया और देतांत (Detente) अर्थात् अमन का आधार अपनाने का फैसला कर लिया।

शीघ्र ही अमेरिका और सोवियत संघ के बीच उनकी नीतियों में परिवर्तन के फलस्वरूप संबंध सामान्य हो गए। विद्वेषी संबंध अब सहयोगी संबंध में बदल गए। भय, चेतावनी और प्रतिद्वंद्विता का स्थान अब आपसी मेलजोल, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, व्यापार संधियों और संयुक्त तकनीकी सम्मेलनों ने ले लिया। सामरिक शस्त्र नियंत्रण वार्ता (Strategic Arms Limitation Talks – SALT) की संरचना के अंतर्गत शस्त्र नियंत्रण देतांत (Detente) अमन या तनाव शैथिल्य वाद-विवाद का केंद्र बन गया। देतांत (Detente) के सतर्कतापूर्वक विकास के बावजूद, विरोध की निरंतरता की प्रवृत्ति यह सुनिश्चित करती है कि वह 1970 ई. के दशकांत तक टिका नहीं रह सकता था। अनेक संदर्भों से 1979 में अफगानिस्तान पर सोवियत हमले से देतांत (Detente) को आघात लगा। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में इसे द्वितीय देतांत (Detente II) के बाद द्वितीय शीतयुद्ध (Cold War II) कहा जाता है। अमेरिका के राष्ट्रपति जिमी कार्टर (Jimmy Carter) ने सोवियत हमले पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, "अफगानिस्तान में सोवियत हमले ने समस्त विश्व को एक गंभीर रणनीतिक चुनौती के सामने ला खड़ा किया है।" तत्पश्चात् उन्होंने 1980 के मॉस्को ओलंपिक (Mosco Olympics) का विश्वव्यापी बहिष्कार संगठित करने का प्रयास किया और सोवियत संघ को अमेरिका द्वारा खाद्य निर्यात (Export) की आपूर्ति बंद कर दी। अतः इसके बाद से उनके संबंधों में त्वरित रूप से कटुता पैदा होने लगी। शीघ्र ही उनके बीच घरेलू आर्थिक समस्याओं की कीमत पर शस्त्रों की होड़ पुनः आरंभ हो गई। संकटपूर्ण घटनाओं ने विवाद के पुनरारंभ (Restart) को रोके रखा। सोवियत समर्थकों ने लॉस एंजिल्स में 1984 के ओलंपिक खेलों के बहिष्कार द्वारा अपना बदला लिया। रीगन के सिद्धांत (Reagan's Principles) ने उन गैर-साम्यवादी विद्रोहियों के लिये अमेरिका के समर्थन को सुनिश्चित करने का आश्वासन दिया जो अफगानिस्तान, अंगोला और निकारागुआ से सोवियत समर्थक सरकारों का तख्ता उलटने का प्रयास कर रहे थे। इन कार्रवाइयों के कारण अमेरिका और रूस के आपसी संबंध विगड़ते चले गए। बहरहाल, स्थिति अभी नियंत्रण में ही थी।

मिखाइल गोर्बाचेव (Mikhail Gorbachev) के 'नवीन विचारों' की वकालत ने इन प्रतिद्वंद्वी राज्यों के हितों में मेल-मिलाप कायम करने के लिये एक अधिक रचनात्मक काल के पहलुओं में इज़ाफा किया। वे पश्चिम के पूंजीवादी राष्ट्र के साथ सोवियत संघ के मतभेद समाप्त करने के पक्ष में थे। अप्रत्याशित रूप से सोवियत संघ ने वही किया जैसा कि उसने वचन दिया था। उसने एक दुश्मन की बजाय एक मित्र की तरह व्यवहार किया जो कि 1987 की मध्यम-प्राक्ष परमाणु नि:शस्त्रीकरण संधि (Intermediate-range Nuclear Forces Disarmament Agreement) पर हस्ताक्षर एवं स्टार्ट अर्थात् रणनीतिक शस्त्र कटौती संधि (Strategic Arms Reduction Talks – START) वार्ताओं की शुरुआत से स्पष्ट होता है। इसके बाद, इस समझौते की गति तेज़ हो गई तथा सोवियत-अमेरिकी संबंधों में तेज़ी से सुधार आने लगा। शीतयुद्ध जिसकी शुरुआत यूरोप में हुई तथा जिसका प्रावल्य यूरोप में 45 वर्षों तक रहा, वह 1991 में सोवियत संघ के विघटन के साथ समाप्त हो गया। तदोपरांत, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के विकास में भूमंडलीकरण के उदय के साथ 1991 के बाद के घटनाक्रम ने एक नए युग का आरंभ किया।

कुछ मुद्दे एवं संकल्पनाएँ जिनके अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के सिद्धांत एवं व्यवहार में महत्त्वपूर्ण निहितार्थ हैं, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से गुजरते हुए यहाँ संदर्भानुसार उनके विश्लेषण की भी आवश्यकता है।

नवीन शीतयुद्ध *(New Cold War)*

शीतयुद्ध में शक्ति संतुलन 1975 और 1979 ई. के बीच निरंतर सोवियत संघ के पक्ष में जाने लगा। सोवियत संघ ने अफ्रीका के एक बड़े भाग में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था। उसी समय में 1979-80 ई. के दौरान ईरान में अमेरिका की प्रतिष्ठा को धक्का लगा। ईरान का शाह जिसे अमेरिका अपना एक सुरक्षित मित्र समझता था, का तख्ता अचानक इस्लामी क्रांति के बाद 1979 में एक हिंसक क्रांति में अयातुल्लाह खोमैनी (Ayatollah Khomeini) द्वारा उलट दिया गया। वर्ष 1979 ई. में अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप देतांत के लिये एक घातक हवा का झोंका था। सोवियत नेताओं को यह लगता था कि उक्त सैनिक गतिविधि छोटी होगी और विदेशी प्रतिक्रिया भी सीमित एवं अस्थायी होगी। लेकिन वे दोनों ही पहलुओं पर गलत साबित हुए। यह सैन्य अभियान नौ वर्षों तक चला और विदेशी प्रतिक्रिया भी कठोर तथा दीर्घकालिक सिद्ध हुई। अमेरिकियों ने आश्चर्यजनक तीव्रता दिखाई। दिसंबर 1979 के आरंभ में, अमेरिकी राष्ट्रपति कार्टर ने मॉस्को तक दूरभाष संपर्क (Hot Line) का प्रयोग करते हुए आशंका व्यक्त की कि सोवियत-अमेरिकी संबंध खतरे में पड़ सकते हैं। वर्ष 1980 में हमले की शुरुआत से एक वर्ष के भीतर ही अमेरिका ने सोवियत संघ को खाद्यान्नों और उच्च तकनीकी के निर्यात पर आंशिक रूप से निषेध लागू कर दिया और द्वितीय सामरिक शस्त्र परिसीमन वार्ता (SALT-2) के समझौते को मानने से इनकार कर दिया। इसके अलावा उसने वर्ष 1980 में मॉस्को में आयोजित होने जा रहे ओलंपिक खेलों का बहिष्कार किया। अंततोगत्वा 3 जनवरी, 1980 को संयुक्त राष्ट्र संघ (UN) में अभिव्यक्त अंतर्राष्ट्रीय जनमत प्रबल रूप से सोवियत संघ के खिलाफ हो गया।

2.2 उत्तर-शीतयुद्ध काल *(Post-Cold War Era)*

उत्तर-शीतयुद्ध काल में वर्ष 1989 से 1991 की घटनाओं ने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अनेक पहलुओं में एक नया मोड़ उपस्थित कर दिया। जहाँ एक ओर द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में सोवियत-अमेरिकी प्रतिद्वंद्विता पर आधारित द्वि-ध्रुवीय संरचना (Bipolar Structure) का अंत हो गया, वहीं दूसरी ओर राष्ट्र-राज्य स्तर पर महत्त्वपूर्ण बदलाव आए। पूर्व साम्यवादी राज्यों ने आर्थिक संकट से लेकर राज्य विघटन जैसी गंभीर समस्याओं का सामना किया। शीतयुद्ध की समाप्ति ने सभी राज्यों के राष्ट्रीय हितों और मामलों में राज्यों को नवीन आकार देने के लिये विवश कर दिया। इसका विभिन्न एवं बहुआयामी संगठनों पर भी प्रभाव पड़ा। वारसा संधि (Warsaw Pact) को भंग कर दिया गया, लेकिन नाटो (NATO) नए संदर्भ में संघर्षरत रहा। अब वैचारिक और सुरक्षात्मक मुद्दों का स्थान नैतिक, मानवीय और सांस्कृतिक मुद्दों ने ले लिया। चूँकि सोवियत संघ में साम्यवाद को नकार दिया गया था, इसलिये नए युग की शुरुआत होना स्वाभाविक था। शीतयुद्ध के आकस्मिक अंत ने पिछले दो महायुद्धों की सीख से परे एक भिन्न सबक लिया। महाशक्तियों की प्रतिद्वंद्विता का अंत सशस्त्र संघर्ष की बजाय शांतिपूर्ण ढंग से हुआ। इस बात से यह तो स्पष्ट हो ही जाता है कि महाशक्तियाँ यदि चाहें तो युद्ध व रक्तपात के बिना भी अपनी समस्याओं के लिये शांतिपूर्ण समाधान ढूंढ सकती हैं।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है अब एक ऐसी नई विश्व व्यवस्था की पृष्ठभूमि तैयार की जा रही थी जिसमें अमेरिका को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UN Security Council) तथा अन्य सदस्यों के साथ मिलकर विश्व में स्थायित्व प्रदान करने वाली भूमिका वहन करनी थी। शीत युद्धोत्तर विश्व बहुध्रुवीय (Multipolar) न होकर एकध्रुवीय (Unipolar) हो गया था। अब विश्व शक्ति का केंद्र संयुक्त राज्य अमेरिका था जिसकी ओर पश्चिम के देश निहार रहे थे। वर्ष 1991 के खाड़ी युद्ध (Gulf War) को एक नए प्रकार की सामूहिक अंतर्राष्ट्रीय गतिविधि मॉडल के रूप में देखा गया जिसमें प्रबल अमेरिका के समर्थन से संयुक्त राष्ट्र एक वास्तविक सामूहिक सुरक्षा संगठन की भूमिका निभा सकता था। शीतयुद्ध ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में स्थायीकरण की भूमिका निभाई है, हम इस दृष्टिकोण को भी प्रसंगवश नकार नहीं सकते। इस दृष्टिकोण से शीतयुद्ध का अंत अस्थायीकरण की घटना थी। सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के उत्तरवर्ती राज्यों में अव्यवस्था और हिंसा के निराशावादी पूर्वानुमान लगाए जा रहे थे। जहाँ एक ओर कुछ राष्ट्रों ने तीन प्रमुख आर्थिक खंडों- अमेरिका, यूरोपीय यूनियन और पूर्वी एशिया पर आधारित बहुध्रुवीयता पर विचार किया तो वहीं दूसरी ओर अन्य राष्ट्रों ने अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में अमेरिका के प्रभुत्व पर आधारित एकध्रुवीयता का समर्थन किया।

दो महाशक्तियों के स्थान पर एक महाशक्ति हो जाने के बावजूद ऐसे कुछ कारण हैं जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि विश्व में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। उदाहरण के लिये, अमेरिका पहले की ही भाँति बेहद शक्तिशाली है, यूरोप

एकीकरण के रास्ते पर चल रहा है, उत्तर-दक्षिण संवाद समाप्त नहीं हुआ है आदि। विश्व की कुछ प्रमुख समस्याएँ शीतयुद्ध की समाप्ति से जुड़ी न होकर नए समय की उपज प्रतीत होती हैं। कुछ समस्याओं का संबंध शीतयुद्ध की समाप्ति और उनके परिणामों से जुड़ा हुआ है, जैसे कि खाड़ी युद्ध (Gulf War), युगोस्लाविया में राज्य भंग (Break up to Yugoslavia) तथा परमाणु प्रसार (Nuclear Proliferation)। ये वास्तव में कुछ ऐसे परिवर्तन हैं जो शीतयुद्ध काल के अध्ययन के महत्त्व को स्थापित करते हैं।

अमेरिका का वर्चस्व : एकध्रुवीय विश्व का उदय
(American Dominance : Emergence of Unipolar World)

ऐसा माना जाता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका अपने सैनिक सामर्थ्य में समस्त रूप से अपने सभी प्रतियोगियों से आगे था। कुछ विचारकों के मत के अनुसार, शीत युद्धोत्तर काल में समकालिक अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की संरचना एकध्रुवीय थी अर्थात् अमेरिका का ही वर्चस्व था। उसके द्वारा प्रतिरक्षा पर होने वाला व्यय अन्य सभी शक्तियों के संयुक्त रक्षा-व्यय से कहीं अधिक था। आर्थिक रूप से भी वह विश्व में शक्तिशाली रहा है। उसके घरेलू बाज़ार का वृहत् आकार उसकी संसाधन निधि और उसकी नम्र शक्ति के तत्त्व जैसे कि वैचारिक व सांस्कृतिक अपील एवं भाषा आदि यह निर्धारित करते हैं कि कोई भी अन्य शक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका से शत्रुता की सोच भी नहीं सकती। इस प्रकार शक्ति का एकध्रुवीय वितरण बड़ी-बड़ी शक्तियों के मध्य सहयोगी संबंधों को आयाम (Dimension) प्रदान करता है। कुछ देशों ने उत्साहपूर्वक तो कुछ ने बेमन से ही अमेरिका के वर्चस्व को स्वीकार किया है।

खाड़ी युद्ध में अमेरिकी सैन्य शक्ति के विशाल प्रदर्शन द्वारा खाड़ी के देश इराक के राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन की भारी पराजय ने अमेरिका के आत्मविश्वास को और अधिक बढ़ाया। इसने तथाकथित 'वियतनाम संलक्षण' (Vietnam Syndrome) को उखाड़ फेंका। तथापि, तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बुश के उत्तरवर्ती बिल क्लिंटन ने विदेश नीति में कोई व्यापक रुचि नहीं दिखाई। उनका विशेष उत्साह आर्थिक वर्चस्व या अर्थव्यवस्था को स्थापित करने में था। उनके कुशल राजनीतिक नेतृत्व में अमेरिका का भाग्य चमक गया। वर्ष 1992 और 2000 की अवधि में अमेरिका ने युद्धोत्तर काल की सबसे लंबी गूँज अनुभव की। न केवल अर्थव्यवस्था ने अमेरिकियों में आत्मविश्वास को बढ़ावा दिया, बल्कि उसकी लोकप्रिय संस्कृति ने भी उसका साथ दिया। इस विशिष्ट प्रभाव का ज़िम्मा सुदृढ़ अमेरिका ने अपने ऊपर ले लिया ताकि वह अपनी सर्वोच्चता को बनाए रख सके। बदले में शेष विश्व राजनीतिक व सैनिक नेतृत्व के लिये अमेरिका की ओर निहारने लगा। तब एकमात्र राष्ट्रीय मुद्रा शक्तिशाली डॉलर था जिसे सभी देशों ने मान्यता दे दी। अमेरिका की पहुँच प्रशांत एवं अटलांटिक तक, मध्य एवं लैटिन अमेरिका में और मध्य व दक्षिण एशिया के केंद्रीय भाग तक हो गई। यह भी कहा जा सकता है कि अमेरिका वैश्विक रूप से अधिनायक बन गया। इन सभी महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में अमेरिका ने अन्य देशों के बीच प्रायः समझौता कराने के लिये रेफरी और खिलाड़ी दोनों की भूमिका निभानी आरंभ कर दी।

वर्ष 1991 से अमेरिका हर प्रकार से मध्यस्थ की भूमिका निभा रहा है। चाहे वह उत्तरी आयरलैंड शांति प्रक्रिया हो, 1994 के बाद नाटो के आकार में वृद्धि हो या अफगानिस्तान में तालिबान विरोधी संघर्ष हो अथवा इराक से सद्दाम हुसैन का तख्तापलट हो, सभी मामलों में अमेरिका ने अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका दर्ज कराई है।

अमेरिका का प्रतिरोध : बहुध्रुवीय विश्व का उदय
(Resistance of America : Rise of Multipolar World)

यह सही है कि, शीत युद्धोत्तर काल में अमेरिकी वर्चस्व को सभी देशों ने स्वीकार किया, किंतु वर्तमान परिवेश में 21वीं शताब्दी कुछ परिवर्तनों की साक्षी रही है जिसमें, अमेरिकी वर्चस्व को गंभीर चुनौती मिलती प्रतीत हो रही है। एशिया में चीन का आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभार तथा रूस का राष्ट्रपति पुतिन के कार्यकाल में पुनरुत्थान एवं वैश्विक मुद्दों को प्रभावित करना एक नई बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के आगमन की आहट है। जहाँ विकासशील देश अपने प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों के कारण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, वहीं विकसित देशों की बाज़ार की तलाश इन देशों की महत्ता को और प्रभावी बनाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के वर्चस्ववादी रवैये के प्रत्युत्तर में राष्ट्रवाद, अधिनायकवाद का प्रचलित होना, संरक्षणवादी नीतियों का प्रसार, क्षेत्रीय संगठनों का अधिक प्रभावी एवं सफल होना इत्यादि ऐसे बिंदु हैं जो विश्व

व्यवस्था के बदलते स्वरूप को प्रदर्शित करते हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण संस्थाओं से स्वयं को अलग कर अमेरिका ने अन्य देशों की वैश्विक भूमिका को बढ़ाने का ही कार्य किया है। पार प्रशांत भागीदारी एवं पेरिस जलवायु समझौते से अलग होने अमेरिका का अपनी वैश्विक भागीदारी को कम करने के रूप में देखा जा रहा है। वहीं चीन के नेतृत्व में वित्तीय संस्थाओं का गठन, विकासशील देशों को तकनीकी एवं वित्तीय सहायता प्रदान करना, पर्यावरणीय मुद्दों पर मुखरता से अपना पक्ष रखना इत्यादि चीन के बढ़ते रुतबे का परिचायक है। सीरिया, ईरान एवं उत्तर कोरिया का मुद्दा, शरणार्थियों को शरण एवं पुनर्वास का मुद्दा इत्यादि पर अमेरिकी प्रभाव पर्याप्त नहीं रहा है। क्षेत्रीय स्तर पर देशों में राष्ट्रवाद की प्रखर होती भावना ने लोगों को अमेरिकी वर्चस्व का प्रतिरोध करने को प्रोत्साहित किया है। आतंकवाद के मुद्दे पर अमेरिका का दोहरा रवैया विश्व जनमानस को सुरक्षा के लिये आश्वस्त करने में भी विफल रहा है।

यह सही है कि बदलते वैश्विक परिदृश्य में अमेरिका की भूमिका भी परिवर्तित होती रही है। अमेरिका विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होने के साथ सबसे ताकतवर देश भी है। अन्य देशों के अमेरिकी विरोध के अपने-अपने कारण हैं। यह सही है कि विश्व व्यवस्था बहुध्रुवीय होनी चाहिये, जिससे सभी राष्ट्रों को वैश्विक पटल पर उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। किन्तु, वास्तविकता यही है कि वर्तमान में विश्व व्यवस्था अमेरिका की तरफ झुकी हुई है जिसका प्रमुख कारण अमेरिका का विज्ञान, प्रौद्योगिकी, ज्ञान एवं नवाचार के क्षेत्र में प्रभुत्व होना है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- शीत युद्ध अमेरिका एवं रूस (तत्कालीन सोवियत संघ) के मध्य वैचारिक मतभेद को दर्शाता है। इसका अंत 31 दिसंबर, 1991 को सोवियत संघ के विघटन के साथ हो गया।
- अमेरिका पूंजीवादी अर्थव्यवस्था वाला देश है जहाँ मुक्त अर्थव्यवस्था, व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं राज्य द्वारा अहस्तक्षेप की नीति अपनाई गई है। वहीं रूस ने साम्यवादी शासन व्यवस्था को अपनाया जिसमें राज्य नियंत्रित अर्थव्यवस्था एवं सामुदायिक विकास को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया।
- नाटो (NATO) अमेरिका के नेतृत्व में 29 देशों का एक सैन्य गठबंधन है। इसमें सबसे अंत में मांटेनेग्रो देश शामिल हुआ है।
- एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था से तात्पर्य ऐसी विश्व व्यवस्था से है जिसमें किसी एक देश का वर्चस्व वैश्विक स्तर पर अधिक हो तथा अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करने में उसकी प्रमुख भूमिका हो।
- वार्सा पैक्ट पोलैंड के वार्सा में हस्ताक्षरित हुई। यह तत्कालीन सोवियत संघ के नेतृत्व में एक रक्षा संधि है, जिसमें मुख्यतः पूर्वी यूरोपीय देश शामिल रहे।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. नवीन शीत युद्ध को स्पष्ट करें।
2. शीत युद्धोत्तर विश्व व्यवस्था से क्या तात्पर्य है?
3. नाटो (NATO) क्या है?

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दीजिये)

1. 'शीत युद्ध मात्र विचारधाराओं का टकराव था'। इस कथन का परीक्षण करें।
2. एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था क्या है? अमेरिकी वर्चस्व किस प्रकार विश्व को प्रभावित कर सका? स्पष्ट करें।
3. पूंजीवाद एवं साम्यवाद में अंतर स्पष्ट करें।
4. रूस और अमेरिकी विचारधारा किस प्रकार भिन्न है तथा इस वैचारिक अंतर का वैश्विक पटल पर क्या प्रभाव पड़ा है?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. 21वीं शताब्दी में ऐसे क्या कारण हैं जो अमेरिकी प्रतिरोध को बढ़ावा दे रहे हैं?
2. 'वर्तमान विश्व बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था को प्रदर्शित करता है।' इस कथन के समर्थन में तर्क प्रस्तुत करें।
3. शीत युद्धोत्तर काल में चीन के उभार के क्या कारण एवं परिणाम हैं?

अध्याय
3

संयुक्त राष्ट्र एवं उसकी अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ (United Nations and Its Important Agencies)

संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व का सबसे बड़ा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। विश्व स्तर पर इस तरह का अंतर्राष्ट्रीय संगठन बनाने का यह दूसरा प्रयास था। इसके पहले प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद युद्ध एवं हिंसा को रोकने के लिये राष्ट्र संघ (League of Nations) की स्थापना की गई थी लेकिन यह संगठन युद्ध रोकने में सफल नहीं हो सका था। द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका को देखते हुए युद्ध के दौरान ही विश्व के प्रमुख नेताओं ने एक ऐसा संगठन बनाने पर विचार करना शुरू कर दिया था जो भावी पीढ़ी को युद्ध की विभीषिका से बचाए, साथ ही विश्व में शांति भंग करने के प्रयासों को रोक सके। इसे देखते हुए द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद 51 देशों द्वारा 24 अक्टूबर, 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की गई। ये देश अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखने, राष्ट्रों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध विकसित करने, सामाजिक प्रगति, बेहतर जीवन-स्तर की प्राप्ति तथा मानवाधिकारों को प्रोत्साहित करने के प्रति प्रतिबद्ध थे।

3.1 संयुक्त राष्ट्र *(United Nations)*

स्थापना : 24 अक्टूबर, 1945
मुख्यालय : न्यूयॉर्क सिटी
प्रमुख अंग : 6 (संयुक्त राष्ट्र महासभा, सुरक्षा परिषद, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद, न्यासी परिषद, अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय, सचिवालय)

महासभा *(General Assembly)*

यह संयुक्त राष्ट्र की प्रमुख नीति-निर्माता एवं प्रतिनिधि सभा है। इसके सदस्य देशों की संख्या 193 है। महासभा का अध्यक्ष सदस्य देशों में से प्रतिवर्ष एक वर्ष के लिये चुना जाता है।

सुरक्षा परिषद *(Security Council)*

यह संयुक्त राष्ट्र का सबसे प्रभावी अंग है। इसका प्रमुख कार्य वैश्विक व्यवस्था एवं शांति को बनाए रखना है। इसमें 5 स्थायी और 10 अस्थायी सदस्य होते हैं। 5 स्थायी सदस्य- चीन, रूस, फ्राँस, यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका हैं। अस्थायी सदस्यों का चयन महासभा द्वारा 2 वर्षों के लिये किया जाता है।

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद *(Economic and Social Council)*

यह आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय मुद्दों पर नीतियों की समीक्षा एवं सिफारिश करने हेतु प्रमुख संस्था है। इसके 54 देश सदस्य हैं, जिनका चयन महासभा द्वारा 3 वर्षों के लिए होता है।

न्यासी परिषद *(Trusteeship Council)*

इसकी बैठक विशेष परिस्थितियों में महासभा, सुरक्षा परिषद या न्यासी परिषद के अध्यक्ष द्वारा बुलाई जाती है।

अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय *(International Court of Justice)*

यह संयुक्त राष्ट्र का एकमात्र महत्त्वपूर्ण अंग है, जिसका मुख्यालय न्यूयॉर्क से बाहर हेग (नीदरलैंड) में अवस्थित है। इसका प्रमुख कार्य अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के आधार पर सदस्य देशों के मध्य विवादों का निपटारा करना तथा संयुक्त राष्ट्र की संस्थाओं को सलाह प्रदान करना है।

सचिवालय (*Secretariat*)

यह संयुक्त राष्ट्र के दिन-प्रतिदिन के कार्यों का संचालन करने हेतु उत्तरदायी है। महासचिव सचिवालय के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होते हैं, जिसका चयन महासभा द्वारा सुरक्षा परिषद की सलाह पर पाँच वर्षों के लिये किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र एक अंतर्सरकारी संगठन है, जिसका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को बनाए रखना है।

3.2 संयुक्त राष्ट्र में सुधार *(Reforms in United Nation)*

भारत का यह मानना है कि संयुक्त राष्ट्र में ऐसे सुधार किये जाने चाहियें, जिनसे यह वास्तव में प्रतिनिधित्वकारी बन सके, इसके प्रभाव एवं विश्वसनीयता में वृद्धि हो सके। विशेष रूप से सुरक्षा परिषद की संरचना में बदलाव आना चाहिये, जिससे समकालीन वास्तविकता की झलक मिल सके। संयुक्त राष्ट्र को सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये, जिससे कि देशों के बीच समावेशी विकास को बढ़ावा मिले। इसके लिये ज़रूरी है कि वैश्विक वित्तीय व्यवस्था में संरचनात्मक सुधार (Structural Reform) के लिये अंतर्राष्ट्रीय पहल की जाए ताकि विनियमन को ज़्यादा प्रभावी बनाया जा सके तथा निगरानी एवं बहुपक्षीय वार्ता के लिये एक मज़बूत व्यवस्था बनाने के साथ जलवायु परिवर्तन जैसी समस्या के सफल समाधान हेतु वैश्विक सहयोग एवं समन्वय हो सके। इससे एक निष्पक्ष एवं समानता पर आधारित परिणाम निकलेगा। भारत का यह भी मानना है कि संयुक्त राष्ट्र को विशेषकर अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद संबंधी व्यापक अभिसमय (Comprehensive Convention on International Terrorism) लागू करने के लिये आवश्यक अंतर्राष्ट्रीय सहयोग स्थापित करने हेतु सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये।

सुरक्षा परिषद की संरचना में इस प्रकार परिवर्तन किया जाना चाहिये, जिससे कि 21वीं शताब्दी की वास्तविकताओं एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की झलक मिल सके। इसके लिये सबसे पहले इसके स्थायी एवं अस्थायी सदस्यों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिये। दूसरा, नए स्थायी सदस्यों के उत्तरदायित्व एवं कर्त्तव्य वर्तमान स्थायी सदस्यों के समान होने चाहियें। तीसरा, वीटो पावर नए स्थायी सदस्यों को भी दिया जाना चाहिये। इस मांग का सैद्धांतिक एवं तार्किक आधार है। एक ही श्रेणी के सदस्यों के बीच भेदभाव नहीं किया जाना चाहिये। भारत को विश्वास है कि स्थायी सदस्य बनाए जाने पर वह विश्व-समुदाय की बेहतर सेवा कर सकता है।

भारत-संयुक्त राष्ट्र संबंध *(India-United Nations Relations)*

भारत संयुक्त राष्ट्र संघ के मूल सदस्यों में शामिल है। इसने 1 जनवरी, 1942 को वाशिंगटन में संयुक्त राष्ट्र उद्घोषणा पर हस्ताक्षर किया था। भारत ने 25 अप्रैल से 26 जून, 1945 के बीच सैन फ्रांसिस्को के संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में भागीदारी की थी। स्वतंत्र भारत ने संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता को शीतयुद्ध के दौरान युद्ध एवं संघर्ष को समाप्त कर शांति और स्थिरता बनाए रखने हेतु एक महत्त्वपूर्ण गारंटी के रूप में देखा था। संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता ने भारत को अंतर्राष्ट्रीय मामलों में अपनी नेतृत्व क्षमता दिखाने का भी अवसर उपलब्ध कराया है। उपनिवेशवाद एवं रंगभेद के विरुद्ध संघर्ष के दिनों में भारत इसके साथ खड़ा रहा। इसके अलावा वैश्विक निरस्त्रीकरण, शस्त्र प्रतिस्पर्द्धा की समाप्ति तथा समानता पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के सृजन हेतु संघर्ष में भी भारत इसके साथ रहा। शीतयुद्ध की समाप्ति तथा वैश्विक समुदाय के तीव्र एकीकरण का अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभाव जैसे मुद्दों ने 21वीं शताब्दी में इसके समक्ष प्रमुख चुनौती पेश की है। भारत इन परिवर्तनों के साथ सामंजस्य बैठाने एवं इन्हें समझने का गंभीर प्रयास कर रहा है। ऐसे प्रयासों के अंतर्गत सामूहिक कार्रवाई तथा संयुक्त राष्ट्र के अधीन पार-राष्ट्रीय मामलों के समाधान हेतु बहुपक्षीय उपाय अपनाना शामिल है। ऐसा करते समय भारत एवं संयुक्त राष्ट्र एक-दूसरे को परखने का भी प्रयास कर रहे हैं।

जैसे-जैसे संयुक्त राष्ट्र इन मुद्दों के समाधान के लिये प्रयास कर रहा है, भारत पूरे विश्वास एवं आशा के साथ संयुक्त राष्ट्र के इन प्रयासों के साथ है। वह उन उत्तरदायित्वों को उठाने के लिये भी तैयार है, जो विश्व समुदाय उससे अपेक्षा करता है। भारत संयुक्त राष्ट्र के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर सुरक्षा परिषद, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद (Economic and Social Council) में सुधार तथा महासभा (General Assembly) को ज़्यादा सक्रिय करने का भी प्रयास कर रहा है।

भारत हमेशा से संयुक्त राष्ट्र को एक ऐसे संगठन के रूप में देखता रहा है जो अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा सुनिश्चित कर सकता है। हाल के दिनों में भारत ने संयुक्त राष्ट्र के मंच से विकास एवं गरीबी उन्मूलन, जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद, समुद्री डकैती, निरस्त्रीकरण, मानवाधिकार, शांति निर्माण एवं शांति स्थापना के लिये संयुक्त राष्ट्र प्रणाली को सुदृढ़ करने पर बल दिया है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। सार्वभौमिक प्रेरणाओं से जुड़ा वैश्विक दृष्टिकोण रखता है। भारत विभिन्नता एवं बहुलवाद का सम्मान करता है। वैश्विक मामलों में रचनात्मक सहयोग देने के लिये तत्पर रहता है। भारत 1945 से ही संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था से जुड़ा रहा है। शीतयुद्ध एवं शीतयुद्ध के पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को आकार देने में भारत ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। भारत विश्व की एक प्रमुख अर्थव्यवस्था है। भारत एक नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक एवं वित्तीय संरचना के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाने की क्षमता रखता है। संयुक्त राष्ट्र शांति अभियानों में भारत की लंबे समय से भागीदारी से न केवल इसके समर्पण एवं भारतीय सैनिकों की दक्षता का पता चलता है बल्कि इन अभियानों में सक्रिय योगदान करने की सरकार की राजनीतिक इच्छाशक्ति का भी पता चलता है। इन कारणों से सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिये भारत की दावेदारी का समर्थन करने वालों की संख्या निरंतर बढ़ रही है।

भारत की स्थायी सदस्यता के मार्ग में बाधाएँ *(Barriers in India's Permanent Membership in UNSC)*

चीन का भारत विरोध

परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह का सदस्य नहीं होने के कारण चीन भारत की संयुक्त राष्ट्र में स्थायी सदस्यता का विरोध करता है।

संरचनात्मक बाधा

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता प्राप्त करने हेतु महासभा के दो-तिहाई सदस्यों तथा सुरक्षा परिषद के सभी स्थायी सदस्यों के समर्थन की आवश्यकता है। भारत को महासभा में बहुमत प्राप्त करने के बाद भी सभी स्थायी सदस्यों की स्वीकृति प्राप्त करना मुश्किल प्रतीत होता है, विशेषकर जी-4 (भारत, जर्मनी, जापान एवं ब्राज़ील) के संदर्भ में।

वीटो शक्ति पर असहमति

संयुक्त राष्ट्र के स्थायी सदस्य वीटो शक्ति को अन्य देशों के साथ साझा कर वैश्विक पटल पर परिस्थितियों को अपने अनुकूल कर पाने की शक्ति को कम नहीं करना चाहते हैं। यही कारण है कि वे नए सदस्यों को बिना वीटो शक्ति के स्थायी सदस्यता प्रदान करने के पक्ष में हैं, किंतु वीटो शक्ति के साथ नहीं।

ध्यातव्य है कि अब तक भारत इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि बिना वीटो अधिकार के संयुक्त राष्ट्र में स्थायी सदस्यता उसे मंजूर नहीं है, किंतु सुधार की प्रक्रिया की अति धीमी प्रगति को देखते हुए भारत सहित जी-4 ने अस्थायी तौर पर इस मांग को टाल दिया है।

3.3 संयुक्त राष्ट्र के समक्ष वैश्विक चुनौतियाँ *(Global Challenges in front of UN)*

बदलता वैश्विक परिदृश्य, पर्यावरणीय निम्नीकरण, बढ़ती आर्थिक एवं सामाजिक विषमता विश्व के समक्ष नई चुनौतियों को जन्म देते हैं। इस संदर्भ में व्यापक वैश्विक सहमति बनाकर संसाधनों के आवंटन तथा न्यायपूर्ण पुनर्वितरण द्वारा संयुक्त राष्ट्र समाधान की दिशा में मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

संयुक्त राष्ट्र के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं-

- वैश्विक गरीबी, भुखमरी एवं अशिक्षा से निपटना, सामाजिक, आर्थिक समावेशन।
- जलवायु परिवर्तन तथा वैश्विक तापन के प्रभावों के प्रति अनुकूलन एवं शमन हेतु विश्व को तैयार करना।

- वैश्वीकरण के प्रतिउत्तर में उभरते संरक्षणवाद से वैश्विक व्यापार प्रतिरूप में उत्पन्न विकृति को दूर करना।
- अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, साइबर अपराध तथा संगठित अपराध से बचाव व संरक्षण के उपाय करना।
- गृहयुद्धों तथा नस्लीय हिंसा से उपजे शरणार्थी संकट का सफलतापूर्वक निवारण करना इत्यादि।

ऐसे में कहना न होगा कि संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन आज की नई दुनिया के परिप्रेक्ष्य में अपरिहार्य हो गया है। यदि संयुक्त राष्ट्र को अपनी प्रासंगिकता बनाए रखनी है और शांत एवं समृद्ध दुनिया बनाने के अपने उद्देश्य पर आगे बढ़ना है तो भारत के साथ-साथ जापान, जर्मनी, ब्राज़ील जैसे देशों को नज़रअंदाज़ करना अब दुनिया के लिये आसान न होगा। आज नहीं तो कल ऐसे सुधार करने ही होंगे, जो इस संस्था को लोकतांत्रिक एवं समावेशी स्वरूप दे सकें। वरना पूर्ववर्ती संगठन राष्ट्र संघ की तरह यह संगठन तेज़हीन होकर अपना अस्तित्व ही खो देगा।

3.4 संयुक्त राष्ट्र की अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ
(Other Important Agencies of UN)

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) *(United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation–UNESCO)*

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) 'संयुक्त राष्ट्र' का एक महत्त्वपूर्ण घटक है। यूनेस्को की स्थापना वर्ष 1945 में की गई थी। संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के अन्य अभिकरणों में मानव विकास को बढ़ावा देने तथा शिक्षा, प्रकृति, समाज विज्ञान, संस्कृति, वैज्ञानिक शोध एवं संचार माध्यमों से अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सूझबूझ को बढ़ावा देने में यूनेस्को की प्रमुख भूमिका है। वर्तमान में इनके 195 सदस्य देश तथा 10 सहयोगी देश हैं। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्राँस) में है।

भारत सरकार ने यूनेस्को के सहयोग के लिये वर्ष 1949 में एक अंतरिम 'भारतीय राष्ट्रीय आयोग' का गठन किया है, जिसे वर्ष 1951 में स्थायी स्वरूप दिया गया। राष्ट्रीय आयोग यूनेस्को के कार्यक्षेत्र में आने वाले सभी विषयों में राष्ट्रीय स्तर पर सलाहकार, संयोजक और संपर्क एजेंसी के रूप में कार्य करता है। वर्तमान में यूनेस्को के डायरेक्टर जनरल 'इरीना वोकोवा' हैं।

यूनेस्को के उद्देश्य *(Objectives of UNESCO)*

यूनेस्को की स्थापना के पीछे आदर्श सोच यह है कि 'चूँकि युद्ध लोगों के मस्तिष्क में उत्पन्न होते हैं, इसलिये मनुष्य के मस्तिष्क में ही शांति की रक्षा का सृजन होना चाहिये।' इस रूप में इसके निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

- शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु ज्ञान की वृद्धि, विसरण एवं निरंतरता की ओर ध्यान देना।
- लोगों में आपसी समझ एवं ज्ञान की उन्नति में सहयोग करने का व्यापक प्रयास करना।
- विचारों एवं सूचनाओं के मुक्त प्रवाह का संवर्द्धन करना।
- व्यक्तियों एवं अन्य सूचना सामग्रियों के विनिमय को प्रोत्साहन देना।
- ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक महत्त्व की पुस्तकों तथा अन्य कलात्मक कृतियों और इमारतों का संरक्षण करना।
- सदस्य देशों के साथ शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों के विकास में सहयोग करना।

यूनेस्को के कार्य *(Functions of UNESCO)*

- अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में वृद्धि तथा समग्र जीवन स्तर में सुधार लाने वाले वैज्ञानिक शोध कार्यों को प्रोत्साहित करना।
- बौद्धिक सहयोग के संवर्द्धन हेतु सभी के लिये शिक्षा के लक्ष्य की ओर शिक्षा प्रणालियों को पुनः परिवर्तित करना।
- मानवीय एवं नागरिक मूल्यों के संरक्षण तथा शैक्षिक पाठ्यक्रमों, पद्धतियों व सामग्रियों के पुनर्संशोधन पर ध्यान केंद्रित करना।
- संस्कृति एवं विकास के संबंध में शोध तथा विश्व सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण हेतु कार्य करना।
- विकासात्मक प्रयासों हेतु वित्तीय, तकनीकी एवं नीतिगत सहायता उपलब्ध कराना।

- वर्ष 1978 में प्रारंभ हुए विश्व विरासत कार्यक्रम के तहत असाधारण वैश्विक महत्त्व व मूल्य के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक स्थलों के रखरखाव हेतु सहायता उपलब्ध कराना।
- सूचनाओं के मुक्त प्रवाह, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेस की स्वतंत्रता, मीडिया अंतर्निर्भरता एवं बहुलीकरण को प्रोत्साहित करना।

यूनेस्को और भारत (UNESCO and India)

भारत यूनेस्को की स्थापना के साथ ही वर्ष 1946 से कार्यकारी बोर्ड के सदस्य के रूप में लगातार निर्वाचित होता रहा है। यूनेस्को का नई दिल्ली कार्यालय एशिया में इस संगठन का प्रथम विकेंद्रीकृत कार्यालय है। हालाँकि भारत को एक विकासशील देश का दर्जा प्राप्त है फिर भी भारत इसके बजट में भारी योगदान करता है। भारत सरकार का वार्षिक वित्तीय योगदान यूनेस्को के कुल बजट का 0.5% है।

इस समय भारत यूनेस्को के 19 अभिसमयों का सदस्य है जिनमें प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक विरासत, शिक्षा तथा बौद्धिक संपदा अधिकार से संबंधित अभिसमय शामिल हैं। भारत और यूनेस्को शिक्षा, विज्ञान, संस्कृति, विरासत एवं सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से अधिक शांतिपूर्ण एवं संपोषणीय विश्व का निर्माण करने हेतु स्वाभाविक साझेदार हैं।

विशेष तथ्य

- **यूनेस्को विश्व विरासत स्थल (World heritage site)** ऐसे विशेष संरक्षण प्राप्त स्थानों को कहा जाता है, जो विश्व विरासत स्थल समिति द्वारा चयनित होते हैं और यही समिति इन स्थलों की देखरेख यूनेस्को के तत्त्वावधान में करती है।
- इस कार्यक्रम का उद्देश्य विश्व के ऐसे स्थलों को चयनित एवं संरक्षित करना होता है, जो विश्व संस्कृति की दृष्टि से मानवता के लिये असाधारण रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ विशेष परिस्थितियों में ऐसे स्थलों को इस समिति द्वारा आर्थिक सहायता भी दी जाती है।
- भारत को विश्व धरोहर सूची में 14 नवंबर, 1977 को स्थान मिला।
- भारत में यूनेस्को द्वारा 32 स्थल संरक्षित थे। वर्ष 2016 में भारत के तीन नए स्थलों- चंडीगढ़ के कैपिटल कॉम्प्लेक्स, कंचनजंघा पार्क तथा नालंदा विश्वविद्यालय के पुरातात्त्विक स्थल में शामिल होने से अब भारत के 35 स्थान विश्व विरासत सूची में शामिल हो गए हैं। इनमें से 27 को सांस्कृतिक श्रेणी, जबकि 7 को प्राकृतिक और एक को मिश्रित श्रेणी में स्थान प्राप्त हुआ है।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम *(United Nations Development Programme–UNDP)*

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा पारित प्रस्ताव के बाद वर्ष 1965 को अस्तित्व में आया। यू.एन.डी.पी. का निर्माण तकनीकी सहायता में संयुक्त राष्ट्र का विस्तारित कार्यक्रम (EPTA) तथा 'संयुक्त राष्ट्र विशेष कोष' के विलय से हुआ है। यू.एन.डी.पी. संपूर्ण एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका, अरब जगत तथा यूरोपियन भागों में जीवन स्तर सुधारने तथा आर्थिक वृद्धि की दर को तीव्र करने के लिये 188 देशों की सरकारों तथा 30 अंतर्राष्ट्रीय अभिकरणों के साथ मिलकर कार्य करता है। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है।

उद्देश्य *(Objectives)*

यू.एन.डी.पी. का उद्देश्य अल्प विकसित देशों द्वारा समानार्थिक विकास की दिशा में किये जा रहे प्रयासों को तीव्र करने के लिये संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के माध्यम से तकनीकी सहायता प्रदान करना है। इस रूप में यह निम्नलिखित उद्देश्य के लिये कार्य करता है–

- औद्योगिक, वाणिज्यिक या निर्यात संभावना वाले प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण एवं मूल्यांकन।
- व्यावसायिक कुशलता वृद्धि हेतु प्रशिक्षण प्रदान करना।
- आर्थिक व सामाजिक नियोजन में सहायता।
- पूंजी निवेश को प्रोत्साहित करना।
- उपयुक्त तकनीकों का स्थानांतरण एवं स्थानीय तकनीक क्षमताओं की वृद्धि को प्रोत्साहन देना।
- जीवन स्तर में वृद्धि तथा आर्थिक वृद्धि की दर में तेज़ी लाने का प्रयास करना।

कार्य (*Functions*)

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम अल्प विकसित देशों में विभिन्न विकास योजनाओं को समर्थन देता है। इस उद्देश्य के लिये यह लगभग 7000 से अधिक कार्यात्मक परियोजनाओं को समर्थन देता है। इस कार्यक्रम की गतिविधियों के लिये को सदस्य राष्ट्रों के योगदान एवं प्रतिभूतियों से प्राप्त होता है।

- तकनीकी सहायता एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करना।
- अल्प विकसित देशों में गरीबी कम करने के नवीन उपचारों के विकास पर ध्यान केंद्रित करना।
- रियायती ऋणों व अनुदानों के माध्यम से पूरक सहायता प्रदान करना।
- साख कोष, लघुस्तरीय सामूहिक उद्यम, श्रम एवं ईंधन बचत तकनीकों का प्रशिक्षण आदि जैसी गतिविधियों को प्रोत्साहित करना।
- आत्मनिर्भर गतिविधियों को प्रोत्साहन एवं सहयोग प्रदान करना।

यू.एन.डी.पी. संयुक्त राष्ट्र पूंजी विकास कोष (UNCDF), महिलाओं के लिये संयुक्त राष्ट्र महिला विकास कोष को (UNIFEM) तथा विज्ञान एवं तकनीक के विकास हेतु संयुक्त राष्ट्र विज्ञान एवं तकनीकी विकास कोष (UNFSTD) को प्रशासित करता है। साथ ही संयुक्त राष्ट्र स्वयंसेवक (UNV) एवं राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलनों हेतु विकास सहायता जैसी गतिविधियाँ भी संचालित करता है।

विशेष तथ्य

- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) प्रतिवर्ष मानव विकास रिपोर्ट (Human Development Report) का प्रकाशन करता है।
- मध्य प्रदेश भारत का पहला राज्य है, जिसने वर्ष 1995 में सर्वप्रथम राज्यस्तरीय मानव विकास रिपोर्ट प्रकाशित की।
- हाल ही में जारी हुई मानव विकास रिपोर्ट 2016 (HDR–2016) में भारत ने 188 देशों की सूची में 131वाँ स्थान प्राप्त किया है।
- मानव विकास रिपोर्ट (HDR) तीन आधारों पर बनाई जाती है-
    - जीवन प्रत्याशा
    - शिक्षा का स्तर
    - जीवन का स्तर
- वर्ष 1990 में पाकिस्तानी अर्थशास्त्री महबूब-उल-हक ने HDI सूचकांक विकसित किया था। प्रो. अमर्त्य सेन भी इस सूचकांक के विकास में सहयोगी रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम और भारत (*United Nations Development Programme and India*)

यू.एन.डी.पी. संयुक्त राष्ट्र संघ का एक वैश्विक विकास कार्यक्रम है। यह गरीबी कम करने, आधारभूत ढाँचे के विकास और प्रजातांत्रिक प्रशासन को प्रोत्साहित करने का काम करता है। विकासशील देश होने के नाते भारत को विकास कार्यक्रमों में सहयोग एवं तकनीकी सहायता करने में यू.एन.डी.पी. ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संस्थागत क्षमता निर्माण को मज़बूत करने तथा गरीबी उन्मूलन करने सहित सतत् विकास लक्ष्यों में यू.एन.डी.पी. भारत में विभिन्न योजनाओं को समर्थन दे रहा है। भारत भी संयुक्त राष्ट्र कोष में निरंतर अपनी भागीदारी करता आ रहा है। भारत संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरणीय, आतंकनिरोध एवं विकासात्मक कार्यक्रमों में अपनी भागीदारी निरंतर बढ़ा रहा है।

भारत द्वारा यू.एन.ओ.एस.एस.सी. (United Nations Office for South–South Co–operation: UNOSSC) के सहयोग से विकासशील देशों में सतत् विकास परियोजनाओं के लिये एक निधि की स्थापना की गई है। 8 जून, 2017 को न्यूयॉर्क में 'भारत–संयुक्त राष्ट्र विकास भागीदारी निधि (India–UN Development Partnership Fund) की शुरुआत हुई है। यह विकासशील देशों में 'सतत् विकास लक्ष्य–2030' (SDG–2030) को प्राप्त करने में योगदान देने के लिये राष्ट्रीय परियोजनाओं हेतु वित्तीयन करेगा। मानव विकास रिपोर्ट के माध्यम से भारत को विकास लक्ष्य प्राप्त करने में यू.एन.डी.पी. सहयोग करता है।

खाद्य एवं कृषि संगठन (*Food and Agriculture Organization–FAO*)

- 'खाद्य एवं कृषि संगठन' संयुक्त राष्ट्र संघ की विशिष्ट एजेंसी है, जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भूख (Hunger) की समस्या से निपटने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

- संगठन का मुख्यालय इटली के रोम में स्थित है। संगठन में वर्तमान में 194 सदस्य देश, एक सदस्य संगठन यूरोपीय संघ एवं 2 अन्य पर्यवेक्षक सदस्य देश शामिल हैं।
- औपचारिक रूप से FAO की स्थापना 16 अक्टूबर, 1945 को कनाडा के क्यूबेक में FAO सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन के दौरान की गई।
- खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा निम्नलिखित तीन लक्ष्य निर्धारित किये गए हैं-
  - ◆ भूख, खाद्य असुरक्षा एवं कुपोषण का उन्मूलन।
  - ◆ गरीबी उन्मूलन तथा सभी के लिये आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति को बढ़ावा देना।
  - ◆ वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों (Future Generations) के लाभ के लिये प्राकृतिक संसाधनों, जैसे- भूमि, जल, वायु एवं आनुवंशिक संसाधनों का संपोषणीय प्रबंधन एवं उपयोग।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन *(International Labour Organization – ILO)*

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की उत्पत्ति 1919 के वर्साय की संधि (Treaty of Versailles) द्वारा हुई थी। इस संधि द्वारा प्रथम विश्वयुद्ध के अंत की घोषणा की गई थी। वर्तमान में 187 देश इसके सदस्य हैं। इस संगठन का मुख्यालय जेनेवा (स्विट्ज़रलैंड) में है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का 'संविधान' शांति सम्मेलन द्वारा गठित श्रम आयोग द्वारा जनवरी से अप्रैल 1919 के बीच तैयार किया गया था। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन एक त्रिपक्षीय संगठन (Tripartite Organization), है जो अपनी कार्यकारी संस्थाओं में सरकारों, नियोक्ताओं एवं कामगारों के प्रतिनिधियों को एक साथ लाता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना सुरक्षा, मानवीय, राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों से की गई थी। इसकी स्थापना में मानवता, न्याय के साथ विश्व में स्थायी शांति की भावना प्रेरक तत्त्व थे। शांति की स्थापना में सामाजिक न्याय (Social Justice) की महत्ता को स्वीकार किया गया था। यह वह समय था जब औद्योगिक देशों में श्रमिकों का शोषण हो रहा था। उस समय आर्थिक अंतर्निर्भरता की समझ भी विकसित हो रही थी और यह प्रयास किया जा रहा था कि बाज़ार के लिये प्रतिस्पर्द्धा कर रहे देशों में श्रमिकों के लिये कार्य की परिस्थितियाँ समान हों।

अधिदेश *(Mandate)*

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का प्रमुख उद्देश्य श्रमिकों की कार्य दशा में सुधार करना तथा उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाना एवं उनके लिये पूर्ण रोज़गार की प्राप्ति करना है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन सामाजिक न्याय तथा अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त मानव अधिकारों एवं श्रम अधिकारों को बढ़ावा देता है। यह संपन्नता के लिये श्रमिकों के बीच शांति को अनिवार्य मानता है। यह सभी पुरुषों एवं महिलाओं के लिये उचित कार्य दशाओं एवं आय को बढ़ावा देने का कार्य करता है। यह मज़दूरों के लिये उत्पादक रोज़गार को प्रोत्साहित करता है। यह अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों द्वारा उद्योगों में कार्य के घंटे, बेरोज़गारी, मातृत्व सुरक्षा, महिलाओं द्वारा रात्रि कार्य, न्यूनतम उम्र तथा उद्योगों में युवाओं द्वारा रात्रि कार्य जैसे विषयों पर अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Standard) तय करता है। यह उनके संबंध में अनुशंसा करता है एवं तकनीकी सहायता प्रदान करता है। यह सरकारों के लिये रोज़गार प्रोत्साहन, मानव संसाधन विकास, सामाजिक संस्थाओं का विकास, ग्रामीण विकास, लघु उद्योग, सामाजिक सुरक्षा, औद्योगिक सुरक्षा के क्षेत्र में विशेषज्ञ मिशन (Expert Mission) तथा अध्येतावृत्ति कार्यक्रम (Fellowship Programme) की सुविधा प्रदान करता है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के एक निर्णय के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन कृषि क्षेत्र के लिये भी कार्य दशाओं का विनियमन कर सकता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम *(United Nations Environment Programme)*

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, स्टॉकहोम (स्वीडन) में हुए 1972 के मानव पर्यावरण संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (United Nations Conference on Human Environment) के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया था। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का मुख्यालय नैरोबी (केन्या) में है।

अधिदेश (*Mandate*)

इस संगठन का उद्देश्य मानव पर्यावरण को प्रभावित करने वाले सभी मामलों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्रोत्साहित करना है, जिससे कि पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति सरकारों को पर्याप्त ध्यान दिलाया जा सके। पर्यावरणीय ज्ञान की प्राप्ति मूल्यांकन एवं विनिमय इसके अन्य उद्देश्य हैं। यह संगठन तकनीकी एवं सामान्य सूचनाओं के अलावा उत्प्रेरक के रूप में भी कार्य करता है। यह 1975 में स्थापित वैश्विक पर्यावरणीय निगरानी व्यवस्था (Global Environmental Monitoring System) के अंतर्गत विश्व की पारिस्थितिकी, जल-प्रदूषण तथा उष्णकटिबंधीय वनों से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराता है। इनसे संबंधित जानकारी के लिये एक तकनीकी नेटवर्क विकसित किया गया है। 1985 में स्थापित ग्लोबल रिसोर्स इन्फार्मेशन डाटाबेस (Global Resource Information Database – GRID) आँकड़ों को उपयोगी सूचनाओं में बदलता है। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम संयुक्त राष्ट्र से जुड़ी संस्थाओं, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, राष्ट्रीय सरकारों, गैर-सरकारी संगठनों, निजी क्षेत्र एवं सिविल सोसाइटी के साथ मिलकर कार्य करता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम मुख्यतः निम्नलिखित कार्य करता है-

- वैश्विक, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय पर्यावरणीय दशाओं एवं प्रवृत्तियों का आकलन।
- अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय पर्यावरण तंत्र विकसित करना।
- पर्यावरण के कुशल प्रबंधन हेतु संस्थाओं को मज़बूत बनाना।
- सतत् विकास के लिये ज्ञान एवं तकनीकी स्थानांतरण हेतु सुविधा प्रदान करना।
- सिविल सोसाइटी एवं निजी क्षेत्रों में नई प्रकार की सहभागिता एवं मानसिकता का विकास करना।

अफ्रीका महाद्वीप में अवस्थित होने के कारण संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम विकासशील देशों द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में सामना की जा रही चुनौतियों को अच्छी तरह समझ सकता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम पर्यावरण से संबंधित बैठकों एवं सम्मेलनों का भी आयोजन करता है। इसमें ओज़ोन परत का क्षरण, विलुप्तप्राय प्रजातियों, रसायनों, हानिकारक अवशेषों (Hazardous Wastes) का एक देश से दूसरे देश में स्थानांतरण तथा स्थायी प्रदूषकों से संबंधित सम्मेलन भी शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम पर्यावरण संरक्षण के लिये अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं विनियमन को अपनाता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की देखरेख में जलवायु परिवर्तन संबंधी संयुक्त राष्ट्र रूपरेखा अभिसमय (The United Nation Framework Convention On Climate Change) 1994 से प्रभावी हुआ।

वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की प्राथमिकताओं में जलवायु परिवर्तन, स्वच्छ जल, निर्वनीकरण (Deforestation), मरुस्थलीकरण (Desertification) को रोकना, वन्य पशुओं एवं पौधों का संरक्षण, हानिकारक अपशिष्टों का प्रबंधन, विषाक्त रसायनों का प्रबंधन, समुद्र एवं तटीय क्षेत्रों का संरक्षण, मानव स्वास्थ्य पर जलवायु का प्रभाव एवं जैव तकनीक शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम प्राकृतिक संसाधनों के कुप्रबंधन को बेहतर बनाने वाली शिक्षा व्यवस्था का भी समर्थन करता है। यह विकास योजनाओं को पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील बनाने का भी प्रयास करता है। फिलहाल संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम वैश्विक तापन (Global Warming) तथा ओज़ोन क्षरण (Ozone Depletion) के प्रति पर्याप्त ध्यान दे रहा है। इन दो अंतर्संबंधित समस्याओं के समाधान हेतु संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम ने कई सम्मेलनों का आयोजन किया है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम समय-समय पर पर्यावरण संबंधी रिपोर्ट तथा वैश्विक पर्यावरण परिदृश्य (Global Environment Outlook) भी प्रकाशित करता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) ने मार्च 2016 में ग्लोबल ट्रेंड्स इन रिन्यूएबल एनर्जी इन्वेस्टमेंट 2016 (अक्षय ऊर्जा निवेश 2016 में वैश्विक रुझान) जारी किया। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2015 में अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में कुल 286 मिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश हुआ जो 2011 के पिछले रिकॉर्ड की तुलना में करीब 3% अधिक है। सौर, पवन और अन्य नवीकरणीय ऊर्जा क्षमताओं में किये गए रिकॉर्ड निवेश के आधे से भी कम निवेश कोयला और गैस आधारित बिजली उत्पादन में हुआ।

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग *(United Nations High Commissions for Refugees – UNHCR)*

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग कार्यालय की स्थापना संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव द्वारा दिसंबर 1950 में की गई थी। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य शरणार्थियों का संरक्षण, आपातकालीन राहत, पुनर्वास सहायता तथा शरणार्थी समस्याओं का स्थायी समाधान करना था। द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप यूरोपीय देशों में बड़ी संख्या में शरणार्थियों का पुनर्वास करना, इसका शुरुआती दायित्व था।

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग का मुख्यालय जेनेवा (Geneva) में स्थित है। इसके प्रशासन के लिये आवश्यक वित्तीयन सीमित रूप से संयुक्त राष्ट्र, गैर-सरकारी संगठनों तथा लोगों के स्वैच्छिक सहयोग से किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग को 1954 एवं 1981 में शांति का नोबेल पुरस्कार दिया जा चुका है।

अधिदेश (Mandate)

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी एजेंसी का अधिदेश, 1950 के यूएनएचसीआर संविधि द्वारा परिभाषित किया गया है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग यह प्रयास करता है कि शरणार्थियों के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानकों (Internationally Accepted Standards) के अनुसार आचरण हो। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग ने 1951 के शरणार्थियों की स्थिति संबंधी संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (United Nations Conventions On Status of Refugees) को अपनाने हेतु अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को प्रोत्साहित किया था। 1967 का प्रोटोकॉल, शरणार्थियों के साथ व्यवहार करने के न्यूनतम मानक तथा उन्हें कुछ निश्चित सामाजिक, आर्थिक अधिकारों, कानूनी दर्जा तथा वैश्विक तौर पर लागू होने वाली शरणार्थी की परिभाषा स्पष्ट करता है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग ने इसे भी अपनाने के लिये प्रोत्साहित किया था। यह सामग्री सहायता कार्यक्रम का भी प्रावधान करता है। इसके अंतर्गत आपातकालीन राहत के तौर पर खाना, चिकित्सा, कपड़े आदि मुहैया कराए जाते हैं। संयुक्त राष्ट्र की अन्य एजेंसियाँ, सरकारें, क्षेत्रीय संस्थाएँ तथा संगठन राहत उपलब्ध कराने के कार्य में संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग की मदद करते हैं। वर्तमान समय में शरणार्थियों से जुड़ी समस्याओं में अत्यधिक वृद्धि हो रही है जिसके कारण इसे शिक्षा, रोज़गार, आवास आदि से जुड़े क्षेत्रों में अपनी गतिविधियों को सीमित करना पड़ा है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग के आंतरिक संघर्ष से प्रभावित लोगों की सहायता हेतु अपनी विशेषज्ञता का प्रयोग करने को कहा जा सकता है। इस संस्था ने राज्यविहीन लोगों (Stateless Peoples) की सहायता करने तक अपनी भूमिका का विस्तार किया है। बड़ी संख्या में उपेक्षित लोग अपने मूलभूत अधिकारों का भी उपयोग नहीं कर पाते हैं क्योंकि उनके पास किसी देश की नागरिकता नहीं होती है।

संयुक्त राष्ट्र बाल आपात कोष *(The United Nations Children's Emergency Fund – UNICEF)*

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् बच्चों को राहत पहुँचाने के लिये संयुक्त राष्ट्र महासभा के एक प्रस्ताव द्वारा 1946 में यूनिसेफ की स्थापना की गई थी। यूनिसेफ का मुख्यालय न्यूयॉर्क (अमेरिका) में है।

अधिदेश (Mandate)

यूनिसेफ को बाल अधिकारों के संरक्षण की वकालत करने, बालकों की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद करने तथा उनकी पूर्ण क्षमताओं का उपयोग करने के लिये उन्हें अवसर उपलब्ध कराने का अधिदेश प्राप्त है। यूनिसेफ, बाल अधिकारों से संबंधित अभिसमय से मार्गदर्शन प्राप्त करता है तथा बाल अधिकारों को मान्यता दिलाने को अपना स्थायी नैतिक सिद्धांत मानता है। यह इस बात पर बल देता है कि बच्चों की जिंदगी, संरक्षण एवं उनका विकास सार्वभौमिक अनिवार्यता है। यह मानव विकास का अभिन्न भाग है। यह राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं भौतिक संसाधनों को गतिशील बनाने का कार्य करता है ताकि देश बच्चों एवं उनके परिवार के लिये उपयुक्त नीतियों एवं कल्याणकारी सेवाओं को उपलब्ध कराने हेतु आवश्यक क्षमता निर्माण कर सके। यूनिसेफ युद्ध पीड़ित, आपदा प्रभावित, अत्यधिक गरीब, किसी प्रकार के हिंसा एवं शोषण से ग्रसित या किसी प्रकार की विकलांगता से प्रभावित बच्चों का संरक्षण सुनिश्चित करता है। यह बच्चों के अधिकारों के संरक्षण के लिये अविलंब प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

इसका उद्देश्य विशेषकर कम विकसित देशों को स्थायी बाल स्वास्थ्य एवं कल्याण सेवा (Child Health and Wel Service) शुरू करने में मदद करना है। यूनिसेफ लगभग 150 देशों में बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण एवं शिक्षा के क्षे सहायता देता है। यह रोग नियंत्रण कार्यक्रमों, डे केयर सेंटर, स्वास्थ्य केंद्र, विद्यालय भोजन योजना के अलावा अन्य परियोजना के लिये सहायता देता है। यह नर्सिंग तथा शिक्षण जैसे रोज़गार के लिये आवश्यक प्रशिक्षण हेतु अनुदान भी उपलब्ध करा है। बच्चों को सहायता देने के लिये यूनिसेफ को 1965 में शांति का नोबेल पुरस्कार भी दिया गया था। यूनिसेफ पूर्ण सहायता पर निर्भर है। इसका तीन-चौथाई वित्तीयन विभिन्न सरकारों से होता है जबकि एक-तिहाई विभिन्न संगठनों व्यक्तियों से होता है। वर्तमान में यूनिसेफ विकासशील तथा सबसे कम विकसित देशों के बच्चों एवं माताओं के जीवन स्त को सुधारने के प्रति लक्षित विकास गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित कर रहा है। बाल स्वास्थ्य एवं पोषण की स्थिति में सुधा के लिये चार प्राथमिक स्वास्थ्य तकनीकों के द्वारा चार रणनीतियों का विकास किया गया है। इसमें ओरल रिहाइड्रेशन थैरे (Oral Rehydration Therapy) का प्रयोग, रोगों से बचाव के लिये बच्चों का प्रतिरक्षण, स्तनपान को बढ़ावा तथा बाल विकास चार्ट की शुरुआत (Employment of Child Growth Charts) शामिल हैं। यह संगठन विश्व का सबसे बड़ा 'टीका' आपूर्तिकर्त्ता (Vaccine Supplier) है। यह विश्व स्वास्थ्य संगठन के साथ मिलकर कार्य करता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1989 में बाल अधिकारों से संबंधित समझौता अपनाने को प्रोत्साहित करने वाला यह प्रमुख संगठन था। यह समझौता 1990 से प्रभावी हुआ। यूनिसेफ बालकों के संरक्षण एवं विकास को प्रोत्साहन देने के लिये अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का भी आयोजन करता है। यूनिसेफ विश्व के बच्चों की स्थिति संबंधी वार्षिक रिपोर्ट भी ज़ारी करता है।

यूनिसेफ द्वारा जारी 'स्टेट ऑफ द वर्ल्ड चिल्ड्रेन रिपोर्ट 2017' की थीम है-'डिजिटल विश्व में बच्चे'। इस रिपोर्ट के अनुसार बच्चों का 'डिजिटल फुटप्रिन्ट' तेजी से बढ़ रहा है तथा इन्टरनेट पर बच्चों की उपस्थिति में वृद्धि हुई है। सुविधाहीन बच्चों के विकास, सीखने की प्रक्रिया तथा सामाजीकरण में डिजिटल मंच महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए अनेक अवसर प्रदान कर सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन *(International Maritime Organization – IMO)*

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन की स्थापना 1948 में जेनेवा में संयुक्त राष्ट्र समुद्री सम्मेलन के दौरान हुए एक समझौते के तहत अंतरसरकारी समुद्री वार्ता संगठन के रूप में की गई थी। यह समझौता 1958 से प्रभावी हुआ। मई 1982 में इसका वर्तमान नाम अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन अपनाया गया था। वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन के 173 सदस्य हैं, जबकि तीन सहभागी सदस्य हैं। इसका मुख्यालय लंदन में है।

अधिदेश *(Mandate)*

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन संयुक्त राष्ट्र की एक विशिष्ट एजेंसी है, जो नौपरिवहन (Shipping) की सुरक्षा तथा जहाज़ों द्वारा उत्पन्न समुद्री प्रदूषण रोकने का कार्य करती है। यह संगठन अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में शामिल नौपरिवहन को प्रभावित करने वाले सभी प्रकार के तकनीकी मामलों तथा सरकारी विनियमन हेतु सरकारों के बीच सहयोग के लिये तंत्र (Machinery) उपलब्ध कराता है। समुद्री सुरक्षा, नौवहन क्षमता एवं समुद्री प्रदूषण तथा अन्य समुद्री गतिविधियों से संबंधित कानूनी मामलों में उच्चतम व्यावहारिक स्वीकार्य मानकों को प्रोत्साहित करता है। अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये बैठक तथा अंतर्राष्ट्रीय समुद्री समझौते के लिये प्रारूप भी तैयार करता है। समुद्री मामलों को विनियमित करने के संबंध में यह मुख्य केंद्र के रूप में कार्य करता है।

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी *(International Atomic Energy Agency – IAEA)*

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की स्थापना परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग करने के लिये 1957 में की गई थी। तब इसे शांति के लिये परमाणु (Atoms for Peace) संगठन के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत सृजित किया गया था। सितंबर 2017 तक अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के सदस्य देशों की संख्या 169 है। इसका मुख्यालय वियना (ऑस्ट्रिया) में है।

अधिदेश (*Mandate*)

यह एजेंसी परमाणु तकनीकों के शांतिपूर्ण एवं सुरक्षित प्रयोग के लिये विश्व के अपने सदस्यों एवं अन्य भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करती है। अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी विश्वभर में शांति, स्वास्थ्य एवं संपन्नता के लिये परमाणु ऊर्जा के योगदान को बढ़ावा देती है। अपने क्षेत्राधिकार के अधीन यह सुनिश्चित करती है कि इसके द्वारा उपलब्ध कराई गई सहायता या इसके अनुरोध, नियंत्रण या पर्यवेक्षण के अधीन इसके द्वारा उपलब्ध कराई गई सहायता का सैनिक उद्देश्यों के लिये उपयोग न किया जाए। एजेंसी अपनी सामग्रियों (Materials) के भंडारण एवं संरक्षण के लिये उत्तरदायी है। एजेंसी यह सुनिश्चित करती है कि इन सामग्रियों पर मौसम का खतरनाक प्रभाव न पड़े, इनका अनधिकृत रूप से स्थानांतरण न हो, क्षति, विध्वंस या तोड़-फोड़ न हो, बलपूर्वक अधिग्रहण न हो। अपने नियंत्रणाधीन विखंडनीय पदार्थों के संग्रहण में एजेंसी इस बात को सुनिश्चित करती है कि इनका भौगोलिक वितरण इस प्रकार से हो कि ऐसी सामग्रियों का एक देश या क्षेत्र में अत्यधिक मात्रा में संग्रहण न हो। इसके अलावा एजेंसी सामग्रियों के संग्रहण, प्राप्ति एवं विकास के लिये संयंत्र की स्थापना, शारीरिक सुरक्षा मानक, पर्याप्त स्वास्थ्य एवं सुरक्षा मानक, प्राप्त की गई सामग्रियों के विश्लेषण एवं प्रभावी करने के लिये प्रयोगशालाओं पर नियंत्रण, पूर्ववर्ती कर्मचारियों के लिये आवास एवं प्रशासनिक सुविधाएँ उपलब्ध कराती है। यह विश्व भर में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिये अनुसंधान को प्रोत्साहन, सहायता तथा अनुप्रयोग को प्रोत्साहित करती है। यदि अनुरोध किया गया तो यह सेवा निष्पादन की सुरक्षा, एक सदस्य देश द्वारा दूसरे सदस्य देश को दी जा रही सुविधाओं के संबंध में किसी कार्य को करने या अनुसंधान में या परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग में मध्यस्थ या मध्यवर्ती संस्था का कार्य करती है। एजेंसी की संविधि के अनुरूप यह अनुसंधान की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये सामग्री, सेवा, यंत्र, सुविधाओं को उपलब्ध कराती है। विद्युत उत्पादन के साथ-साथ परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिये प्रयोग का प्रावधान करती है तथा विश्व के अविकसित भागों की आवश्यकताओं पर भी विशेष ध्यान देती है।

एजेंसी परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिये वैज्ञानिक एवं तकनीकी सूचनाओं के विनिमय को बढ़ावा देती है एवं परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिये वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञों के विनिमय को प्रोत्साहित करती है। अपने आधिकारिक कार्यों को करने हेतु आवश्यक यंत्रों, सुविधाओं, संयंत्रों की प्राप्ति एवं स्थापना करती है। लेकिन एजेंसी ऐसा तभी करती है, जब संबंधित क्षेत्रों में उपलब्धता अपर्याप्त हो या ऐसी शर्तों पर मिलती हो जिन्हें संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है। एजेंसी संयुक्त राष्ट्र के शांति एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने वाले उद्देश्यों एवं सिद्धांतों के अनुसार अपनी गतिविधियों का संचालन करती है। यह विश्वव्यापी निरस्त्रीकरण या ऐसी नीतियों के अनुसरण में अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को लागू करने का प्रयास करती है। यह अपने संसाधनों का आवंटन इस प्रकार करती है कि इसका विश्व के सभी भागों में यथासंभव समान लाभ प्राप्त हो। इसमें विश्व के कम विकसित क्षेत्रों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है। यह अपने कार्यकलापों की वार्षिक रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र महासभा को सौंपती है। यदि एजेंसी की गतिविधियों से संबंधित प्रश्न सुरक्षा परिषद के दायरे में आते हों तो ऐसी स्थिति में रिपोर्ट सुरक्षा परिषद को भी सौंपी जा सकती है। एजेंसी आर्थिक एवं सामाजिक परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंगों के अंतर्गत आने वाले मामलों से संबंधित रिपोर्ट इन्हीं संगठनों को सौंपती है। एजेंसी अपने कार्यों के निर्वहन में किसी सदस्य देश को अपनी संविधि के विरुद्ध राजनीतिक, आर्थिक, सैन्य या अन्य मामलों में सहायता नहीं करती है।

विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (*World Intellectual Property Organization–WIPO*)

विश्व बौद्धिक संपदा संगठन संयुक्त राष्ट्र की विशेषीकृत एजेंसी है। इसका गठन सृजनात्मकता एवं नवप्रवर्तन हेतु बौद्धिक संपदा (पेटेंट, कॉपीराइट, ट्रेडमार्क, डिज़ाइन) आदि के विकास और संरक्षण पर बल देने के लिये किया गया है। इसकी स्थापना 1967 में की गई थी तथा वर्तमान में इसके सदस्य देशों की संख्या 191 है। संगठन का मुख्यालय जेनेवा (स्विट्ज़रलैंड) में है।

अधिदेश (*Mandate*)

विश्व बौद्धिक संपदा संगठन विकास एवं अंतर्राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा व्यवस्था को सेवाओं, विधियों, आधारभूत संरचना एवं क्षमता विकास के माध्यम से प्रोत्साहित करता है। सेवाओं के अंतर्गत संगठन ऐसी व्यवस्था का संचालन करता है जिसमें

पेटेंट, ट्रेडमार्क, डिज़ाइन, मूल उत्पत्ति की पदवी (Appellation of Origin) तथा बौद्धिक संपदा विवादों का समाध जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। यह प्रक्षेत्र नाम विवाद समाधान (Domain name dispute Resolution) तथा अ वर्गीकरण का भी कार्य करता है। विधि के अंतर्गत संगठन समाज की बढ़ती ज़रूरतों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं बौ संपदा ढाँचा का विकास करता है।

आधारभूत संरचना के अंतर्गत ज्ञान की सहभागिता, बौद्धिक संपदा लेन-देन का सरलीकरण जिसमें सूचना-विनि लिये यंत्र एवं डाटाबेस को मुक्त करना शामिल होता है। विकास के अंतर्गत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने क्षमता निर्माण को बढ़ावा देता है। विश्व बौद्धिक संपदा संगठन आपसी समझ बढ़ाने तथा बौद्धिक संपदा अधिका विश्वव्यापी सम्मान दिलाने के लिये सदस्य देशों एवं अन्य भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करता है। संगठन औ विश्लेषण एवं सांख्यिकी आँकड़े भी उपलब्ध कराता है। संगठन वैश्विक चुनौतियों के समाधान के लिये बौद्धिक आधारित समाधान का प्रयास करता है।

सामान्य रूप से बौद्धिक संपदा (Intellectual Property-IP) में वाणिज्य-व्यापार में उपयोग किये जाने वाले साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य, प्रतीक, नाम एवं डिज़ाइन जैसी चीज़ें शामिल होती हैं। बौद्धिक संपदा को दो भागों बाँटा जाता है। औद्योगिक संपदा जिसमें खोज (Inventions), पेटेंट, ट्रेडमार्क, औद्योगिक डिज़ाइन, स्रोत का भौगोलि संकेतक (Geographical Indicator of Source) तथा कॉपीराइट जिसमें साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य जैसे आरे (Drawing), पेंटिंग, फोटोग्राफ, मूर्तिकला (Sculpture) तथा वास्तुकला डिज़ाइन (Architectural Design) शामिल होते हैं कॉपीराइट के अंतर्गत प्रदर्शन करने वाले कलाकार, रिकॉर्डिंग करने वाले फोनोग्राम्स (Phonograms) के निर्माता या उत्पाद तथा रेडियो एवं टेलीविज़न कार्यक्रमों के प्रसारक के कार्य शामिल होते हैं।

संगठन निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति करना चाहता है-

- बौद्धिक संपदा के लिये अंतर्राष्ट्रीय मानक रूपरेखा का संतुलित विकास करना।
- प्रमुख वैश्विक बौद्धिक संपदा सेवाओं का प्रावधान करना।
- विकास के लिये बौद्धिक संपदा के प्रयोग की सुविधा प्रदान करना।
- वैश्विक बौद्धिक संपदा आधारभूत संरचना का विकास करना एवं समन्वय स्थापित करना।
- बौद्धिक संपदा सूचना एवं विश्लेषण के लिये वैश्विक संदर्भ स्रोत (World Reference Source) के रूप में क करना।
- बौद्धिक संपदा को सम्मान दिलाने के लिये अंतर्राष्ट्रीय सहयोग सुनिश्चित करना।
- वैश्विक नीतिगत मुद्दों के संदर्भ में बौद्धिक संपदा संबंधी मामलों को हल करना।
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन, सदस्य राज्यों एवं अन्य संबंधित भागीदारों के प्रति उत्तरदायी संचार व्यवस्था (Responsi Communication Interface) सुनिश्चित करना।
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन द्वारा कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में सक्षम बनाने के लिये एक सक्षम प्रशासनिक वित्तीय रूप से सहायक संरचना का निर्माण करना।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- जी-4 समूह की स्थायी सदस्यता के विरोध में सामूहिक रूप से आवाज़ उठाने वाले समूह को 'कॉफी क्लब' नाम दिया गया है। इसे UFC (यूनाइटिंग फॉर कन्शेंसस) भी कहा जाता है। इसमें शामिल देश हैं- इटली, पाकिस्ता मैक्सिको, मिस्र, स्पेन, तुर्की, कनाडा इत्यादि।
- अक्टूबर, 2017 में संयुक्त राज्य अमेरिका एवं इज़राइल ने यूनेस्को की सदस [illegible] की घोषणा की है।

पेटेंट, ट्रेडमार्क, डिज़ाइन, मूल उत्पत्ति की पदवी (Appellation of Origin) तथा बौद्धिक संपदा विवादों का समाधान करने जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। यह प्रक्षेत्र नाम विवाद समाधान (Domain name dispute Resolution) तथा अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण का भी कार्य करता है। विधि के अंतर्गत संगठन समाज की बढ़ती ज़रूरतों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं बौद्धिक संपदा ढाँचा का विकास करता है।

आधारभूत संरचना के अंतर्गत ज्ञान की सहभागिता, बौद्धिक संपदा लेन-देन का सरलीकरण जिसमें सूचना-विनिमय के लिये यंत्र एवं डाटाबेस को मुक्त करना शामिल होता है। विकास के अंतर्गत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिये क्षमता निर्माण को बढ़ावा देता है। विश्व बौद्धिक संपदा संगठन आपसी समझ बढ़ाने तथा बौद्धिक संपदा अधिकारों को विश्वव्यापी सम्मान दिलाने के लिये सदस्य देशों एवं अन्य भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करता है। संगठन आर्थिक विश्लेषण एवं सांख्यिकी आँकड़े भी उपलब्ध कराता है। संगठन वैश्विक चुनौतियों के समाधान के लिये बौद्धिक संपदा आधारित समाधान का प्रयास करता है।

सामान्य रूप से बौद्धिक संपदा (Intellectual Property-IP) में वाणिज्य-व्यापार में उपयोग किये जाने वाले खोज, साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य, प्रतीक, नाम एवं डिज़ाइन जैसी चीज़ें शामिल होती हैं। बौद्धिक संपदा को दो भागों में बाँटा जाता है। औद्योगिक संपदा जिसमें खोज (Inventions), पेटेंट, ट्रेडमार्क, औद्योगिक डिज़ाइन, स्रोत का भौगोलिक संकेतक (Geographical Indicator of Source) तथा कॉपीराइट जिसमें साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य जैसे आरेख (Drawing), पेंटिंग, फोटोग्राफ, मूर्तिकला (Sculpture) तथा वास्तुकला डिज़ाइन (Architectural Design) शामिल होते हैं। कॉपीराइट के अंतर्गत प्रदर्शन करने वाले कलाकार, रिकॉर्डिंग करने वाले फोनोग्राम्स (Phonograms) के निर्माता या उत्पादक तथा रेडियो एवं टेलीविज़न कार्यक्रमों के प्रसारक के कार्य शामिल होते हैं।

संगठन निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति करना चाहता है-

- बौद्धिक संपदा के लिये अंतर्राष्ट्रीय मानक रूपरेखा का संतुलित विकास करना।
- प्रमुख वैश्विक बौद्धिक संपदा सेवाओं का प्रावधान करना।
- विकास के लिये बौद्धिक संपदा के प्रयोग की सुविधा प्रदान करना।
- वैश्विक बौद्धिक संपदा आधारभूत संरचना का विकास करना एवं समन्वय स्थापित करना।
- बौद्धिक संपदा सूचना एवं विश्लेषण के लिये वैश्विक संदर्भ स्रोत (World Reference Source) के रूप में कार्य करना।
- बौद्धिक संपदा को सम्मान दिलाने के लिये अंतर्राष्ट्रीय सहयोग सुनिश्चित करना।
- वैश्विक नीतिगत मुद्दों के संदर्भ में बौद्धिक संपदा संबंधी मामलों को हल करना।
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन, सदस्य राज्यों एवं अन्य संबंधित भागीदारों के प्रति उत्तरदायी संचार व्यवस्था (Responsive Communication Interface) सुनिश्चित करना।
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन द्वारा कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में सक्षम बनाने के लिये एक सक्षम प्रशासनिक एवं वित्तीय रूप से सहायक संरचना का निर्माण करना।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- जी-4 समूह की स्थायी सदस्यता के विरोध में सामूहिक रूप से आवाज़ उठाने वाले समूह को 'कॉफी क्लब' का नाम दिया गया है। इसे UFC (यूनाइटिंग फॉर कन्शंसस) भी कहा जाता है। इसमें शामिल देश हैं- इटली, पाकिस्तान, मैक्सिको, मिस्र, स्पेन, तुर्की, कनाडा इत्यादि।
- अक्टूबर, 2017 में संयुक्त राज्य अमेरिका एवं इज़राइल ने यूनेस्को की सदस्यता त्यागने [illegible] ोषणा की है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. इनमें से कौन जी-4 समूह (संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार संबंधी) में शामिल नहीं है?
   (1) भारत (2) ब्राज़ील
   (3) जापान (4) इटली

2. निम्न में से कौन 'कॉफी क्लब' के सदस्य हैं?
   (i) मिस्र (ii) इटली
   (iii) पाकिस्तान (iv) जर्मनी
   सही उत्तर का चयन करें-
   (1) (i), (ii) और (iv) (2) (i), (ii) और (iii)
   (3) (i), (iii) और (iv) (4) (ii), (iii), और (iv)

3. 2017 में किस भारतीय को अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय का जज चुना गया है?
   (1) बी.एन.राव (2) नागेंद्र सिंह
   (3) दिनकर लाल भण्डारी(4) दलवीर भंडारी

4. संयुक्त राष्ट्र महासभा के वर्तमान अध्यक्ष हैं-
   (1) जियांग जेमिन (2) कोफी अन्नान
   (3) मिरोस्लाव लैजक (4) एंटोनियो गुतेरस

5. अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय का मुख्यालय कहाँ स्थित है?
   (1) न्यूयॉर्क (2) वाशिंगटन
   (3) हेग (4) जिनेवा

6. किस देश ने 2017 में यूनेस्को की सदस्यता त्यागने की घोषणा की है?
   (1) इटली (2) जर्मनी
   (3) कनाडा (4) संयुक्त राज्य अमेरिका

उत्तरमाला

1. (4) 2. (2) 3. (4) 4. (3) 5. (3) 6. (4)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15-20 शब्दों में दीजिये)

1. संयुक्त राष्ट्र के प्रमुख अंग कौन-कौन से हैं?
2. संयुक्त राष्ट्र महासभा का परिचय दीजिये।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50-50 शब्दों में दीजिये)

1. संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की प्रासंगिकता क्या है?
2. अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय क्या है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की दावेदारी के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करें।

2. संयुक्त राष्ट्र के समक्ष वर्तमान में वैश्विक चुनौतियाँ कौन-कौन सी हैं?
3. संयुक्त राष्ट्र में भारत की स्थायी सदस्यता प्राप्त करने के क्रम में कौन-कौन सी बाधाएँ हैं?

अध्याय
4

क्षेत्रीय संगठन (Regional Organisation)

क्षेत्रीय संगठन ऐसे देशों का समूह है जो किसी साझे उद्देश्य की प्राप्ति हेतु रणनीति बनाने एवं कार्य करने के लिये साथ आते हैं। इन उद्देश्यों में मुख्यत: आर्थिक, राजनीतिक, सामरिक एवं सुरक्षा संबंधी हित सम्मिलित होते हैं। क्षेत्रीय संगठन में मुख्यत: किसी एक (समान) भौगोलिक क्षेत्र के देश शामिल होते हैं, किंतु इसका स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय भी हो सकता है।

4.1 यूरोपीय संघ *(European Union)*

'यूरोपीय संघ' यूरोप महाद्वीप के 28 देशों का एक विशिष्ट आर्थिक एवं राजनीतिक संघ है, जो संपूर्ण यूरोप के ज़्यादातर हिस्सों को समाहित करता है। यूरोपीय संघ का मुख्यालय बेल्जियम के ब्रुसेल्स में स्थित है।

यूरोपीय संघ के 19 देशों द्वारा समान मुद्रा 'यूरो' (EURO) प्रयोग की जाती है। यूरो प्रयोगकर्त्ता देशों को सामूहिक रूप से 'यूरोज़ोन' के नाम से जाना जाता है। यूरोपीय संघ सामूहिक रूप से विश्व की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) के अनुसार 2016 में वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में यूरोपीय संघ की हिस्सेदारी 22.8 प्रतिशत है। वर्तमान में हम यूरोपीय संघ की जो व्यवस्था देख रहे हैं, उसका विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् यूरोपीय देशों के मध्य हुए विभिन्न समझौतों से हुआ है। यूरोपीय संघ के विकासक्रम को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है:-

पेरिस संधि *(1951)*

बेल्जियम, फ्राँस, जर्मनी, इटली, लक्ज़मबर्ग एवं नीदरलैंड के मध्य यूरोपीय कोयला एवं इस्पात समुदाय (European Coal and Steel Community- ECSC) के गठन हेतु संधि।

रोम संधि *(1957)*

इसके माध्यम से निम्नलिखित दो अन्य समुदायों का गठन किया गया-

- यूरोपीय आर्थिक समुदाय (European Economic Community)
- यूरोपीय परमाणु ऊर्जा समुदाय (European Atomic Energy Community)

ब्रुसेल्स संधि *(1965)*

इस संधि को विलय संधि के नाम से भी जाना जाता है। इसके माध्यम से तीनों यूरोपीय समुदायों के अंतर्गत कार्यरत विभिन्न संस्थाओं का विलय कर दिया गया तथा साझी संस्थाओं, जैसे- मंत्रिपरिषद, आयोग, संसद तथा न्यायालय के गठन का प्रावधान किया गया।

एकल यूरोप अधिनियम *(1986)*

रोम संधि में संशोधन के माध्यम से राजनीतिक एवं आर्थिक एकीकरण।

मैस्ट्रिच संधि *(1992)*

इसके माध्यम से तीनों यूरोपीय समुदायों को यूरोपीय संघ के रूप में स्थापित किया गया तथा यूरोपीय आर्थिक समुदाय को यूरोपीय समुदाय का नाम दिया गया। इसे 'यूरोपीय संघ संधि' (Treaty of European Union) के नाम से भी जाना जाता है।

एम्सटर्डम संधि *(1997)*

यूरोपीय संघ के सामाजिक उत्तरदायित्वों, जैसे- रोज़गार प्रोत्साहन, रहने एवं कार्य स्थल की स्थिति में सुधार, उचित सामाजिक सुरक्षा इत्यादि में वृद्धि की गई।

नीस संधि (2001)

यूरोपीय संघ के विस्तार हेतु रोम संधि एवं मैस्ट्रिच संधि में संशोधन।

लिस्बन संधि (2007)

इसे वर्ष 2007 में हस्ताक्षरित किया गया एवं 2009 में लागू किया गया। इसके माध्यम से यूरोपीय संघ को और अधिक पारदर्शी बनाने का प्रयास किया गया। यूरोपीय संघ के एक प्रमुख सदस्य देश ब्रिटेन ने संघ से बाहर होने का फैसला लिया है, जिसे ब्रेक्ज़िट (Brexit) नाम से जाना जा रहा है।

यूरोपीय संघ एवं भारत *(European Union and India)*

भारत एवं यूरोपीय संघ के मध्य वर्तमान संबंधों की शुरुआत 1964 ई. में हुई जिसमें बदलती वैश्विक परिस्थितियों तथा भारत की रक्षा रणनीतियों के कार्यान्वयन (नाभिकीय परीक्षण) के कारण उतार-चढ़ाव देखे गए। वर्तमान में यूरोपीय संघ भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है (भारत के 13.4% वैश्विक व्यापार के साथ) तथा भारत में 2000 से 2017 तक आए सकल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का 24% यूरोपीय संघ से प्राप्त हुआ।

भारत के लिये यूरोपीय संघ का महत्त्व *(Importance of European Union for India)*

'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम के अंतर्गत भारत को विनिर्माण हब बनाने की दिशा में यूरोपीय संघ के देश महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। यूरोपीय कंपनियाँ पूंजी, तकनीक तथा प्रबंधन कौशल प्रदान कर भारत के विनिर्माण हब बनने के सपने को यथार्थ रूप प्रदान करने में सहायता कर सकती है।

- फ्राँस, जर्मनी तथा इटली की दिग्गज कंपनियाँ भारत को रक्षा तकनीक के क्षेत्र में प्रभावी योगदान कर भारत की अन्य देशों पर हथियारों हेतु निर्भरता को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकती हैं।
- यूरोपीय देशों से भारत के 'स्मार्ट सिटी' कार्यक्रम के अंतर्गत भारतीय शहरों को स्थानीय विशेषताओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप नियोजित करने हेतु आवश्यक तकनीकी सहायता, पूंजी तथा विशेषज्ञता प्राप्त हो सकती है।
- विभिन्न यूरोपीय देशों के सहयोग से देश में कौशल विकास की प्रक्रिया को तीव्र कर रोज़गार अवसरों में विविधता लाई जा सकती है। इस दिशा में भारत सरकार ने जर्मनी तथा नीदरलैंड्स के साथ कुछ समझौते भी किये हैं।
- संयुक्त राज्य अमेरिका की 'अमेरिका प्रथम' तथा अन्य संरक्षणवादी नीतियों के प्रतिकूल प्रभाव से बचने के लिये यूरोपीय बाज़ार एक विकल्प सिद्ध हो सकता है।
- गंगा नदी स्वच्छता कार्यक्रम, अत्याधुनिक अवसंरचना विकास कार्यक्रम, मानव संसाधन विकास, स्वच्छ ऊर्जा तकनीक, अंतरिक्ष एवं महासागरीय शोध इत्यादि ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें यूरोपीय संघ भारत के लिये महत्त्वपूर्ण मददगार बनने में सक्षम है।

यूरोपीय संघ के लिये भारत का महत्त्व *(Importance of India for European Union)*

- विश्व की 17% जनसंख्या के साथ बड़ी युवा आबादी भारत में एक विशाल बाज़ार निर्मित करती है, जो यूरोपीय संघ की एक अनिवार्य आवश्यकता है।
- बदलते जनांकिकीय परिदृश्य में भारत का प्रशिक्षित युवा कार्यबल यूरोप में बढ़ती मानव संसाधन की कमी को दूर करने में सहायक हो सकता है।
- यूरोप भारतीय कृषि उत्पादों का बड़ी मात्रा में आयात करता है। भारत यूरोप की कृषि उत्पादन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है।
- यूरोपीय समुदाय में भारतीय संस्कृति के प्रति रुचि होने के कारण भारत योग प्रशिक्षण, आयुर्वेद शिक्षा तथा आध्यात्मिक पर्यटन हेतु आदर्श गंतव्य सिद्ध हो सकता है।
- भारतीय समुदाय में यूरोपीय संस्कृति के प्रति आकर्षण होने के कारण भारत यूरोपीय उपभोक्ता सामग्रियों हेतु बड़ा बाज़ार उपलब्ध कराता है।

यूरोप के देश तथा भारत बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के समर्थक हैं। मानवाधिकार, पर्यावरण संरक्षण तथा परमाणु ऐसे मुद्दे हैं जिनमें दोनों के विचार परस्पर सहयोगी हैं। आतंकवाद से निपटने हेतु वैश्विक रणनीतिक सहयोग यूरोपीय संघ दोनों के लिये आवश्यक है। जहाँ एक तरफ भारत यूरोपीय संघ हेतु बड़ा बाज़ार एवं कुशल मानव उपलब्ध करा पाने में सक्षम है, वहीं यूरोपीय संघ भारत में व्याप्त अशिक्षा, गरीबी तथा सामाजिक-आर्थिक समस्या रणनीतिक समाधान प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। यही नहीं, यूरोपीय संघ के अधिकांश देश भारत की वैश्विक छवि को सकारात्मक रूप में स्वीकार करते हैं, जो संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की दावेदारी को और बनाने में भी सहयोगी है।

4.2 गुटनिरपेक्ष आंदोलन *(Non-Aligned Movement)*

किसी भी देश द्वारा सामान्य या विशिष्ट तौर पर किसी अन्य देश या देशों के गुटों के साथ सैन्य समझौते से खुद अलग रखने की नीति को गुटनिरपेक्षता की नीति कहा जाता है। अपनी स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिये नव राष्ट्रों ने अमेरिका व सोवियत संघ के शीत युद्ध में किसी भी गुट (सैन्य महाशक्ति) से न जुड़कर पृथक् रहने की अपनाई। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, यूगोस्लाविया के तत्कालीन राष्ट्रपति जोसेफ टीटो, इंडोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्णो, घाना के प्रथम राष्ट्रपति ख्वामे एन्क्रूमा और मिश्र के राष्ट्रपति जमाल अब्देल नासिर हुसैन ने गुटनि आंदोलन की अगुवाई की।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन में अफ्रीका, एशिया तथा लैटिन अमेरिकी देश शामिल हैं जो उपनिवेशवाद का शिकार रहे हैं। इसकी आधारशिला 1955 में बांडुग सम्मेलन में रखी गई थी। वर्तमान में इसकी सदस्य संख्या 120 है तथा 17 राष्ट्रों को पर्यवेक्षक राष्ट्र का दर्जा प्रदान किया गया है। वर्तमान में गुटनिरपेक्षता की नीति भारत सहित 118 देशों की विदेश नीति का आधार है वर्ष 1961 से प्रत्येक तीन वर्ष के अंतराल पर इसका सम्मेलन आयोजित किया जाता है। वर्ष 2016 में वेनेजुएला में 17वें गुटनिरपेक्ष सम्मेलन का आयोजन किया गया था।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन के उद्देश्य (Objectives of Non–aligned Movement)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- वर्चस्व की भावना पर आधारित पुरानी विश्व व्यवस्था के स्थान पर स्वतंत्रता, समानता, सामाजिक न्याय और सर्व कल्याण के सिद्धांतों पर आधारित नवीन वैश्विक व्यवस्था की स्थापना करना।
- शांतिपूर्ण साधनों के माध्यम से शांति, निरस्त्रीकरण और विवाद समाधान के प्रयासों को जारी रखना।
- औपनिवेशिक वर्चस्व एवं विदेशी अधिग्रहण के अधीन रहने वाले सभी लोगों के लिये आत्मनिर्णय के अधिकार और स्वतंत्रता का समर्थन करना।
- वैश्विक आर्थिक समस्याओं, विशेष रूप से असंतुलित विकास का प्रभावशाली और स्वीकार्य समाधान ढूँढना।
- मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता को प्रोत्साहन देना।
- स्थायी एवं पर्यावरण की दृष्टि से ठोस विकास सुनिश्चित करना।
- संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका और प्रभाव में मज़बूती लाने में सकारात्मक एवं सक्रिय सहयोग देना।

गुटनिरपेक्षता एक ऐसी संकल्पना है जिसने विश्व राजनीति में संघर्षों को टालने में अहम् भूमिका निभाई है। इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद की समाप्ति है। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की नीति समाप्त करने, नवोदित राष्ट्रों के मध्य एकता बढ़ाने, विश्व मंच पर उनका दृष्टिकोण प्रस्तुत करने, अंतर्राष्ट्रीय आपसी संघर्ष शिथिल करने तथा विश्व शांति को प्रोत्साहन देने में इसने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस संगठन का कोई निश्चित मुख्यालय और सचिवालय नहीं है।

वर्तमान संदर्भ में गुटनिरपेक्ष आंदोलन की प्रासंगिकता (Relevancy of Non–aligned Movement in current context)

गुटनिरपेक्ष आंदोलन की स्थापना दो ध्रुवीय विश्व व्यवस्था (संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ) के दौरान हुई थी परंतु वर्ष 1991 में सोवियत संघ के विघटन एवं शीत युद्ध की समाप्ति के बाद गुटनिरपेक्ष आंदोलन पर प्रश्नचिह्न लगने लगे। शीत युद्ध की समाप्ति, जर्मनी का एकीकरण, वारसा पैक्ट की समाप्ति, सोवियत संघ के विघटन एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में एक ध्रुवीय व्यवस्था के उत्पन्न होने से इसकी प्रासंगिकता पर सवाल उठना ही था।

वस्तुत: सत्य यह है कि गुटनिरपेक्षता का तात्पर्य विदेश नीति में स्वतंत्रता से है तथा इसका उद्देश्य संप्रभु राष्ट्रों की समानता, अखंडता एवं संप्रभुता को सुरक्षित रखना है। इस संदर्भ में इसका औचित्य स्वयं ही सिद्ध हो जाता है। विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं व चुनौतियों, यथा - मानवाधिकार, विश्व व्यापार वार्ताएँ, जलवायु परिवर्तन वार्ताएँ, आर्थिक प्रभुत्ववाद एवं संयुक्त राष्ट्र संघ के सुधार के संदर्भ में विकासशील देशों का दृष्टिकोण प्रस्तुत करने के लिये एक प्रभावी मंच की आवश्यकता है। गुटनिरपेक्ष आंदोलन इसी मंच के रूप में कार्य करता है। वर्तमान में कई चुनौतियों से निपटने के संदर्भ में गुटनिरपेक्ष आंदोलन सशक्त भूमिका निभा सकता है।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन और भारत *(Non-aligned Movement and India)*

पिछले कुछ वर्षों से अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के जानकारों के द्वारा गुट निरपेक्ष आंदोलन के औचित्य पर प्रश्नचिह्न लगाए जा रहे हैं (खासकर भारत के संदर्भ में)। वर्तमान विश्व बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था को प्रदर्शित करता है, जिसमें गुटनिरपेक्षता जैसे आंदोलन अनौचित्यपूर्ण प्रतीत होते हैं, किंतु यह ध्यान रखा जाना चाहिये कि गुट निरपेक्ष आंदोलन (या संगठन) 120 देशों का समूह है, जो संयुक्त राष्ट्र के बाद सर्वाधिक राष्ट्रों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने वाले संगठनों में से एक है। अपने इस स्वरूप में यह मंच समसामयिक वैश्विक समस्याओं पर विचार करने तथा उनके समाधान की दिशा में प्रयास करने हेतु महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

भारत वैश्विक पटल पर एक शक्तिशाली अर्थव्यवस्था के रूप में उभर रहा है। इस संगठन का संस्थापक सदस्य होने के कारण भारत इस संगठन को भी एक मज़बूत स्थिति प्रदान करता है। वहीं इस संगठन के 120 सदस्य देशों का संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व भारत की सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता की दावेदारी को सशक्त करने में सहयोगी भूमिका निभाता है। यह संगठन वैश्विक स्तर पर खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा संरक्षण, जलवायु परिवर्तन तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थागत सुधारों संबंधी मुद्दों पर प्रभावी मत रखता है। अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद से निपटने के लिये वैश्विक सहयोग प्राप्त करने तथा प्रभावी रणनीति तैयार करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। सागरीय परिवहन मार्गों की सुरक्षा विश्व व्यापार संगठन में पक्षपातरहित व्यवस्था को सुनिश्चित करने हेतु मज़बूत आवाज उठा सकता है। सभी सदस्य देशों के निहित राष्ट्रीय हितों, विशेष रूप से दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देकर वैश्विक स्तर पर सतत् विकास को सुनिश्चित करने में योगदान दे सकता है। अपने इस स्वरूप में गुट निरपेक्ष आंदोलन न सिर्फ अपना प्रभावी अस्तित्व बनाए रख सकता है बल्कि बदलती परिस्थितियों के अनुकूल वैश्विक जनमत को जागरूक बनाकर अधिक सशक्त योगदान दे सकता है।

4.3 ब्रिक्स समूह *(BRICS Group)*

ब्रिक्स पाँच प्रमुख उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं का समूह है, जहाँ विश्वभर की लगभग 43% आबादी रहती है विश्व के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में इसका हिस्सा 30% है और विश्व व्यापार में इसकी 17% हिस्सेदारी है। ब्रिक का नामकरण इसके सदस्य देशों के नाम के पहले अक्षर यथा– B–Brazil, R–Russia, I–India, C–China से हुआ, बाद में वर्ष 2011 में दक्षिण अफ्रीका (SA) के इस संगठन से जुड़ने के साथ ही इसका नाम ब्रिक्स हो गया।

ब्रिक शब्द का पहली बार प्रयोग वर्ष 2001 में गोल्डमैन सैश के **जिम ओ. नील** ने किया। एक औपचारिक आर्थिक समूह के रूप में सेंट पीट्सबर्ग में जुलाई 2006 में जी-8 आउटरीच शिखर सम्मेलन के अवसर पर रूस, भारत और चीन के नेताओं की बैठक के बाद ब्रिक की शुरुआत हुई। न्यूयॉर्क में सितंबर 2008 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के अधिवेशन के

अवसर पर ब्रिक समूह के विदेश मंत्रियों की प्रथम बैठक में ब्रिक को औपचारिक रूप प्रदान किया गया। ‘ब्रिक प्रथम शि सम्मेलन’ का आयोजन रूस के येकाटेरिनबर्ग शहर में 16 जून, 2009 को किया गया।

ब्रिक्स के उद्देश्य (*Objectives of BRICS*)

ब्रिक्स के अब तक 9 शिखर सम्मेलन हो चुके हैं। ब्रिक्स के सम्मेलनों के अंत में जारी घोषणा-पत्रों व इसकी गतिवि के आधार पर इसके निम्नलिखित उद्देश्य माने जा सकते हैं-

- एक न्यायसंगत एवं समतापूर्ण वैश्विक व्यवस्था की स्थापना, जो पश्चिमी विकसित देशों के प्रभुत्व में न होकर बहुपक्षीय हो।
- वैश्विक मामलों में निर्णय निर्माण की प्रक्रिया का लोकतंत्रीकरण तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में लोकतांत्रिक सुधार।
- वर्तमान वैश्विक मुद्दों जैसे- जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद, विश्व व्यापार व्यवस्था का संचालन, ऊर्जा सुरक्षा, आर्थि स्थिरता तथा मानवीय विकास आदि का न्यायोचित समाधान करना।
- सदस्य देशों के मध्य पारस्परिक लाभकारी सहयोग एवं सामंजस्य को मज़बूत करना।

	पिछले शिखर सम्मेलनों का ब्यौरा
क्र.सं.	
1.	प्रथम ब्रिक शिखर सम्मेलन - 16 जून, 2009, रूस (येकाटेरिनबर्ग)
2.	द्वितीय ब्रिक शिखर सम्मेलन - 16 अप्रैल, 2010, ब्राज़ील (ब्रासीलिया में)
3.	तृतीय ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 14 अप्रैल, 2011, चीन (सान्या)
4.	चौथा ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 29 मार्च, 2012, भारत (नई दिल्ली)
5.	पाँचवा ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 26–27 मार्च, 2013, दक्षिण अफ्रीका (डर्बन)
6.	छठा ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 14–16 जुलाई, 2014 ब्राज़ील (फोर्टलेजा)
7.	सातवाँ ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 8–9 जुलाई, 2015, रूस (ऊफा)
8.	आठवाँ ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - 15–16 अक्टूबर, 2016, भारत (गोवा)
9.	नौवाँ ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - सितंबर 2017, शियामेन, चीन
10.	दसवाँ ब्रिक्स शिखर सम्मेलन - सितंबर 2018, जोहांसबर्ग, दक्षिण अफ्रीका में (संभावित)
प्रत्येक सदस्य देश वर्णानुक्रम के चक्रीय व्यवस्था द्वारा अध्यक्षता एवं शिखर सम्मेलन की मेज़बानी प्राप्त करता है।	

नए ब्रिक्स बैंक या न्यू डेवलपमेंट बैंक की स्थापना तथा वित्तीय सुरक्षा जाल के रूप में आकस्मिक रिज़र्व व्यवस्था (CRA) का सृजन 2013 के दक्षिण अफ्रीका सम्मेलन में हुआ। ब्रिक्स का अपना कोई भी चार्टर या ढाँचा नहीं है।

ब्रिक्स समूह की अर्थव्यवस्थाएँ एक-दूसरे की प्रतियोगी न होकर एक-दूसरे की पूरक हैं। ये देश विकासशील देशों की वैश्विक निर्णय निर्माण प्रक्रिया में भागीदारी बढ़ाने के लिये अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था में सुधार चाहते हैं। ये सभी देश जी-20 के सदस्य हैं और अमेरिका के प्रभुत्व वाली वर्तमान व्यवस्था में अपनी भूमिका बढ़ाना चाहते हैं। समग्र रूप में कहा जाए तो वर्तमान समय में ब्रिक्स बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के एक ऐसे समूह के रूप में उभरा है, जिसकी भविष्य में वैश्विक अर्थव्यवस्था के संचालन व प्रबंधन में महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी।

आर-5 (R-5)

ब्रिक्स देशों की मुद्रा ब्राज़ील-रियाल, रूस-रूबल, भारत (इंडिया)-रुपया, चीन-रेनमिंबी और दक्षिण अफ्रीका-रैंड को सम्मिलित रूप से आर-5 कहा जाता है। ब्रिक्स देशों को आर-5 समूह भी कहा जाता है।

ब्रिक्स और भारत (*BRICS and India*)

ब्रिक्स कई आयामों में भारत के लिये महत्त्वपूर्ण है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता हो या भारत के एक आर्थिक महाशक्ति बनने की महत्त्वाकांक्षा, ब्रिक्स देशों का सहयोग अनिवार्य है। विश्व व्यापार संगठन में खाद

सुरक्षा के मुद्दे पर व्यापक चर्चा एवं अपना पक्ष मज़बूत करने के लिये ब्रिक्स एक प्रभावी मंच उपलब्ध कराता है। ब्रिक्स बैंक की सहायता से भारत में अवसंरचना परियोजनाओं को वित्तीय सहयोग प्राप्त हो सकता है, वहीं ब्रिक्स मंच का उपयोग कर भारत को न सिर्फ इन देशों में बल्कि अन्य लैटिन अमेरिकी, अफ्रीकी तथा एशियाई देशों में अपने उत्पादों एवं सेवाओं हेतु बाज़ार मिल सकता है। आतंकवाद के मुद्दे पर अपना पक्ष रखकर वैश्विक सहयोग जुटाने हेतु ब्रिक्स मंच का सहयोग लिया जा सकता है। चीन भी ब्रिक्स का सदस्य है, जिससे इस बहुपक्षीय समूह का उपयोग कर भारत-चीन द्विपक्षीय विवादों का हल ढूँढ़ने की दिशा में प्रयास किया जा सकता है। ब्रिक्स न सिर्फ भारत के व्यापारिक आर्थिक एवं अवसंरचना संबंधी हितों की पूर्ति करने में सहायक है बल्कि यह सामरिक दृष्टिकोण से भी महत्त्वपूर्ण है, साथ ही ब्रिक्स दक्षिण-दक्षिण सहयोग को भी प्रोत्साहित करता है, जिससे वैश्विक स्तर पर विषमता को कम करके सतत् विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है।

4.4 आसियान *(ASEAN)*

आसियान दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों द्वारा गठित एक असैनिक, आर्थिक गैर-सुरक्षात्मक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रीय संगठन है। इसकी स्थापना बैंकाक घोषणा-पत्र के द्वारा 8 अगस्त, 1967 को हुई। वर्तमान में इसके कुल 10 सदस्य हैं- मलेशिया, सिंगापुर, इंडोनेशिया, फिलीपींस, थाईलैंड, कंबोडिया, म्याँमार, ब्रुनेई, लाओस एवं वियतनाम। भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन और रूस सहित इसके 12 पूर्ण वार्ता भागीदार देश भी हैं। इसका गठन दक्षिण-पूर्व एशिया में आर्थिक विकास तीव्र करने, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास सुनिश्चित करने तथा शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से किया गया है।

- आसियान का 30वाँ सम्मेलन अप्रैल 2017 में मनीला, फिलीपींस में आयोजित किया गया था।
- आसियान की अध्यक्षता सदस्य देश वर्णानुक्रम के चक्रीय आधार पर एक वर्ष के लिये करते हैं।

भारत 90 के दशक से ही 'पूर्व की ओर देखो' (Look East Policy) नीति का अवलंबन करता आ रहा है। इस नीति के तहत ही भारत, आसियान को महत्त्वपूर्ण व्यापार साझीदार मानते हुए सकारात्मक संबंध स्थापित करने का प्रयास करता रहा है। इसी कड़ी में वर्ष 2002 से प्रतिवर्ष भारत-आसियान सम्मेलन होता रहा है। इसका मुख्यालय जकार्ता, इंडोनेशिया में है।

आसियान और भारत *(ASEAN and India)*

आसियान के साथ भारत के संबंधों की शुरुआत 1992 से भारत की लुक ईस्ट नीति के साथ हुई। 1992 में आसियान ने भारत को क्षेत्रीय वार्ता भागीदार तथा 1995 में पूर्ण वार्ता भागीदार का दर्जा प्रदान किया। भारत और आसियान पूर्वी-एशिया शिखर सम्मेलन के मंच पर आर्थिक एवं सुरक्षा संबंधी मुद्दों पर बातचीत करते हैं।

इस संगठन के साथ अपने संबंधों को गंभीरता से लेते हुए भारत ने 2003 में मित्रता एवं सहयोग संधि (Treaty of Amity and Cooperation-TAC) की तथा 2005 में पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन का सदस्य बना। मई 2009 में भारत-आसियान के बीच मुक्त व्यापार समझौता हुआ जो 2010 से प्रभावी हुआ। भारत एवं आसियान दोनों विश्व अर्थव्यवस्था के महत्त्वपूर्ण बाज़ार हैं। भारत-आसियान मुक्त व्यापार समझौता होते समय 1.8 बिलियन लोगों का संयुक्त बाज़ार तथा 2.75 ट्रिलियन डॉलर का संयुक्त जीडीपी था। 1993 में भारत-आसियान द्विपक्षीय व्यापार 2.9 बिलियन डॉलर का था जो 2012 में 80 बिलियन डॉलर हो गया। भारत के कुल वैश्विक व्यापार का 10 प्रतिशत आसियान देशों के साथ होता है तथा यह यूरोपीय संघ, अमेरिका एवं चीन के बाद भारत का चौथा सबसे बड़ा व्यापार भागीदार बन गया है। आसियान देशों के लिये भारत से निर्यात में ऑयल, रत्न और आभूषण, माँस, सूती धागा, मशीनरी, चावल, औषधि और रसायन आदि शामिल हैं। आसियान से हमारे आयात में मुख्यतः कृत्रिम रेजिन, प्लास्टिक सामग्री, प्राकृतिक रबर, काष्ठ और काष्ठ उत्पाद, इलेक्ट्रॉनिक सामग्री, कार्बनिक रसायन, खाद्य तेल और उर्वरक आदि शामिल हैं। उससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत आसियान के साथ आर्थिक अंतःक्रिया को अपने उत्तर-पूर्वी राज्यों के विकास के एक अवसर के रूप में देखता है। दूसरी ओर आसियान की सोच है कि कंबोडिया, लाओस, म्याँमार एवं वियतनाम जैसे देशों के साथ भारत के व्यापार से इन देशों को मदद मिलेगी तथा उनका विकास होगा जिससे कि आसियान के अंदर व्यापार एवं एकता को बढ़ावा मिलेगा। हालाँकि, भारत-आसियान मुक्त व्यापार

समझौता होते समय कुछ परेशानियाँ सामने आई थीं। भारत में संरचनात्मक आर्थिक सुधार के अभाव में आर्थिक प्रभावित हो सकता है। भारत के व्यावसायिक समूह को इस बात का भी डर है कि दक्षिण-पूर्व एशिया से आने वाली सामग्री के कारण भारत का घरेलू उद्योग जैसे- चाय, मसाले, नारियल तेल तथा रबड़ उद्योग प्रभावित हो सकते हैं।

भारत की लुक ईस्ट पॉलिसी का नया आयामः एक्ट ईस्ट पॉलिसी (New dimension of India's Look East Policy: Act East Policy)

अगस्त 2014 में वियतनाम की यात्रा के दौरान भारतीय विदेश मंत्री ने भारत की लुक ईस्ट नीति के स्थान पर ईस्ट नीति जैसी शब्दावली का प्रयोग कर पूर्व में प्रचलित लुक ईस्ट पॉलिसी को नया आयाम प्रदान कर दिया। भारत लुक ईस्ट पॉलिसी को अपनाने का उद्देश्य पूर्व-एशिया एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ संबंधों को मज़बूती करना था, यद्यपि इस नीति के परिणाम काफी सकारात्मक रहे किंतु संबंधों को अपेक्षित मज़बूती नहीं मिल सकी। भारत आसियान के देशों के आपसी संबंध सम्मेलनों एवं आपसी विचार-विमर्श के दायरे में सिमट कर रह गए। इसी संबंधों को नवीनता एवं नई गतिशीलता प्रदान करने के लिये एक्ट ईस्ट नीति को अपनाया गया है। दूसरे शब्दों में एक्ट की नीति को संबंधों में नई क्रियाशीलता एवं उत्साह का संचार करने के लिये अपनाया गया है।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी के आर्थिक, सामरिक एवं सांस्कृतिक आयाम भी हैं। दोनों पक्षों के बीच आर्थिक व्यापार को देना तथा व्यापार संतुलन कायम करना इस नीति का आर्थिक आयाम है, जबकि सामरिक पक्ष के तहत भारत पूर्व-एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ मज़बूत सैन्य संबंध स्थापित करना चाहता है, जिसमें तय अवधि में किये जाने सैन्य अभ्यास भी शामिल होंगे। मज़बूत सामरिक संबंधों का उद्देश्य इस क्षेत्र में चीन की विस्तारवादी नीति को करना है। इसी प्रकार सांस्कृतिक आयाम के तहत भारत एवं पूर्व-एशिया तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच प्राचीन संबंधों को पुनर्जीवित करना है। ज्ञातव्य है कि ईसा की प्रथम शताब्दी से ही भारत के इस क्षेत्र के देशों के साथ संबंध रहे हैं। नालंदा विश्वविद्यालय की पुनर्स्थापना में आसियान देशों का सहयोग सांस्कृतिक संबंधों को पुनर्जीवित करने उत्कृष्ट उदाहरण है। भारत सरकार "3C" (Commerce, Culture, Connectivity) के द्वारा इन देशों के साथ अपने को मज़बूती प्रदान कर रही है।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी से संबंधित महत्त्वपूर्ण तथ्य (Important facts related to Act East Policy)

- भारत और आसियान देशों के संबंध बहुपक्षीय हैं। आर्थिक पक्ष के तहत दोनों पक्षों के मध्य व्यापार की क्षमता बिलियन डॉलर आँकी गई है जिसे वास्तविक आकार प्रदान करने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा मेक इन डिजिटल इंडिया, स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट, स्टार्ट अप इंडिया, स्किल इंडिया इत्यादि जैसे कार्यक्रमों की शुरुआत की गई।
- विश्व स्तर पर चीन की बढ़ती सक्रियता और अमेरिका तथा जापान के साथ चीन की बढ़ती प्रतिस्पर्द्धा ने भारत को एशिया-पैसिफिक क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण भागीदार के रूप में स्थापित कर दिया है।
- चीन के 'मेरीटाइम सिल्क रोड' के रणनीतिक प्रभाव को देखते हुए, अमेरिका द्वारा एशिया में पुनर्संतुलन की नीति अंतर्गत चीन को संयमित करने के लिये भारत और जापान जैसे देशों के सक्रिय होने पर ज़ोर दिया गया है। मोदी ने इस बात का समर्थन किया है, साथ ही आतंकवाद के खिलाफ सभी देशों को एकजुट होने की भी अपील की
- दक्षिण-पूर्व एशिया व एशिया-पैसिफिक देशों में उपस्थित प्रवासी भारतीय भी इन देशों के बीच आपसी संबंधों के महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में विद्यमान हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने इन देशों की यात्रा के प्रवासी भारतीयों से देश के विकास से जुड़ने के लिये आह्वान किया।
- म्याँमार भारत के लिये 'दक्षिण-पूर्व एशिया' का प्रवेश द्वार होने के नाते महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह भारत, चीन दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों से जुड़ा हुआ है। 'भारत-म्याँमार-थाइलैंड त्रिपक्षीय हाइवे परियोजना' भारत को मेकॉन्ग से जोड़ेगी तथा आम लोगों की आवाज़ाही में सहायक बनेगी। भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों में विद्रोह और अलगाववाद समस्या को देखते हुए म्याँमार के साथ मधुर संबंध होना आवश्यक हैं।

- दक्षिण चीन सागर पर अपनी नीति स्पष्ट करते हुए भारत ने कहा कि "इस क्षेत्र में भारत की कूटनीति राष्ट्रहित से प्रभावित होगी न कि भय से।" ध्यातव्य है कि भारत यह मानता आया है कि दक्षिण चीन सागर एक अंतर्राष्ट्रीय जल स्रोत है और इससे संबंधित कोई भी विवाद शांतिपूर्ण तरीके से सुलझाया जाना चाहिये न कि युद्ध से।
- भारत की विदेश नीति में वियतनाम, सिंगापुर और इंडोनेशिया के साथ रक्षा सहायता को प्रमुखता दी गई है। कहा गया कि इन देशों के साथ संयुक्त नौसेना अभ्यास आपसी संबंधों को सुरक्षा की दृष्टि से मज़बूत बनाने में कारगर सिद्ध होगा।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी के समक्ष चुनौतियाँ (Challenges before the Act East Policy)

- चीन की अत्यधिक सक्रियता तथा अमेरिका व जापान का प्रभाव क्षेत्रीय सुरक्षा के दृष्टिकोण से काफी अहम् है।
- उत्तर-पूर्वी राज्य भौगोलिक रूप से एक-दूसरे से जुड़ नहीं पाए हैं।
- आसियान और भारत के बीच आर्थिक और व्यापारिक संबंधों को इसकी वास्तविक क्षमता तक पहुँचाना।
- दक्षिण चीन सागर विवाद एक चुनौती के रूप में उपस्थित।
- इस्लामिक स्टेट का प्रभाव।
- कई देशों में कमज़ोर सुशासन व्यवस्था।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी के समक्ष संभावनाएँ (Possibilities before the Act East Policy)

- भारत और आसियान के मध्य सेवा और व्यापार के क्षेत्र में अपार संभावनाएँ मौजूद हैं जिन्हें इस पॉलिसी के माध्यम से पूरा किया जा सकता है।
- एक्ट ईस्ट नीति द्वारा भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों के भौगोलिक क्षेत्रों को वृहद् रूप से सड़क तथा रेल नेटवर्क द्वारा एक-दूसरे से जोड़ा जा सकता है। ये राज्य पूर्वी एशिया से जुड़ने में सहायक हो सकते हैं।
- सांस्कृतिक पर्यटन को बढ़ावा देने में उपयोगी।
- इस पॉलिसी के तहत एक ऐसे सकल बाज़ार की धारणा व्यक्त की गई है, जिसके तहत इस बेहद प्रतिस्पर्द्धी आर्थिक क्षेत्र में सीमाओं के आर-पार वस्तुओं, पूंजी और कुशल श्रम का मुक्त आवागमन हो। इस क्षेत्र का संयुक्त सकल घरेलू उत्पाद लगभग 24 खरब डॉलर का है।
- इस नीति के माध्यम से सरकार को एशिया-पैसिफिक देशों के साथ बढ़ते संबंधों को चीन की संवेदनशीलता के मद्देनज़र, जागरूक होकर आगे बढ़ाना चाहिये।
- प्रवासी भारतीयों को राज्यों के विकास में शामिल किये जाने की संभावना को बढ़ावा देना।

लुक ईस्ट पॉलिसी एवं एक्ट ईस्ट पॉलिसी (Look East Policy & Act East Policy)

शीतयुद्ध के उपरांत वैश्विक स्तर पर होने वाले महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के परिणामस्वरूप भारत ने 'लुक ईस्ट नीति' का अनुसरण किया। इस नीति के तहत भारत सरकार द्वारा एशियाई देशों विशेषकर दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ अपने राजनीतिक, आर्थिक और सामरिक संबंधों को सुदृढ़ बनाने पर बल दिया गया। इस नीति का मुख्य उद्देश्य पूर्वी देशों के साथ मज़बूत आर्थिक एकीकरण करना था।

उल्लेखनीय है कि प्रारंभ में इस नीति के अंतर्गत केवल आसियान देशों के साथ आर्थिक संबंध स्थापित किये गए। तत्पश्चात् लुक ईस्ट नीति के दूसरे फेज, 2003 के अंतर्गत इस नीति का विस्तार कर ऑस्ट्रेलिया से लेकर पूर्वी देशों तक बढ़ाया गया, जिसके तहत इस नीति के फोकस में परिवर्तन आया, जिसमें व्यापार से बढ़कर वृहद् आर्थिक और रक्षा सहयोग, राजनीतिक भागीदारी, सड़क और रेल द्वारा भौगोलिक जुड़ाव को भी शामिल किया गया।

हाल के कुछ वर्षों में इस नीति के अंतर्गत भारत और पूरे एशिया पैसिफिक देशों के मध्य वृहद् स्तर पर रक्षा और सुरक्षा के संबंध विकसित किये जाने के फलस्वरूप तथा इस क्षेत्र के बदलते रक्षा गतिकी के मद्देनज़र, वर्तमान भारतीय

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने न केवल दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों बल्कि पूरे एशिया-पैसिफिक देशों के साथ भारत के संबं नया आयाम देते हुए इसे 'एक्ट ईस्ट नीति' में तब्दील किया। यह 'लुक ईस्ट' का ही परिवर्तित रूप है। दोनों में अंत गतिकी का है, सार वही है। इस प्रकार भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा इस नीति के तहत जापान, वियतनाम, ऑस्ट्रेलि आसियान देशों का दौरा किया गया। इन देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने भी भारत का दौरा किया, जो यह प्रमाणित करता है भारत के संबंध इन देशों के साथ प्रगाढ़ होने के कगार पर हैं।

दक्षिण चीन सागर विवाद एवं भारत-आसियान संबंध (South China sea controversy and India-ASEAN relations)

दक्षिण चीन सागर में चीनी संप्रभुता के दावे को आसियान के कुछ सदस्य देश चुनौती दे रहे हैं। समुद्र से लग के कारण भारत एवं आसियान को समुद्री सुरक्षा के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाना चाहिये। इसके अलावा दोनों को मिलकर अंतर कानून के अनुसार नौवहन की स्वतंत्रता तथा समुद्री विवादों का शांतिपूर्ण समाधान करने का प्रयास करना चाहिये। अभी तक भारत-आसियान व्यापारिक संबंधों के विस्तार से संबंधित रणनीति के विकास पर ही ध्यान देते थे। सफल व्याप संबंधों से आपसी संबंधों को विस्तार देने का भी अवसर मिला है तथा यह रक्षा एवं आतंकवाद की रोकथाम तक पहुँच है। चीन के समुद्र क्षेत्र में स्वामित्व संबंधी दावे से ताइवान, वियतनाम, फिलीपींस, मलेशिया, ब्रूनेई तथा इंडोनेशिया ना हैं। दक्षिण चीन सागर में संप्रभुता संबंधी मुद्दे को सुलझाने के लिये लचीला रुख अपनाने की आवश्यकता है। हाल दक्षिण चीन सागर में भारत का कोई प्रत्यक्ष दाँव नहीं लगा है, लेकिन तेल एवं गैस की इसकी आवश्यकता के कारण क्षेत्र भारत के लिये महत्त्वपूर्ण हो जाता है। इसके अलावा भारत आसियान एवं अन्य देशों के साथ जो व्यापार करता है भी इस समुद्री मार्ग से ही होकर गुज़रता है। भारत मलक्का जलसंधि से होकर ही रूस से द्रवित प्राकृतिक गैस (Lique Natural Gas) मंगवाने में रुचि रखता है। यह जल संधि हिंद महासागर को दक्षिण चीन सागर एवं प्रशांत महासागर से जो है। दक्षिण चीन सागर विवाद अनेक कारणों से भारत-आसियान संबंधों पर विपरीत प्रभाव डाल सकता है। पहला, इस पर स्वयं आसियान देशों के बीच मतभेद हैं। दूसरा, भारत इस विवाद में शामिल होने तथा चीन को नाराज़ करने के अनिच्छुक है। यह भी नहीं लगता कि भारत सुपरसोनिक ब्रह्मोस मिसाइल जैसी रक्षा सामग्री या तकनीक वियतनाम सहयोगी को उपलब्ध कराएगा। हालाँकि, वियतनाम एवं मलेशिया जैसे कुछ सदस्य देशों के साथ भारत के सामरिक सहभा समझौते हैं। इंडोनेशिया के साथ 2005 से ही सामरिक वार्तालाप जारी है। लेकिन इन सबके बावजूद चीन के संदर्भ में कि तरह की रणनीति नहीं बदली है।

भारत की पूर्व की ओर देखो नीति की एक सफलता आसियान एकीकरण के लिये की गई पहल प्रक्रिया में इस सहभागिता भी रही है। आसियान एकीकरण प्रक्रिया का लक्ष्य आसियान के सदस्य देशों के बीच विकास अंतराल (Develop Gap) को कम करना तथा क्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देना, एक समान आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देना तथा ग उन्मूलन करना है। भारत आसियान के कुछ सदस्य देशों में अंग्रेज़ी भाषा का प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा उद्यमिता विकास परियो (Entrepreneurial Development Project) चला रहा है। इन सबसे यह पता चलता है कि भारत-आसियान संबंध बहुआ एवं बहुस्तरीय हैं।

भारत म्याँमार, बांग्लादेश जैसे अपने पड़ोसियों से संबंध सुधारकर पूर्व की ओर देखो नीति को ठोस रूप दे सकता भारत को अपने उत्तर-पूर्वी राज्यों, बांग्लादेश एवं म्याँमार के बीच आर्थिक एकीकरण को भी बढ़ावा देना चाहिये, दक्षिण-एशिया के अत्यंत अविकसित क्षेत्रों में शामिल हैं। भारत को अपनी पूर्व की ओर देखो नीति को आगे बढ़ाते अपनी नम्य शक्ति (Soft Power) का प्रयोग करने पर ध्यान देना चाहिये। इसके अंतर्गत शिक्षा, संस्कृति, पर्यटन, सि सोसाइटी, सूचना तकनीक, राष्ट्र निर्माण एवं लोकतंत्र का अनुभव आदि को शामिल किया जा सकता है। भारत को उत्तर- राज्यों से लगे सीमा के आर-पार सड़क एवं रेलवे का विस्तार करना चाहिये, जिससे कि आपसी संबंधों में गतिशीलता बढ़ावा मिल सके। भारत को एशिया में एक मज़बूत एवं स्थायी शक्ति के रूप में स्थापित होने के लिये पूर्व की ओर नीति के माध्यम से प्रगतिशील, व्यावहारिक एवं प्रभावी भूमिका निभानी चाहिये।

4.5 सार्क (दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन)
[SAARC (South Asian Association for Regional Cooperation)]

- 'दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन' को दक्षेस या सार्क (SAARC) के नाम से भी जाना जाता है। दक्षेस आठ दक्षिण एशियाई देशों के मध्य सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक सहयोग को बढ़ावा देने वाला संगठन है।
- 1985 में ढाका में आयोजित दक्षिण एशियाई देशों के शिखर सम्मेलन में दक्षेस की स्थापना के लिये जारी घोषणापत्र को स्वीकृति प्रदान की गई।
- दक्षेस में वर्तमान में भारत, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, श्रीलंका, मालदीव, अफगानिस्तान तथा बांग्लादेश शामिल हैं। दक्षेस का सचिवालय नेपाल की राजधानी काठमांडू में स्थित है।
- 1993 में ढाका में आयोजित दक्षेस के सातवें शिखर सम्मेलन में सार्क अधिमान्य व्यापार समझौता (Agreement on SAARC Preferential Trading Arrangement–SAPTA) संपन्न हुआ। यह समझौता दिसंबर 1995 से लागू हुआ।
- 2004 में दक्षेस के बारहवें शिखर सम्मेलन के दौरान 'सार्क मुक्त व्यापार क्षेत्र' (SAFTA) समझौता संपन्न हुआ। यह समझौता जनवरी 2005 से लागू हुआ तथा व्यापार उदारीकरण की शुरुआत 1 जुलाई, 2005 को हुई। इस समझौते के अंतर्गत सदस्य देशों द्वारा 2009 तक सीमा-शुल्क में 20 प्रतिशत तक कमी करने का प्रावधान किया गया।

गुर्नार मिर्डल ने दक्षिण एशिया के विषय में कहा था, **"दक्षिण एशियाई देशों की मूल आर्थिक दशाओं में एकरूपता है। सामान्यतः सभी अति निर्धन हैं। जो सबसे बड़ा है, वह सबसे अधिक निर्धन है....सभी ने काफी लंबे समय तक गतिहीनता सहन की है....और जनसाधारण का जीवन-स्तर जो द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व था, या तो उससे नीचे है या फिर पर्याप्त ऊँचा नहीं है।"** दुर्भाग्यवश, गुर्नार मिर्डल का यह कटु सत्य आज भी कमोबेश उसी रूप में विद्यमान है। भले ही सन् 1990 के दशक में उदारीकरण की प्रक्रिया का आरंभ हुआ हो लेकिन क्षेत्रीय सहयोग नहीं हुआ। इसलिये उदारीकरण के बावजूद दयनीय स्थिति बनी हुई है। यह बात अलग है कि हम इससे सुंदर भविष्य की कल्पना अवश्य कर सकते हैं।

सार्क के उद्देश्य और सिद्धांत *(Objectives and principles of SAARC)*

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) के चार्टर में इसके **उद्देश्यों** की स्पष्ट व्याख्या की गई है। संगठन के उद्देश्य निम्नवत् हैं–

(क) दक्षिण एशियाई देशों के लोगों के कल्याण को प्रोत्साहन देना और उनके जीवन-स्तर में सुधार करना।
(ख) सामूहिक आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित और सुदृढ़ करना।
(ग) आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों में पारस्परिक सहायता को प्रोत्साहन देना।
(घ) पारस्परिक विश्वास और एक-दूसरे की समस्याओं को समझने में सहयोग देना।
(ङ) अन्य विकासशील देशों के साथ सहयोग को मज़बूत करना।
(च) अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर आपसी सहयोग को सुदृढ़ करना, तथा
(छ) अन्य क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग करना।

चार्टर में सार्क के जिन **सिद्धांतों** का उल्लेख है, वे हैं–

1. सार्क के माध्यम से क्षेत्रीय सहयोग, संप्रभुता और समानता के सिद्धांत के प्रति पारस्परिक सम्मान, प्रादेशिक अखंडता, राजनीतिक स्वतंत्रता, एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप और पारस्परिक लाभ के सिद्धांतों पर बल देना।
2. क्षेत्रीय सहयोग, द्विपक्षीय तथा बहुपक्षीय सहयोग का स्थान नहीं लेगा, अपितु वह उसका पूरक होगा।
3. सार्क के माध्यम से क्षेत्रीय सहयोग, द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय उत्तरदायित्वों के विरुद्ध नहीं होगा। इस प्रकार सार्क चार्टर में क्षेत्रीय सहयोग पर बल तो अवश्य दिया गया है, परंतु यह सहयोग द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय उत्तरदायित्वों में हस्तक्षेप किये बिना और संप्रभुता एवं समानता का आदर करते हुए तथा प्रादेशिक अखंडता एवं सदस्य राष्ट्रों की स्वतंत्रता बरकरार रखते हुए ही किया जाएगा।

सार्क और भारत (SAARC and India)

सार्क में भारत की स्थिति एवं महत्त्व (India's position and importance in S

भारत की विदेश नीति हमेशा शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की भावना पर आधारित रही सांस्कृतिक एवं कूटनीतिक मूल्यों में समानता के चलते सार्क में भी भारत ने सदैव पड़ोसी पर ध्यान दिया है। इस दृष्टिकोण से भारत ने दक्षिण पूर्वी एशिया (SEA) में सामूहिक स भूमिका निभाई है। भारत अपनी निम्नलिखित स्थितियों के कारण सार्क में महत्त्वपूर्ण है-

आर्थिक दृष्टि से-

- भारत सार्क क्षेत्र में क्षेत्रफल व जनसंख्या की दृष्टि से लगभग 70% हिस्सेदारी रखता है।
- वर्तमान में हमारा अन्य सार्क देशों से लगभग 15 बिलियन डॉलर से अधिक का व्यापार हो
- इसमें से 17.5 बिलियन डॉलर से अधिक का निर्यात और 2.5 बिलियन डॉलर के आसपास अ एशियाई देश व्यापार मामलों में भारत पर अधिक निर्भर है। नेपाल और भूटान का 50% व्यापार होता है।
- आयात मामलों में भारत पर दक्षिण एशियाई सार्क देशों की निर्भरता अधिक है।

सहयोग मामले में-

- अफगानिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, भूटान, मालदीव व नेपाल सभी को भारत विकास कार्यों हेतु आर्थिक एवं तकनी रूप से सहयोग करता रहा है।
- भूटान, नेपाल में भारत ऊर्जा से जुड़ी कई परियोजनाओं पर कार्य कर रहा है। पर्यटन, शिक्षा, निर्माण और उद्योग निवेश भी लगातार बढ़ रहा है।
- श्रीलंका में 20 करोड़ डॉलर के भारतीय निवेश की सीमा बढ़कर 1 अरब डॉलर होने की संभावना है। प होटल, एयरपोर्ट्स व मत्स्य उद्योग में भी दोनों देश सहयोग कर रहे हैं।
- अफगानिस्तान में आर्थिक गलियारों का विकास तथा आधारभूत संरचनाओं के विकास में भारत सहयोग दे रहा

कूटनीतिक दृष्टिकोण से-

- सार्क के आठ देशों में से चार-पाकिस्तान, नेपाल, भूटान तथा बांग्लादेश भारत के साथ भौगोलिक सीमा साझा हैं। श्रीलंका की सीमा भी भारत के नज़दीक है।
- समान ऐतिहासिक संदर्भ एवं सांस्कृतिक संदर्भों के चलते सार्क के अन्य देशों से भारत के संबंध काफी सार्क में भारत की कूटनीतिक उपस्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण है।
- भारत ने सक्रिय रूप से सार्क की गतिविधियों में भाग लिया है। व्यापार एवं अन्य प्रकार के आर्थिक, सामा तकनीकी सहयोग को बढ़ावा दिया है। भारत अपने आकार एवं जनसंख्या में ही नहीं, अपितु अपने सा सामाजिक शक्ति में भी अन्य सभी सदस्यों से बराबर या बड़ा है। इसलिये भारत सार्क देशों की राजनीति बिंदु है। व्यापार, वाणिज्य और निवेश आदि की दृष्टि से भारत समर्थ निवेश का स्रोत तथा अन्य सभी सार्क के उत्पादों के लिये एक बड़ा बाज़ार भी है।
- भारत दक्षिण एशियाई क्षेत्र में शांति एवं सौहार्द्र की महत्ता को समझता है इसलिये भारत ने सकारात्मक साथ इसे बनाए रखने तथा विवादों का समाधान द्विपक्षीय समझौतों से करने की सदैव कोशिश की है।

सार्क में भारत एक सशक्त स्थिति रखता है। दक्षिण एशिया में स्थायित्व एवं सामूहिक सहयोग के साथ वि दिशा में आगे बढ़ने में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सार्क और भारत *(SAARC and India)*

सार्क में भारत की स्थिति एवं महत्त्व (India's position and importance in SAARC)

भारत की विदेश नीति हमेशा शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की भावना पर आधारित रही है। ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं कूटनीतिक मूल्यों में समानता के चलते सार्क में भी भारत ने सदैव पड़ोसी देशों के साथ बेहतर संबंध बनाने पर ध्यान दिया है। इस दृष्टिकोण से भारत ने दक्षिण पूर्वी एशिया (SEA) में सामूहिक सहयोग तथा प्रयासों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत अपनी निम्नलिखित स्थितियों के कारण सार्क में महत्त्वपूर्ण है-

आर्थिक दृष्टि से-

- भारत सार्क क्षेत्र में क्षेत्रफल व जनसंख्या की दृष्टि से लगभग 70% हिस्सेदारी रखता है।
- वर्तमान में हमारा अन्य सार्क देशों से लगभग 15 बिलियन डॉलर से अधिक का व्यापार होता है।
- इसमें से 17.5 बिलियन डॉलर से अधिक का निर्यात और 2.5 बिलियन डॉलर के आसपास आयात होता है। दक्षिण एशियाई देश व्यापार मामलों में भारत पर अधिक निर्भर है। नेपाल और भूटान का 50% व्यापार सिर्फ भारत से ही होता है।
- आयात मामलों में भारत पर दक्षिण एशियाई सार्क देशों की निर्भरता अधिक है।

सहयोग मामले में-

- अफगानिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, भूटान, मालदीव व नेपाल सभी को भारत विकास कार्यों हेतु आर्थिक एवं तकनीकी रूप से सहयोग करता रहा है।
- भूटान, नेपाल में भारत ऊर्जा से जुड़ी कई परियोजनाओं पर कार्य कर रहा है। पर्यटन, शिक्षा, निर्माण और उद्योग पर निवेश भी लगातार बढ़ रहा है।
- श्रीलंका में 20 करोड़ डॉलर के भारतीय निवेश की सीमा बढ़कर 1 अरब डॉलर होने की संभावना है। पर्यटन, होटल, एयरपोर्ट्स व मत्स्य उद्योग में भी दोनों देश सहयोग कर रहे हैं।
- अफगानिस्तान में आर्थिक गलियारों का विकास तथा आधारभूत संरचनाओं के विकास में भारत सहयोग दे रहा है।

कूटनीतिक दृष्टिकोण से-

- सार्क के आठ देशों में से चार-पाकिस्तान, नेपाल, भूटान तथा बांग्लादेश भारत के साथ भौगोलिक सीमा साझा करते हैं। श्रीलंका की सीमा भी भारत के नज़दीक है।
- समान ऐतिहासिक संदर्भ एवं सांस्कृतिक संदर्भों के चलते सार्क के अन्य देशों से भारत के संबंध काफी गहरे हैं। सार्क में भारत की कूटनीतिक उपस्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण है।
- भारत ने सक्रिय रूप से सार्क की गतिविधियों में भाग लिया है। व्यापार एवं अन्य प्रकार के आर्थिक, सामाजिक व तकनीकी सहयोग को बढ़ावा दिया है। भारत अपने आकार एवं जनसंख्या में ही नहीं, अपितु अपने साधनों एवं सामाजिक शक्ति में भी अन्य सभी सदस्यों से बराबर या बड़ा है। इसलिये भारत सार्क देशों की राजनीति का केंद्र बिंदु है। व्यापार, वाणिज्य और निवेश आदि की दृष्टि से भारत समर्थ निवेश का स्रोत तथा अन्य सभी सार्क सदस्यों के उत्पादों के लिये एक बड़ा बाज़ार भी है।
- भारत दक्षिण एशियाई क्षेत्र में शांति एवं सौहार्द्र की महत्ता को समझता है इसलिये भारत ने सकारात्मक रूख के साथ इसे बनाए रखने तथा विवादों का समाधान द्विपक्षीय समझौतों से करने की सदैव कोशिश की है।

सार्क में भारत एक सशक्त स्थिति रखता है। दक्षिण एशिया में स्थायित्व एवं सामूहिक सहयोग के साथ विकास की दिशा में आगे बढ़ने में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

सार्क का भविष्य (*Future of SAARC*)

दक्षिण एशिया में सामूहिक प्रयासों तथा सहयोग के साथ अपने सदस्य देशों के हितों को साधने में सार्क ने अब तक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, परंतु उसे अब तक यथोचित सफलता नहीं मिल पाई है। कई अवसरों पर सदस्यों के बीच आपसी सहयोग एवं तालमेल का अभाव देखा गया है। हाल ही में वर्ष 2016 में होने वाले दक्षेस शिखर सम्मेलन, इस्लामाबाद, (पाकिस्तान) की बैठक को रद्द कर दिया गया था। भारत-पाकिस्तान के संबंधों की तनातनी, आपसी विश्वास में कमी तथा अन्य क्षेत्रों की ओर आकर्षित होने से भी सार्क को हानि पहुँची है। पिछड़ेपन के साथ, सीमा क्षेत्रों के विवाद भी चिंता के विषय हैं। सार्क देशों को इन सभी संदर्भों को बातचीत से हल करके आगे बढ़ते हुए दक्षिण एशिया में स्थिरता लाने के साथ इस संगठन को सशक्त बनाने की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

दक्षिण एशियाई देशों के सामने अनेक कठिनाइयाँ हैं जिनमें अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, मादक पदार्थों की बड़े पैमाने पर तस्करी, क्षेत्र में परमाणु प्रसार का खतरा, हथियारों की होड़, सदस्य देशों में निर्धनता, भुखमरी, बेरोज़गारी, अंतर्राष्ट्रीय ऋण का बढ़ता बोझ, विदेशी शक्तियों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, कुपोषण, निम्न शिक्षा स्तर आदि शामिल हैं। साथ ही ये देश गंभीर आर्थिक समस्याओं से भी गुज़र रहे हैं। ऐसे में सार्क देशों को संकल्प व दृढ़ता के साथ इन समस्याओं के हल के लिये गंभीर प्रयास करने की आवश्यकता है। सार्क के मंच को सभी सदस्य देशों की प्रगति का आधार बनाए जाने की ओर प्रयास करने तथा सुधार लाने की आवश्यकता है। सार्क की सशक्तता में दक्षिण एशिया के सभी देशों की उन्नति का रास्ता निकलेगा। सार्क में सामूहिकता की संस्कृति का विकास होना बहुत ज़रूरी है तभी सार्क आपसी सहयोग से दक्षिण एशिया क्षेत्र में शांति, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और आर्थिक समृद्धि हासिल करने के अपने सामूहिक उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगा।

4.6 जी-20 (*G-20*)

जी–20 की स्थापना वर्ष 1999 में वित्तीय स्थायित्व को बनाए रखने के साथ ब्रेटनवुड्स संस्थागत प्रणाली की रूपरेखा के भीतर आने वाले व्यवस्थित एवं महत्त्वपूर्ण औद्योगीकृत और विकासशील अर्थव्यवस्था वाले देशों को एक मंच पर लाकर अनौपचारिक वातचीत एवं सहयोग को बढ़ावा देने के लिये की गई थी। जी–20 अपने सदस्य देशों के अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग और वित्तीय मुद्दों पर निर्णय करने के लिये प्रमुख मंच है। इसमें 19 देश और यूरोपीय संघ सम्मिलित हैं।

- जी–20 के सदस्य हैं- अर्जेंटीना, ऑस्ट्रेलिया, ब्राज़ील, कनाडा, चीन, फ्राँस, जर्मनी, भारत, इंडोनेशिया, इटली, जापान, रिपब्लिक ऑफ कोरिया, मेक्सिको, रूस, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका, तुर्की, यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं यूरोपीय संघ।
- जी–20 के सदस्य वैश्विक घरेलू उत्पाद का लगभग 85%, वैश्विक व्यापार का 75% और विश्व की आबादी के दो-तिहाई से अधिक का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- जी–20 अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन, संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और वित्तीय स्थिरता बोर्ड के साथ मिलकर कार्य करता है। अन्य क्षेत्रीय संगठनों को भी जी–20 की प्रमुख बैठकों में हिस्सा लेने के लिये आमंत्रित किया जाता है।

जी-20 और भारत (*G-20 and India*)

- जी-20 विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं का समूह है, जिसका लक्ष्य स्थायी एवं समावेशी वैश्विक अर्थव्यवस्था को सुनिश्चित करना है।
- जी-20 समसामयिक वैश्विक मुद्दों, जैसे- जलवायु परिवर्तन, भ्रष्टाचार, आतंकवाद, कर चोरी इत्यादि पर सामूहिक रूप से विचार-विमर्श करने तथा इन समस्याओं के समाधान तथा रणनीति बनाने हेतु एक मंच प्रदान करता है।

- यह भारत के आर्थिक सुधार एवं विकास कार्यक्रमों को सहयोग एवं समर्थन प्रदान करता है। इसके अंतर्गत ऊर्जा सुरक्षा, अवसंरचना विकास, आतंकवाद के विरुद्ध प्रभावी कार्यवाही, समावेशी विकास कार्यक्रम इत्यादि सम्मिलित हैं।
- जी-20 समूह वैश्विक स्तर पर मुक्त अर्थव्यवस्था को सुनिश्चित करने हेतु प्रयास करता है तथा अनुचित संरक्षणवादी नीतियों की निंदा करता है। भारतीय विदेश व्यापार को सकारात्मक दिशा देने के लिये यह अत्यंत आवश्यक है।
- 'बेस इरोजन एंड प्रॉफिट शिफ्टिंग' जैसी संकल्पना को आधार बनाकर जी-20 समूह अनुचित कर चोरी की प्रवृत्तियों के समाधान हेतु प्रयासरत है, जो सभी देशों में कर अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक है।
- इसके अतिरिक्त अन्य देशों के साथ आर्थिक एवं व्यापारिक संबंधों को बढ़ावा देने, वैश्विक स्तर पर गरीबी कम करने, आवश्यक कर संबंधी सूचनाएँ साझा करने तथा ऊर्जा संरक्षण हेतु प्रभावी उपाय करने की दिशा में भी जी-20 समूह सक्रिय है।

भारत इस मंच का उपयोग कर वैश्विक स्तर पर अपनी भूमिका को बढ़ा सकता है, अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में संरचनात्मक सुधार हेतु अपनी मांग को सशक्त कर सकता है तथा वैश्विक मुक्त अर्थव्यवस्था को सुनिश्चित करने की दिशा में समर्थन प्राप्त कर सकता है।

4.7 जी-77 *(G-77)*

यह तीसरी दुनिया या विकासशील देशों का सबसे बड़ा संगठन है, जो संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत इन देशों के पारस्परिक हितों के मुद्दों पर कार्य करता है। इसकी स्थापना 77 विकासशील देशों द्वारा सन् 1964 में की गई थी। वर्तमान में इसके 134 सदस्य देश हैं।

उद्देश्य *(Objectives)*

इस संगठन का प्रमुख उद्देश्य विकासशील देशों में सामूहिक आर्थिक हितों की प्राप्ति करना एवं उन्हें प्रोत्साहित करना है। दक्षिण-दक्षिण सहयोग को व्यापक बनाने में यह संगठन केंद्रीय भूमिका निभाता है। जी-77 के संयुक्त घोषणा-पत्र को 1964 के संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन (United Nations Conference on Trade and Development) के जेनेवा सत्र में अपनाया गया था। जी-77 की प्रथम मंत्रिस्तरीय बैठक 1967 में अल्जीयर्स (Algiers) में हुई थी।

जी-77 महासभा (General Assembly) आर्थिक एवं सामाजिक परिषद तथा सहायक संस्थाओं से संबंधित समितियों, प्रायोजकों के संबंध में वक्तव्य (Statements) देती है तथा बड़े सम्मेलनों एवं अन्य बैठकों से संबंधित निर्णयों एवं प्रस्तावों पर वार्ता करती है। जी-77 पेरेज गुएरेरो ट्रस्ट (Perez Guerrero Trust) के माध्यम से दक्षिण-दक्षिण सहयोग से संबंधित परियोजनाओं का वित्तीयन (Funding) भी करता है।

जी-77 और भारत *(G-77 and India)*

जी-77 विकासशील देशों का समूह होने के कारण अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में इन देशों के हितों को सुनिश्चित करने हेतु प्रयास करता है, जो भारतीय हितों के साथ भी साम्य रखता है। जी-77 नस्लवाद के विरुद्ध, निःशस्त्रीकरण, जलवायु संरक्षण संबंधी मुद्दों के लिये वैश्विक जनमत तैयार करने का कार्य करता है। यह विकसित देशों से तकनीकी एवं वित्तीय सहायता को विकासशील देशों में पहुँचाने हेतु भी कार्य करता है। सतत् विकास संबंधी नीतियों के निर्माण में सहायता तथा वैश्विक सहयोग सुनिश्चित करता है।

अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के विकास के लिये व्यापार सुगमता को बढ़ाने के साथ दक्षिण-दक्षिण सहयोग को प्रोत्साहित करने हेतु भी प्रयत्नशील रहता है। ये सभी मुद्दे भारतीय हितों के अनुकूल हैं, यही कारण है कि जी-77 का भारत के लिये विशेष महत्त्व है।

4.8 बिम्सटेक *(BIMSTEC)*

बिम्सटेक की स्थापना जून, 1997 में बैंकाक सम्मेलन में चार सदस्य देश भारत, बांग्लादेश, श्रीलंका एवं थाईलैंड द्वारा की गई। प्रारंभ में इसे बिस्टेक (BISTEC) कहा जाता था। नवंबर 1997 में म्याँमार के शामिल होने पर बिम्सटेक (Bangladesh, India, Myanmar, Sri Lanka, Thailand Economic Co–operation) कहा जाने लगा। वर्ष 2004 में नेपाल एवं भूटान के शामिल होने के बाद इसका नाम बदलकर बंगाल की खाड़ी बहु-क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग उपक्रम (Bay of Bengal Initiative for Multi–sectoral Technical and Economic Co–operation) किया गया है। इसमें शामिल सात सदस्यों में से 5 देश दक्षेस के भी सदस्य हैं।

बिम्सटेक सात देशों का एक उप-क्षेत्रीय मंच है, जिससे आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी एवं सामाजिक क्षेत्र में दक्षिण एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया के मध्य एक सेतु के रूप में कार्य करने के लिये गठित किया गया है। इसका मुख्यालय ढाका (बांग्लादेश) में स्थित है।

एशियाई विकास बैंक 2005 से बिम्सटेक का विकास सहयोगी है जो बिम्सटेक देशों में परिवहन अवसंरचना एवं विकास सुधार को प्रोत्साहित करता है। एडीबी ने बिम्सटेक ट्रांसपोर्ट इंफ्रास्ट्रक्चर एंड लॉजिस्टिक स्टडी (BTILS) प्रोजेक्ट को पूरा कर दिया है। सदस्य देशों में व्यापार एवं निवेश को बढ़ाने के क्रम में और उच्चस्तरीय वाणिज्यिक प्रणाली से बाहरी व्यक्तियों को निवेश हेतु आकर्षित करने के लिये मुक्त व्यापार समझौता फ्रेमवर्क (Free Trade Area Framework Agreement) की व्यवस्था की गई है। भारत ने इसके संस्थापक सदस्य के रूप में सदैव ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

बिम्सटेक और सार्क *(BIMSTEC and SAARC)*

सार्क (दक्षेस) के सदस्य देशों में परस्पर अविश्वास तथा विवाद के कारण वह आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग में बाधक बनता है। वहीं पाकिस्तान का लगातार भारत विरोध तथा असहयोगात्मक रवैया इस क्षेत्र में अनिश्चितता का माहौल बनाए रखता है। पाकिस्तान तथा कुछ अन्य देशों की नीति क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाने के बजाय भारत को संकुचित करने की प्रतीत होती है। दक्षिण एशिया में आतंकवाद एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, जिस पर पाकिस्तान के साथ सहमति नहीं बन पाने के कारण यह अनावश्यक असहयोग एवं विवाद को जन्म देता है। इस संदर्भ में विचारकों एवं विश्लेषकों के द्वारा बिम्सटेक को प्रोत्साहित कर सार्क को प्रतिस्थापित करने का सुझाव दिया जाता रहा है। किंतु यह ध्यान देने योग्य है कि पाकिस्तान इस क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण देश है तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में पड़ोसी का कोई विकल्प नहीं होता है। अतः दक्षिण एशिया में शांति एवं स्थायित्व सुनिश्चित करने के लिये पाकिस्तान में लोकतंत्रीकरण को बढ़ावा देते हुए परस्पर अविश्वास को कम करने तथा विवादों को हल करने का प्रयास किया जाना चाहिये। भारत की भूमिका को अधिक प्रभावी एवं सकारात्मक करने की आवश्यकता है, जिससे इस क्षेत्र में सभी का विकास सुनिश्चित हो सके। अतः बिम्सटेक की अपनी उपयोगिता है, किंतु सार्क (दक्षेस) को समाप्त करने का विचार अतार्किक है।

4.9 शंघाई सहयोग संगठन *(Shanghai Cooperation Organisation)*

शंघाई सहयोग संगठन की स्थापना क्षेत्रीय आतंकवादी खतरों से निपटने और यूरेशियाई क्षेत्र में राजनीतिक, आर्थिक, सैन्य और सुरक्षा सहयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से वर्ष 2001 में की गई थी। शुरुआत में रूस, चीन, कज़ाकिस्तान, किर्गिस्तान, तज़ाकिस्तान और उज़्बेकिस्तान इसके संस्थापक सदस्य बने।

उज़्बेकिस्तान की राजधानी ताशकंद में 23–24 जून, 2017 को शंघाई सहयोग संगठन की बैठक के दौरान भारत और पाकिस्तान दोनों को इसकी सदस्यता मिल गई है। चीन के प्रभुत्व वाले संगठन की सदस्यता से भारत को आतंकवाद से मुकाबला करने के साथ ही सुरक्षा और रक्षा से संबंधित मुद्दों पर व्यापक तरीके से अपनी बात कहने में मदद मिलेगी।

दुनिया में सर्वाधिक ऊर्जा खपत वाले देशों में शामिल भारत एस.सी.ओ. का सदस्य बनने के बाद मध्य एशिया में गैस और तेल अन्वेषण परियोजनाओं में अपनी पैठ बढ़ा सकता है, यह क्षेत्र तेल प्रचुर क्षेत्र है।

- इसका मुख्यालय बीजिंग, चीन में है।
- वर्तमान में राशिद अलीमोव शंघाई सहयोग संगठन के महासचिव हैं।
- शंघाई सहयोग संगठन की 18वीं बैठक वर्ष 2018 में चीन में प्रस्तावित है।

4.10 एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग *(Asia-Pacific Economic Co-operation)*

एशिया-प्रशांत आर्थिक सहयोग की स्थापना नवंबर 1989 में हुई थी। हिमालय से एंडीज तक एवं न्यूज़ीलैंड से कनाडा तक विस्तृत क्षेत्र की प्रमुख एवं बड़ी अर्थव्यवस्था वाले राष्ट्र इसके सदस्य हैं। इसका मुख्यालय सिंगापुर में स्थित है। एपेक में कुल 21 देश सदस्य हैं। भारत अभी इस संगठन का सदस्य नहीं बना है। एपेक ने वर्ष 2020 तक एशिया प्रशांत क्षेत्र को स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र बनाने की घोषणा की है जो विश्व का सबसे बड़ा स्वतंत्र क्षेत्र होगा।

4.11 हिंद महासागर तटीय संघ *(Indian Ocean Rim Association)*

- 'हिंद महासागर तटीय संघ' हिंद महासागर के तट पर स्थित 21 देशों का संगठन है। हिंद महासागर विश्व का तीसरा सबसे बड़ा महासागर है, जिसके माध्यम से विश्व के लगभग एक-तिहाई माल (Cargo) तथा दो-तिहाई तेल (Oil) का परिवहन किया जाता है।
- हिंद महासागर के तटीय देशों के संगठन का प्रस्ताव पहली बार दक्षिण अफ्रीका के तत्कालीन राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला द्वारा 1995 में उनकी भारत यात्रा के दौरान रखा गया, जिसे ध्यान में रखकर हिंद महासागर तटीय क्षेत्रीय सहयोग संघ का चार्टर स्वीकार किया गया। 2013 में संघ का नाम परिवर्तित करके हिंद महासागर तटीय संघ (IORA) रखा गया।
- हिंद महासागर तटीय संघ मुख्यत: आर्थिक संगठन है, जिसका उद्देश्य सदस्य देशों में सतत् और संतुलित विकास को प्रोत्साहन, साझे हित एवं लाभ से जुड़े आर्थिक क्षेत्रों में सहयोग को बढ़ावा देना है। इसके साथ ही सदस्य देशों के मध्य व्यापारिक उदारीकरण की संभावनाओं को तलाशने और क्षेत्र में वस्तुओं, सेवाओं, निवेश तथा तकनीकों के प्रवाह की बाधाओं को कम करने, व्यापार और उद्योग, शैक्षिक संस्थाओं, विद्वानों और सदस्य देशों की जनता के मध्य मेल-जोल को प्रोत्साहन प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाना है।

4.12 भारत अफ्रीका फोरम शीर्ष सम्मेलन *(India-Africa Forum Summit)*

भारत अफ्रीका फोरम शीर्ष सम्मेलन का आयोजन तीन वर्षों के अंतराल पर भारत एवं अफ्रीका महाद्वीप के देशों के बीच किया जाता है। 2015 में नई दिल्ली में आयोजित सम्मेलन में सभी अफ्रीकी देशों ने भाग लिया। इस सम्मेलन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- भारत और अफ्रीकी देशों के मध्य संबंध सुदृढ़ करना तथा वैश्विक मुद्दों यथा-आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, समुद्री सुरक्षा तथा सतत् विकास इत्यादि पर सहयोग एवं समन्वय को बढ़ावा देना।
- समुद्र आधारित अर्थव्यवस्था के विकास हेतु मिलकर कार्य करना।
- दोनों क्षेत्रों के मध्य व्यापार एवं निवेश गतिविधियों को बढ़ाने पर जोर देना।
- अफ्रीका प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण है, जो भारत की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है तथा भारत के लिये एक महत्त्वपूर्ण बाज़ार के रूप में उभर रहा है।
- भारत में अफ्रीकी छात्रों के लिये शिक्षा के आयाम में विस्तार करना।

- अफ्रीका में आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग के साथ-साथ मानव संसाधन विकास के द्वारा क्षमता निर्माण को प्रमुखता प्रदान करना है।
- भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विकल्पों का विविधीकरण करते हुए पश्चिम एशिया पर अति निर्भरता को कम करना।
- अफ्रीका के समग्र विकास में अन्य देशों के साथ मिलकर योगदान करना। इसमें शामिल है- अवसंरचना विकास, स्वास्थ्य सुविधाएँ, शिक्षा, खाद्यान्न एवं ऊर्जा सुरक्षा।
- दोनों क्षेत्रों के मध्य 'पीपुल टू पीपुल कॉन्टैक्ट' (लोगों के मध्य जुड़ाव) को प्रोत्साहित करना।

उद्देश्य

- समावेशी और सतत् विकास पर आधारित एक समृद्ध अफ्रीका का गठन।
- अफ्रीका के पुनर्जागरण और संपूर्ण अफ्रीका के आदर्शों पर आधारित राजनीतिक तौर पर एकीकृत महाद्वीप।
- सुशासन, लोकतंत्र, मानवाधिकार, न्याय और कानूनसम्मत शासन के प्रति सम्मान रखने वाला अफ्रीका।
- शांतिपूर्ण और सुरक्षित अफ्रीका।
- मज़बूत सांस्कृतिक पहचान, साझी विरासत, मूल्यों और नैतिकता से युक्त अफ्रीका।
- ऐसा अफ्रीका, जहाँ विकास लोगों से जुड़ा हो तथा महिलाओं और युवाओं की क्षमता का पूरा उपयोग किया जाए।
- मज़बूत, एकजुट और प्रभावशाली वैश्विक सहयोगी के रूप में अफ्रीका।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 24 अक्टूबर, 1945 को हुई। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है।
- वर्तमान में यू.एन.ओ. की सदस्य संख्या 193 है तथा इसके महासचिव **एंटोनियो गुटेरेस** (पुर्तगाल) हैं।
- ब्रेटनवुड्स सम्मेलन (1944) के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं अंतर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास बैंक की स्थापना की नींव रखी गई। इन्हें ब्रेटनवुड्स सम्मेलन की संतान कहते हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्यों की कुल संख्या 189 है। इसका मुख्यालय वाशिंगटन डी.सी. में स्थित है। इसका नवीनतम सदस्य नौरू गणराज्य है।
- आई.एम.एफ. सदस्य राष्ट्रों के भुगतान संतुलन में सुधार के लिये अल्पकालीन ऋण जबकि वर्ल्ड बैंक सदस्य राष्ट्रों के संतुलित विकास के लिये दीर्घकालीन ऋण प्रदान करता है।
- आसान शर्तों पर सस्ते दीर्घकालीन ऋण प्रदान करने के कारण अंतर्राष्ट्रीय विकास संघ को सुलभ ऋण-खिड़की कहा जाता है।
- गैट (General Agreement on Tariffs & Trade) के स्थान पर 1 जनवरी, 1995 को विश्व व्यापार संगठन की स्थापना हुई। यह संयुक्त राष्ट्र से संबद्ध अभिकरण नहीं है।
- जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ एंड ट्रेड (GATT) वर्ष 1948 में प्रभाव में आया। इसका मुख्यालय जेनेवा में बनाया गया।
- वर्ल्ड बैंक का मुख्यालय वाशिंगटन में है तथा इसकी वर्तमान सदस्य संख्या 189 है।
- एशियाई विकास बैंक (ADB) की स्थापना 19 दिसंबर, 1966 को हुई। इसका मुख्यालय मनीला (फिलीपींस) में है। सदस्य देशों की संख्या 67 है।
- अंकटाड की स्थापना 30 दिसंबर, 1964 को हुई। इसका मुख्यालय जेनेवा में तथा इसकी सदस्य संख्या 194 है।
- दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ (आसियान) की स्थापना बैंकाक घोषणा-पत्र द्वारा 8 अगस्त, 1967 को हुई।
- एशिया-प्रशांत आर्थिक सहयोग (एपेक) नवंबर, 1989 को बना। इसका मुख्यालय सिंगापुर में है तथा 21 राष्ट्र इसके सदस्य हैं। भारत इसका सदस्य नहीं है।
- सार्क 8 दिसंबर, 1985 को स्थापित हुआ। इसमें आठ देश सम्मिलित हैं। इसका मुख्यालय काठमांडू (नेपाल) में है।

- सार्क की स्थापना का श्रेय बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति जिया-उर्र-रहमान को दिया जाता है।
- ब्रिक-2008 में औपचारिक रूप ग्रहण कर पाया। वर्ष 2017 में चीन में ब्रिक्स का नौवां शिखर सम्मेलन संपन्न हुआ।
- न्यू डेवलपमेंट बैंक (ब्रिक्स बैंक) की स्थापना जुलाई 2014 में हुई। इसका मुख्यालय शंघाई (चीन) में है तथा इसके पहले अध्यक्ष के.वी. कामथ (भारत) हैं।
- जी-20 महत्त्वपूर्ण अर्थव्यवस्थाओं का संगठन है। इसकी स्थापना वर्ष 1999 में हुई। हाल ही में जुलाई 2017 को हैम्बर्ग, जर्मनी में इसका शिखर सम्मेलन संपन्न हुआ।
- शंघाई सहयोग संगठन (SCO) की स्थापना वर्ष 2001 में हुई थी। हाल ही में 23-24 जून, 2017 को उज़्बेकिस्तान के ताशकंद में भारत एवं पाकिस्तान को एक साथ इसकी सदस्यता प्राप्त हुई।
- यूनेस्को की स्थापना वर्ष 1945 में हुई। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्राँस) में है तथा सदस्य संख्या 195 है। यह संयुक्त राष्ट्र का महत्त्वपूर्ण घटक है।
- यूनेस्को विश्व विरासत सूची स्थल जारी करता है। भारत के 35 स्थान इस सूची में सम्मिलित हैं।
- यू.एन.डी.पी. वर्ष 1965 में स्थापित हुआ। इसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है। यू.एन.डी.पी. प्रतिवर्ष मानव विकास रिपोर्ट (HDR) जारी करता है।
- एशिया-पैसिफिक इकॉनमिक को-ऑपरेशन (APEC) सम्मेलन-2014 में बीजिंग, चीन में आयोजित किया गया।
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (WIPO) वर्ष 1967 में बना। इसका मुख्यालय जेनेवा (स्विट्ज़रलैंड) में स्थित है तथा 189 देश इसके सदस्य हैं। यह पेटेंट, रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क, कॉपीराइट, औद्योगिक डिज़ाइन एवं भौगोलिक संकेतक जारी करता है।
- ब्रिक का प्रथम सम्मेलन येकाटेरिनबर्ग (रूस) में 2009 में हुआ था।
- पाकिस्तान हिंद महासागर के तट पर स्थित होने के बाद भी हिंद महासागर तटीय संघ का सदस्य नहीं है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नांकित में से किस देश ने जुलाई 2013 में यूरोपीय संघ की सदस्यता ली है? **RAS (Pre) 2013**
(1) क्रोएशिया (2) डेनमार्क
(3) बेल्जियम (4) पोलैंड

2. उस क्षेत्रीय समूह को इंगित कीजिये, जिसमें भारत एक पूर्ण सदस्य के रूप में संबद्ध नहीं है।
(1) ब्रिक्स
(2) जी-4
(3) शंघाई सहयोग संगठन
(4) आसियान

3. 2018 में दक्षेस का सम्मेलन कहाँ होगा?
(1) नेपाल (2) श्रीलंका
(3) भूटान (4) भारत

4. क्षेत्रीय संगठन आसियान का क्षेत्र है-
(1) पूर्वी एशिया (2) ऑस्ट्रेलिया
(3) दक्षिण पूर्व एशिया (4) दक्षिण एशिया

5. सार्क का मुख्यालय कहाँ स्थित है?
(1) काठमांडू
(2) नई दिल्ली
(3) इस्लामाबाद
(4) ढाका

6. भारत का वैश्विक व्यापार का कितना प्रतिशत यूरोपीय संघ के साथ होता है?
(1) 10% (2) 13.4%
(3) 18% (4) 22.6%

7. गुटनिरपेक्ष आंदोलन में सदस्यों की संख्या कितनी है?
(1) 80 (2) 140
(3) 120 (4) 193

8. वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में यूरोपीय संघ की हिस्सेदारी है-
(1) 30% (2) 22.8%
(3) 35% (4) 26%

9. ब्रेक्ज़िट की प्रक्रिया किस संधि के अंतर्गत पूरी की जाएगी?
(1) नीस संधि (2) मैस्ट्रिच संधि
(3) रोम संधि (4) लिस्बन संधि

10. 2016 में गुटनिरपेक्ष सम्मेलन कहां आयोजित किया गया था?
(1) इंडोनेशिया (2) वेनेजुएला
(3) केन्या (4) घाना

11. गुटनिरपेक्ष सम्मेलन का आयोजन कितने वर्षों के अंतराल पर किया जाता है?
(1) दो (2) तीन
(3) चार (4) एक

12. यूरोज़ोन के अंतर्गत कितने देश समान मुद्रा 'यूरो' का प्रयोग करते हैं?
(1) 22 (2) 28
(3) 19 (4) 26

13. ब्रिक्स का प्रथम शिखर सम्मेलन (ब्रिक के स्वरूप में) कहाँ आयोजित हुआ था?
(1) जोहान्सबर्ग (2) बीज़िंग
(3) सेंट पीट्सबर्ग (4) येकाटेरिनबर्ग

14. भारत आसियान का पूर्ण वार्ता भागीदार कब बना?
(1) 2002 (2) 1992
(3) 1995 (4) 2000

15. आसियान का मुख्यालय कहाँ स्थित है?
(1) जकार्ता (2) मनीला
(3) सिंगापुर (4) हनोई

16. मलक्का जलसंधि इनमें से किन्हें जोड़ती है?
(1) हिन्द महासागर-अरब सागर
(2) बंगाल की खाड़ी-अंडमान सागर
(3) हिन्द महासागर-दक्षिण चीन सागर
(4) प्रशांत महासागर-पूर्वी चीन सागर

17. 'दक्षेस' किस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है?
(1) दक्षिण पूर्व एशिया
(2) दक्षिण एशिया
(3) पूर्वी एशिया
(4) मध्य एशिया

18. 'बेस इरोज़न एंड शिफ्टिंग' की संकल्पना को किस समूह ने महत्त्व प्रदान किया है?
(1) जी-20 (2) जी-77
(3) आसियान (4) ब्रिक्स

19. जी-77 कितने देशों का समूह है?
(1) 90 (2) 77
(3) 50 (4) 134

20. बिम्सटेक का सचिवालय कहाँ है?
(1) कोलंबो (2) नई दिल्ली
(3) ढाका (4) काठमांडू

21. निम्नलिखित में से कौन-सा देश हिन्द महासागर तटीय संघ का सदस्य नहीं है?
(1) श्रीलंका (2) पाकिस्तान
(3) मालद्वीप (4) ऑस्ट्रेलिया

22. अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में शामिल होने वाला नवीनतम सदस्य देश कौन-सा है?
(1) तुवालु (2) इरीट्रिया
(3) नौरू (4) दक्षिण सूडान

23. भारत के कितने स्थल यूनेस्को की विश्व विरासत स्थल सूची में शामिल हैं?
(1) 27 (2) 29
(3) 30 (4) 35

24. यूनेस्को का मुख्यालय कहाँ है?
(1) न्यूयॉर्क (2) पेरिस
(3) वाशिंगटन (4) रोम

25. शंघाई सहयोग संगठन का मुख्यालय कहाँ अवस्थित है?
(1) शंघाई (2) बीज़िंग
(3) मॉस्को (4) ताशकंद

उत्तरमाला

1. (1) 2. (4) 3. (2) 4. (3) 5. (1) 6. (2) 7. (3) 8. (2) 9. (4) 10. (2)
11. (2) 12. (3) 13. (4) 14. (3) 15. (1) 16. (3) 17. (2) 18. (1) 19. (4) 20. (3)
21. (2) 22. (3) 23. (4) 24. (2) 25. (2)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. 'येकाटेरिनबर्ग शिखर सम्मेलन' की प्रासंगिकता क्या है?
RAS (Mains) 2016
2. 'जी-20' की प्रासंगिकता को स्पष्ट कीजिये।
RAS (Mains) 2016
3. ब्रिक्स (BRICS) देशों से आप क्या समझते हैं?
RAS (Mains) 2013
4. वैश्विक स्तर पर क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग हेतु स्थापित किन्हीं तीन संघों के नाम दीजिये?
RAS (Mains) 2013
5. शंघाई सहयोग संगठन में शामिल देशों के नाम बताइये।
6. वर्तमान में गुट निरपेक्ष आंदोलन की प्रासंगिकता क्या है?
7. भारत की 'लुक ईस्ट नीति' और 'एक्ट ईस्ट नीति' के मध्य अंतर स्पष्ट करें।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दजिये)

1. वर्तमान में सार्क के समक्ष क्या चुनौतियाँ हैं?
RAS (Mains) 2016
2. हाल ही में नई दिल्ली में आयोजित भारत-अफ्रीका फोरम शीर्ष सम्मेलन-2015 के क्या प्रमुख उद्देश्य थे?
RAS (Mains) 2013
3. "भारत एवं आसियान देशों के मध्य सहयोग महत्त्वपूर्ण है।" विश्लेपण कीजिये।
4. हिन्द महासागर तटीय संघ का उद्देश्य एवं महत्त्व बताएँ।
5. ब्रिक्स समूह की भारत के संदर्भ में प्रासंगिकता को स्पष्ट करें।
6. सार्क की भारत के लिये क्या प्रासंगिकता है?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. भारत के लिये गुटनिरपेक्ष आंदोलन का क्या महत्त्व है? स्पष्ट करें।
2. आसियान भारत के लिये क्यों महत्त्वपूर्ण है?
3. एक्ट ईस्ट नीति के संबंध में भारत के समक्ष क्य चुनौतियाँ और संभावनाएँ हैं? वर्णन करें।
4. बिम्सटेक और सार्क की तुलनात्मक महत्ता भारत लिये क्या है?

अध्याय
5

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद
(International Terrorism)

आतंकवाद के संदर्भ में अनेक मत दिये जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक स्तर पर अभी तक इसे औपचारिक रूप से परिभाषित नहीं किया जा सका है। यद्यपि विचारकों एवं विश्लेषकों की एक व्यापक सहमति एवं समझ के अनुसार आतंकवाद से तात्पर्य ऐसे हिंसक कृत्यों से है, जिनका उद्देश्य अपनी विचारधारा के प्रचार-प्रसार तथा निहित धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक हितों की प्राप्ति हेतु भय का वातावरण उत्पन्न करना है। बड़े पैमाने पर हिंसा का प्रयोग निहत्थी भीड़ पर करने के कारण इसके गुणनकारी परिणाम होते हैं, वहीं वर्तमान में मीडिया की सक्रियता, सोशल मीडिया की व्यापक पहुँच और इस प्रकार के अन्य प्रचार माध्यम इसे अनचाहे सहयोग प्रदान करने का ही कार्य करते हैं। आतंकवाद का प्रमुख उद्देश्य व्यापक जनसमूह को भयाक्रांत कर अपनी विचारधारा के प्रति मनोवैज्ञानिक स्तर पर प्रभाव उत्पन्न करना है।

5.1 आतंकवाद *(Terrorism)*

'आतंकवाद' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग फ्राँस की क्रांति के दौरान हुआ, जबकि अमेरिका में राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन के कार्यकाल में तथा उसके पश्चात् 9/11 की घटना के बाद यह शब्द अत्यधिक प्रचलित हुआ।

आज विश्व के लगभग सभी हिस्सों में आतंकवादी गतिविधियाँ अपने पाँव पसार चुकी हैं। यही नहीं, समय के साथ इसके स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहा है, जिसे हम सुनियोजित आतंकवादी गतिविधियों, यथा- 26/11 मुंबई, 9/11 संयुक्त राज्य अमेरिका से लेकर हाल ही में हुए लोन वूल्फ अटैक, यथा- लॉस वेगास की घटना, पेरिस की घटना के रूप में देख सकते हैं।

5.2 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद *(International Terrorism)*

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद से तात्पर्य आतंकवाद के ऐसे स्वरूप से है, जिसका विस्तार राष्ट्रीय सीमाओं से परे होता है। इसमें आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देने वाला व्यक्ति या समूह तथा इस कृत्य से प्रभावित होने वाले लोग दो या अधिक अलग-अलग राष्ट्रों से संबंधित हो सकते हैं। इसके प्रमुख उदाहरण के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका की 9/11 आतंकवादी घटना को देखा जा सकता है, जिसका संचालन अल कायदा प्रमुख ओसामा बिन लादेन के द्वारा सऊदी अरब में रहते हुए किया गया। इस घटना ने आतंकवाद के प्रति वैश्विक जनसमूह का ध्यान आकर्षित करते हुए विश्व को गंभीरता एवं विनाशक प्रवृत्ति से अवगत कराया।

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद को निम्नलिखित परिस्थितियों में परिभाषित किया जा सकता है–

- जब आपराधिक कृत्य का निष्पादन अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत हुआ हो।
- इस कृत्य से उत्पन्न खतरे का स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय हो।
- इन कृत्यों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग की आवश्यकता एवं अपेक्षा हो।

कुछ प्रमुख आतंकवादी संगठन

संगठन	प्रमुख संचालन क्षेत्र
आई.एस.आई.एस.	सीरिया, इराक, लेबनान
अलकायदा	मध्य पूर्व, सोमालिया
हक्कानी नेटवर्क	अफगानिस्तान
लश्कर-ए-तैयबा	पाकिस्तान, अफगानिस्तान, कश्मीर
इंडियन मुजाहिदीन	भारत
जैश-ए-मोहम्मद	पाकिस्तान
हमास	फिलीस्तीन
बोको हरम	नाइजीरिया, कैमरून, चाड
हिजबुल्लाह	लेबनान
अल-नुशरा	सीरिया, लेबनान
अल सय्याफ	फिलीपींस, मलेशिया

5.3 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद का खतरा क्यों बढ़ता जा रहा है? *(Why the Risk of International Terrorism is Increasing)*

आधुनिक संचार तकनीकों के प्रयोग से आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देना अपेक्षाकृत सरल होता जा रहा है, जिससे प्रभावित स्थल से दूर रहते हुए व्यापक हिंसक प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। साथ ही विचारधारा के स्तर पर बँटे विश्व में बढ़ते ध्रुवीकरण के कारण विभिन्न जातीय, धार्मिक नस्लीय समूहों के उच्च शिक्षित लोगों का रुझान भी इस तरफ देखा जा रहा है, जिसका सीधा असर आतंकवादी गतिविधियों की प्रभाविता एवं गंभीरता को बढ़ाता है। तकनीकी शिक्षा प्राप्त युवा आधुनिक तकनीकों का बेहतर प्रयोग करने में सक्षम होते हैं तथा आतंकवाद के प्रति सुभेद्यता को गंभीर बनाते हैं।

वहीं सोशल मीडिया, मीडिया एवं अन्य प्रचार माध्यमों के सहयोग से आतंकवादी संगठनों को अपनी विचारधारा के तीव्र प्रसार में सहायता प्राप्त हुई है, जिससे युवाओं को आकर्षित करने तथा संगठन से जुड़कर अपनी सेवा प्रदान करने हेतु प्रोत्साहित किया जा रहा है।

इसके कुछ उदाहरण हाल ही में केरल एवं बंगलुरु में देखे गए, जहाँ आई.एस.आई.एस. में भर्ती होने के इच्छुक युवाओं ने सीरिया या इराक जाने के असफल प्रयास किये।

5.4 आतंकवाद के विभिन्न स्वरूप *(Different Forms of Terrorism)*

- सुनियोजित आतंकी गतिविधियाँ
- मानव बम
- मास किलिंग
- सीमा पार आतंकवाद
- स्लीपर सेल
- लोन वूल्फ अटैक
- राज्य प्रायोजित आतंकवाद
- इस्लामिक आतंकवाद

स्लीपर सेल

यह ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जो सामान्य जीवन जीते हैं तथा आम जनता के बीच रहते हैं किंतु किसी अतिवादी विचारधारा से प्रभावित होते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर सक्रिय होकर आतंकवादी गतिविधियों, यथा- बम लगाना, मानव बम के रूप में कार्य करना इत्यादि को अंजाम देते हैं।

लोन वूल्फ अटैक (Loan Wolf Attack)

इससे तात्पर्य ऐसे हिंसक कृत्यों से है, जिसमें कोई 'लोन वूल्फ' (अकेला व्यक्ति) बिना किसी आतंकवादी संगठन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े, बिना उसके संसाधनों (वित्तीय अथवा हथियार) का प्रयोग किये मात्र विचारधारा से प्रोत्साहित होकर ऐसी गतिविधियों को अंजाम देता है। लोन वूल्फ अपनी प्रवृत्ति में आतंकवाद के किसी भी अन्य रूप से अधिक घातक होता है, जिसका प्रमुख कारण इसका छिपा हुआ होना है। कोई भी व्यक्ति कहीं से भी किसी आतंकवादी विचारधारा से प्रभावित होकर स्वयं के स्तर पर संसाधनों का प्रयोग कर हिंसक घटना को अंजाम दे सकता है, जिस वजह से ऐसी गतिविधियों पर नज़र रखना तथा इनके विरुद्ध बचाव का कार्य करना अत्यंत मुश्किल है। इससे निपटने के लिए बहुआयामी रणनीति बनाकर सरकारों को आपसी सहयोग के माध्यम से कार्य करना चाहिये। शिक्षा के स्तर पर मूल्यों की महत्ता के विषय में जागरूक करना, सामाजिक-आर्थिक विकास की प्रक्रिया को तीव्र करना, सांप्रदायिक भेदभाव को दूर करते हुए असंतोष को कम करना तथा सभी संस्कृतियों एवं विचारों के प्रति सहिष्णु तथा सामंजस्यपूर्ण भावना का विकास करना राष्ट्रों की प्राथमिकता में होना चाहिये।

5.5 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद से उपजे नकारात्मक परिणाम *(Negative Impacts Due to International Terrorism)*

- धार्मिक समूहों में परस्पर अविश्वास तथा सामाजिक सद्भाव एवं सौहार्द्र में कमी के कारण आपसी मनमुटाव, तनाव तथा सांप्रदायिक भेदभाव का जन्म।
- असुरक्षा के माहौल में व्यापार एवं वाणिज्य में बाधा, व्यावसायिक माहौल में निराशा तथा विदेशी निवेश प्रतिकूल रूप से प्रभावित।
- जनसमूह में असुरक्षा एवं भय के वातावरण के कारण शासन के प्रति असंतोष।
- हिंसक गतिविधियों के कारण जान-माल की अत्यधिक हानि।
- आतंकवादी संगठन की विचारधारा के प्रचार-प्रसार से अन्य युवाओं के उनके प्रति आकर्षित होने एवं संगठन से जुड़ने का खतरा इत्यादि।

5.6 अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के प्रसार को रोकने हेतु की गई पहलें/समाधान हेतु सुझाव *(Initiatives Taken to Prevent International Terrorism/ Recommendation for Conciliation)*

वैश्विक तथा क्षेत्रीय संगठनों ने आतंकवाद की विभीषिका को समझते हुए इससे निपटने हेतु प्रयास आरंभ कर दिये हैं। ब्रिक्स सम्मेलन, जी-20 सम्मेलन, संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन जैसे सभी मंचों से आतंकवाद को समाप्त करने हेतु रणनीति बनाने तथा प्रभावी कार्यवाही करने का आह्वान किया जाता है। साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर अनेक देशों के द्वारा आतंकवाद से निपटने हेतु विशेषज्ञ संस्थाओं का गठन किया गया है। देशों के मध्य इससे संबंधित आसूचनाओं को साक्षा करने हेतु भी प्रयास किये जा रहे हैं।

इन सबके अतिरिक्त निम्नलिखित उपायों को अपनाकर आतंकवाद के प्रति बढ़ते भय को कम करने का प्रयास किया जा सकता है।

- आतंकवादी संगठनों के वित्तीयन तंत्र को निष्प्रभावी कर वित्तीय सहायता से वंचित करना।
- सभी देशों को एक मत से आतंकवाद को परिभाषित करना तथा किसी भी प्रकार के समर्थन को वापस लेना। जिन देशों द्वारा आतंकवादी संगठनों का हित पोषण किया जाता है, उन पर वैश्विक स्तर पर व्यापारिक एवं अन्य प्रतिबंध आरोपित करना।
- सीमा पार आतंकवादी गतिविधियों से यथाशक्ति निपटना तथा प्रभावी सीमा प्रबंधन।
- जातीय, नस्लीय, धार्मिक एवं सांस्कृतिक भेदभावों को दूर करने हेतु मूल्य आधारित शिक्षा को अनिवार्य बनाना।
- कम विकसित एवं विकासशील देशों में आर्थिक-सामाजिक विकास हेतु प्रभावी कार्यक्रम चलाकर विषमता को कम करना एवं क्षेत्रीय आकांक्षाओं को पुष्ट करते हुए असंतोष की भावना को समाप्त करना।
- युवाओं को कौशल प्रशिक्षण, पर्याप्त एवं उचित रोज़गार प्रदान कर ऐसी गतिविधियों में भाग लेने से रोकना, जहाँ उद्देश्य अपनी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आतंकी संगठन में शामिल होना हो।
- आतंकवाद के प्रचार-प्रसार को महत्त्व प्रदान न करना तथा सोशल मीडिया का प्रयोग करते हुए # No fear जैसे कैंपेन आयोजित करना।

आतंकवाद को बल उसके प्रति जनमानस में व्याप्त भय के कारण प्राप्त होता है। सभी को एकजुट होकर इस भय के प्रति सशक्त रूप से सामने आने तथा विभाजनकारी शक्तियों को नकार देने की आवश्यकता है। मानवीय मूल्यों को समझकर, उनके प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाकर, हिंसक गतिविधियों के प्रति रोष प्रकट कर तथा व्यापक जनजागरूकता के माध्यम से आतंकवाद के बढ़ते दायरे को कम करने में सहायता मिल सकती है। अतः सभी देशों की सरकारों को साथ मिलकर इस दिशा में संसाधन जुटाने तथा उनका प्रभावी क्रियान्वयन करने की आवश्यकता है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- आतंकवाद पर आधारित वैश्विक परिस्थितियों के अनुसार ऑस्ट्रेलिया स्थित इंस्टीट्यूट फॉर इकोनॉमिक्स एंड पीस के द्वारा ग्लोबल टेररिज्म इंडेक्स (वैश्विक आतंकवाद सूचकांक) जारी किया जाता है।
- इसके अनुसार विश्व में सर्वाधिक 78% आतंकवादी घटनाएँ 5 देशों में घटित होती हैं, जो हैं- इराक, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, नाइजीरिया एवं सीरिया।
- 2016 के वैश्विक आतंकवाद सूचकांक में भारत 7.484 अंकों के साथ 8वें स्थान पर है, जबकि इराक (9.96 अंक) प्रथम स्थान पर है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. सितंबर 2013 में नैरोबी स्थित मॉल पर हमला करने वाला आतंकवादी संगठन था- **RAS (Pre) 2013**

(1) अल शबाब (2) अल कायदा
(3) हमास (4) हिजबुल्लाह

2. निम्न में से कौन सही सुमेलित नहीं है?

सूची- क	**सूची-ख**
(1) अल-नुशरा	सीरिया
(2) हमास	फिलीस्तीन
(3) हक्कानी नेटवर्क	अफगानिस्तान
(4) बोको हरम	सऊदी अरब

3. निम्न में से किस स्थान पर 2017 में 'लोन वूल्फ' घटनाएँ नहीं हुई हैं?

(1) लास वेगास (2) पेरिस
(3) लंदन (4) अलास्का

4. निम्न में से कौन-सा आतंकवादी संगठन नाइजीरिया में सक्रिय है?

(1) हमास (2) हिजबुल्लाह
(3) बोको हरम (4) अल सय्याक

5. वैश्विक आतंकवाद सूचकांक जारी किया जाता है-

(1) एमनेस्टी इंटरनेशनल, लंदन
(2) अंतर्राष्ट्रीय शांति संस्था, वियना
(3) इंस्टीट्यूट फॉर इकॉनोमिक्स एंड पीस, सिडनी
(4) विश्व बैंक, वाशिंगटन डी.सी.

उत्तरमाला

1. (4) 2. (2) 3. (4) 4. (3) 5. (3)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15-20 शब्दों में दीजिये)

1. वैश्विक आतंकवाद सूचकांक क्या है? **RAS (Mains) 2013**
2. स्लीपर सेल क्या है?
3. कुछ प्रमुख आतंकवादी संगठनों के नाम लिखें।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50-50 शब्दों में दीजिये)

1. लोन वूल्फ अटैक से आप क्या समझते हैं?
2. अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद क्या है?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. आधुनिक समय में आतंकवाद का स्वरूप अधिक चिंतनीय बनता जा रहा है। कारणों का उल्लेख करें।
2. आतंकवाद से निपटने हेतु प्रभावी रणनीति कैसी होनी चाहिये? स्पष्ट करें।

अध्याय
6

भारत की विदेश नीति
(Foreign Policy of India)

अन्य देशों के साथ संबंधों से संबंधित नीति को किसी देश की विदेश नीति (Foreign Policy) कहा जाता है। सामान्यत: विदेश नीति के अंतर्गत राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रसंगों से जुड़े सभी विषयों, जैसे कि शांति, नि:शस्त्रीकरण, जलवायु परिवर्तन, विकास, न्याय, भूमंडलीकरण आदि के संदर्भ में देशों के मध्य संबंधों के संचालन को शामिल किया जाता है। अन्य शब्दों में, यह वैश्विक मामलों में अपने राष्ट्रीय हितों की तलाश में किसी देश की नीति की रूपरेखा होती है। वस्तुत: एक राष्ट्र-राज्य अपनी विदेश नीति के माध्यम से ही अन्य राज्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने का प्रयत्न करता है।

6.1 विदेशी नीति : अर्थ एवं कार्य-क्षेत्र *(Foreign Policy : Meaning and Scope)*

जहाँ तक विदेश नीति को सुपरिभाषित करने का प्रश्न है तो विदेश नीति की अपनी पारंपरिक परिभाषा है- "किसी अन्य देश के व्यवहार को बदलने तथा अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में अपनी गतिविधियों को समायोजित करने के लिये अपने देश के क्रियाकलापों की व्यवस्था ही हमारी 'विदेश नीति' कहलाती है।"

यह माना जाता है कि किसी देश की विदेश नीति केवल उसके राष्ट्रीय हित (National Interest) से प्रेरित होती है तथा दूसरे देशों के साथ समझौता करने में कोई भी अन्य प्राथमिकता सम्मिलित नहीं होती। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि फिर 'राष्ट्रीय हित' का निर्माण कैसे होता है? इस संदर्भ में दो मत सामने आते हैं- आदर्शवादी मत (Idealistic View), जहाँ 'राष्ट्रीय हित' को कुछ सार्वभौमिक भौतिक आकांक्षाओं, जैसे कि शाश्वत शांति अथवा मानवीय भाई-चारे से जोड़कर देखा जाता है और यथार्थवादी मत (Realistic View), जिसके अनुसार राष्ट्रीय हित (National Interest) को राष्ट्रीय शक्ति (National Power) के बराबर का दर्जा दिया जाता है।

वास्तव में राष्ट्रीय हित (National Interest) ही विदेश नीति की प्रमुख संकल्पना है, क्योंकि राष्ट्रीय हित ही किसी राज्य की आकांक्षाओं को परिभाषित करते हैं। इसका राज्य की अन्य नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के संदर्भ में भी व्यावहारिक रूप से प्रयोग किया जा सकता है। साथ ही इसका राजनीतिक रूप से भी अनुप्रयोग व्यवहार्य है। यहाँ यह बात महत्त्वपूर्ण है कि आज वैश्वीकरण के दौर में किसी देश के राष्ट्रीय हित को उसकी भू-राजनीतिक अवस्थिति (Geo-Political Location) एवं वैश्विक पर्यावरण (Global Environment) से अलग करना मुश्किल है। कुल मिलाकर किसी देश की विदेश नीति उसके विभिन्न लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये संचालित कार्य-योजनाओं के कुल योग से कहीं अधिक होती है। साथ ही किसी देश की विदेश नीति न केवल घरेलू कारकों बल्कि अंतर्राष्ट्रीय कारकों से भी निर्धारित होती है। इनमें कुछ गतिशील कारक (Dynamic Factors) होते हैं, जो समय के साथ-साथ परिवर्तित होते रहते हैं और कुछ मौलिक कारक (Basic Factors) होते हैं जो विदेश नीति पर दीर्घकालिक प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि किसी देश की विदेश नीति के कार्यान्वयन हेतु निरंतरता और परिवर्तन दोनों ही आयाम अपना अस्तित्व रखते हैं।

6.2 विदेश नीति का महत्त्व (*Importance of Foreign Policy*)

आज के विश्व में घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय जगत के बीच विद्यमान अंतर निरंतर कम होता जा रहा है। अत: जब हम विदेश नीति के बारे में सोचते हैं तो हमें इसके घरेलू निहितार्थों के विषय में भी अवश्य सोचना चाहिये। किसी भी देश की विदेश नीति का अंतिम प्रयोजन अपने नागरिकों की सुरक्षा के साथ-साथ उनके हित एवं खुशहाली को भी बढ़ावा देना होता है। आज एक ऐसे विश्व की दरकार बनी हुई है, जो आपको शांति एवं सुरक्षा का ऐसा परिवेश उपलब्ध करा सके, जिसमें आप विदेशी शोषण से सुरक्षित रहकर और बाहरी अवसरों का लाभ उठाते हुए निरंतर प्रगति कर सकें।

हमें किसी भी देश को अपने बहुपक्षीय क्रियाकलापों के लिये निरंतर नए निकायों और व्यवस्थाओं से जोड़ना होता है। उदाहरण के लिये, भारत 'इब्सा' वार्ता मंच (IBSA Dialogue Forum), ब्रिक्स (BRICS) तथा दक्षेस (SAARC) से लेकर

पूर्वी एशियाई शिखर सम्मेलन (EAS) का सदस्य होने के साथ-साथ जी-20 (G-20) तथा एशियाई क्षेत्रीय मंच (ARF) का भी सदस्य है। उसे शंघाई सहयोग संगठन (SCO) के पूर्ण सदस्य का दर्जा जून 2017 में कज़ाखस्तान में होने वाले शिखर सम्मेलन में मिल गया और वह जी-7 (G-7) की बैठकों में भी भाग लेता है। संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) जैसे अंतर्राष्ट्रीय एवं सुविख्यात संगठनों में अपने राष्ट्रीय हितों को उचित स्थान दिलाने के साथ-साथ भारत हिंद महासागर क्षेत्रीय सहयोग तट संघ (IOR-ARC) जैसे संगठनों में भी अपना प्रमुख स्थान रखता है।

किसी देश को केवल बहुपक्षीय संगठनों के बारे में ही नहीं सोचना चाहिये। चूँकि अन्य अर्थों में भी विश्व अब बदल गया है, उसे किसी भी अन्य देश में उपलब्ध सुविधाओं का लाभ उठाने व अपनी सेवाएँ उनके लिये प्रस्तुत करने को उद्यत रहना चाहिये। उदाहरण के लिये, आज सर्वोत्तम जेट-विमानों का विनिर्माण ब्राज़ील की कंपनी एम्ब्रेयर (Embraer) द्वारा किया जा रहा है। विश्व की सबसे ऊँची इमारत दुबई में है, जिसने ताइपेई में विश्व की पहली सबसे ऊँची इमारत को पीछे छोड़ दिया है; विश्व के सबसे बड़े विमान का विनिर्माण रूस और यूक्रेन में किया जा रहा है; अमेरिका बेशक आज विश्व की एकमात्र महाशक्ति (Superpower) है, परंतु अन्य देश भी अब विभिन्न क्षेत्रों में उसका मुकाबला कर रहे हैं। वस्तुतः किसी भी देश को ऐसे विश्व के अनुकूल बनना चाहिये। कुल मिलाकर विदेश नीति इतना महत्त्वपूर्ण मुद्दा है कि इसमें सिर्फ विदेश मंत्रालय ही नहीं, बल्कि पूरे समाज और विशेष रूप से शिक्षित युवाओं की सक्रिय भागीदारी अपेक्षित होती है ताकि उनके देश की प्रस्थिति विश्व मंच पर उजागर हो और उनके अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को साकार किया जा सके।

6.3 भारत की विदेश नीति *(India's Foreign Policy)*

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के संदर्भ में, भारत की विदेश नीति के उद्देश्य इतने आधारभूत हैं कि उन्हें विभिन्न राजनीतिक दलों और जनसाधारण का समर्थन प्राप्त है तथा उन्हें एक राष्ट्रीय नीति (National Policy) का आधार माना जा सकता है। वस्तुतः भारत की विदेश नीति राष्ट्रीय हितों (National Interest) और अंतर्राष्ट्रीय शांति (International Peace) दोनों को अपना उद्देश्य मानकर चलती है। वैसे यह भी सच है कि भारत की कोई भी सरकार अपनी मर्ज़ी से नीतियाँ बनाने का अधिकार नहीं छोड़ सकती है, साथ ही संविधान में उल्लिखित मूल्यों के विरुद्ध कोई समझौता भी नहीं कर सकती। इस प्रकार भारतीय विदेश नीति में स्थापित उद्देश्यों और आदर्शों का प्रारूप भारत के संविधान में भी परिलक्षित होता है। भारतीय विदेश नीति का ऐसा ही एक मज़बूत स्तंभ है- अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा में विश्वास।

ब्रिटिश भारत के विभाजन और पाकिस्तान की स्थापना ने देश भर में घृणा का वातावरण उत्पन्न किया और दो संप्रदायों के बीच मन-मुटाव ने गहरे घाव छोड़े थे। स्वतंत्रता से पूर्व भारत एक समूची आर्थिक इकाई था। इसके विभाजन ने अनेक आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया। सन् 1947 में अंग्रेज़ों के भारत से चले जाने के बाद भी देश में कुछ छोटी-छोटी फ्राँसीसी और पुर्तगाली बस्तियाँ शेष रह गई थीं। अतः यह स्वाभाविक था कि इन दोनों देशों से बातचीत करके इन विदेशी बस्तियों को स्वतंत्र करा लिया जाता, जिनमें पांडिचेरी और चंद्रनगर शामिल थे। लेकिन पुर्तगाल ने गोवा इत्यादि अपने एकाधिकार वाले प्रदेशों को स्वतंत्र करने से इनकार कर दिया। अतएव सन् 1961 के अंत में सैनिक कार्यवाही करके ही इन बस्तियों का भारत में विलय किया जा सका।

इस काल में अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ काफी कठिन थीं क्योंकि शीतयुद्ध (Cold War) का आरंभ हो चुका था और पूर्व-पश्चिम संबंध (East-West Relations) तेज़ी से बिगड़ रहे थे। इन परिस्थितियों में भारत ने विश्व शांति को अपनी विदेश नीति का प्रमुख उद्देश्य बनाया। भारत विश्व शांति (World Peace) को केवल एक आदर्श ही नहीं मानता था, वरन् उसका यह विश्वास था कि विश्व शांति से ही भारत की अपनी सुरक्षा सुनिश्चित हो सकेगी। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इस संदर्भ में कहा था- “शांति केवल एक उत्कट अपेक्षा ही नहीं है; यह दरअसल, एक आपातकालीन आवश्यकता भी है।”

भारत जैसे विकासशील देश के लिये जहाँ बहुमुखी विकास नितांत आवश्यक था, आंतरिक एवं अंतर्राष्ट्रीय शांति एक प्राथमिक उद्देश्य बन गई थी। इसी कारण भारत ने विश्व शांति (World Peace) को अपनी नीति का प्रथम उद्देश्य माना। यहाँ शांति से तात्पर्य तनाव कम करने और (तत्कालीन) शीतयुद्ध को समाप्त करने से भी था।

एक ऐसी विश्व व्यवस्था के लिये, जो सहयोग पर आधारित हो, संयुक्त राष्ट्र (United Nations) का प्रभावी होना इस काल में एक आवश्यक शर्त मानी जा सकती थी। अतः भारत ने यह निश्चय किया कि वह इस अंतर्राष्ट्रीय संस्था को पूर्ण

समर्थन प्रदान करेगा। इसके अतिरिक्त, अंतर्राष्ट्रीय शांति के लिये अस्त्रों (Arms) में कमी करना भी बेहद ज़रूरी था। पूर्व में परंपरागत अस्त्रों में कमी करने के उसके सारे प्रयास विफल हो चुके थे, भले ही राष्ट्र संघ (League of Nations) के संविधान में ऐसा करने का स्पष्ट निर्देश दिया गया था। निःशस्त्रीकरण (Disarmament) की समस्या उस समय और भी गंभीर हो गई जब परमाणु अस्त्रों (Nuclear Weapons) का निर्माण हुआ और विश्व शांति के लिये संकट कहीं अधिक बढ़ गया। अतः भारत की विदेश नीति का एक प्रमुख उद्देश्य यह निर्धारित किया गया कि परंपरागत अस्त्रों में भी कमी के साथ-साथ सभी परमाणु अस्त्रों का विनाश भी सुनिश्चित किया जाए।

विश्व शांति की स्थापना की दिशा में भारत की विदेश नीति में प्रमुख उपाय थे- पराधीन देशों की स्वतंत्रता और रंगभेद का उन्मूलन। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये भारत ने एक ऐसी स्वतंत्र विदेश नीति अपनाई, जो किसी भी शक्तिशाली देश के प्रभाव से सदा मुक्त रही। इसके लिये यह भी आवश्यक था कि भारत का संयुक्त राष्ट्र (UN) में पूर्ण विश्वास हो और उसे पूरा समर्थन दिया जाए। इस प्रकार विश्व शांति के लिये प्रयासरत रहना भारत का प्राथमिक उद्देश्य रहा है। हमारी विदेश नीति का एक अन्य उद्देश्य निर्धनता, बीमारी और निरक्षरता को दूर करना भी है। बहरहाल ये केवल भारतीय समाज की ही बुराइयाँ नहीं हैं, एशिया और अफ्रीका के अधिकांश विकासशील देशों में ये समस्याएँ पाई जाती हैं। अतः भारत ने यह भी तय किया कि वह अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों के साथ सहयोग करेगा ताकि सभी विकासशील देशों को बीमारी, भुखमरी, निर्धनता, निरक्षरता और अकाल जैसी बुराइयों से संघर्ष के लिये एकजुट किया जा सके।

अपनी विदेश नीति के प्रभाव से ही अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे कि विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), खाद्य और कृषि संगठन (FAO) और संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (UNICEF) से न केवल भारत को सहायता मिलती है, बल्कि वह इनके साथ सहयोग करके समस्त मानवजाति के कल्याण हेतु योगदान भी करता है। दूसरी ओर भारत ने स्वेच्छा से राष्ट्रमंडल (Commonwealth of Nations) का सदस्य बने रहना भी स्वीकार किया है। वास्तव में राष्ट्रमंडल ऐसे स्वतंत्र और प्रभुसत्तासंपन्न देशों का संगठन है जो ब्रिटेन की रानी को अपना अध्यक्ष स्वीकार करता है। भारत का यह विश्वास है कि राष्ट्रमंडल का सदस्य बने रहने से उसको अनेक लाभ प्राप्त हो रहे हैं और यह सदस्यता उसके राष्ट्रीय हितों (National Interests) को प्रभावित नहीं करती। कुल मिलाकर, भारतीय विदेश नीति के उद्देश्य हैं- सभी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखना, सैनिक गठबंधनों से दूर रहना, गुट निरपेक्षता के नैतिक सिद्धांत का पालन करना, अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का प्रयास करना तथा उन पाँच सिद्धांतों के आधार पर सार्वभौमिक भाई-चारे को प्रोत्साहन देना जिनका 'पंचशील' में उल्लेख है।

अन्य देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के आदर्शों का पालन करने की नीति का भारत ने सदा ही पालन किया है। इन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु भारत की विदेश नीति निर्माताओं ने कुछ निर्णय लिये और कुछ सिद्धांत स्वीकार किये। यद्यपि चीन और पाकिस्तान ने भारत को युद्ध करने के लिये मजबूर किया, फिर भी भारत उन देशों के साथ आरंभिक विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के लिये प्रतिबद्ध रहा है। भारत सभी देशों के साथ, विशेषकर अपने पड़ोसी देशों के साथ मैत्री संबंध बनाने के प्रयास करता रहा है। आज भी वह विश्व शांति के लिये प्रयासरत है और परमाणु अस्त्रों के उन्मूलन एवं संयुक्त राष्ट्र को और सबल बनाने के लिये हर संभव प्रयास करता रहा है।

भारतीय विदेश नीति के आधारभूत सिद्धांत *(Basic Principles of Indian Foreign policy)*

गुट-निरपेक्षता *(Non-alignment)*

द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने के तुरंत बाद एक नए युग का सूत्रपात हुआ जिसमें तनाव की स्थिति अपनी चरम अवस्था पर थी। इस तनाव को शीतयुद्ध (Cold War) का नाम दिया गया। विश्व के अनेक देश दो परस्पर विरोधी गुटों में बँट गए। इनमें एक गुट का नेतृत्व अमेरिका और दूसरे गुट का नेतृत्व भूतपूर्व सोवियत संघ कर रहा था। परंतु भारत ने निश्चय किया कि वह किसी भी शक्ति गुट में शामिल नहीं होगा। भारत द्वारा एक स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का एक कारण यह भी था कि वह सभी देशों के साथ मित्रता के आदर्श और विश्व शांति के नैतिक मूल्यों में विश्वास रखता था। अतः इसने निर्णय किया कि वह अपनी क्षमता का प्रयोग देश के आर्थिक विकास के लिये ही करेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये भारत को न केवल सभी देशों के साथ मित्रता की अपेक्षा थी वरन् वह यह भी चाहता था कि जहाँ से भी संभव हो, उसे आर्थिक सहायता भी प्राप्त हो। उसने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह सभी अंतर्राष्ट्रीय मसलों पर अपने विचार व्यक्त करने के लिये स्वतंत्र रहेगा। भारत का विश्वास था कि किसी भी शक्ति गुट में शामिल होने से वह इस स्वतंत्रता को खो बैठेगा।

दूसरी ओर, भौगोलिक स्थिति के अनुसार, भारत का दक्षिण-पूर्व एशिया और मध्य एशिया के संगम पर अवस्थित होना, हिंद महासागर में उसकी विशेष प्रस्थिति का होना, उत्तर में एक शक्तिशाली साम्यवादी चीन की मौजूदगी आदि अनेक कारणों ने भारत के लिये यह अनिवार्य कर दिया था कि वह सैन्य संधियों से दूर रहे। इस प्रकार 'गुटनिरपेक्षता' की नीति अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को भारत का एक महत्त्वपूर्ण योगदान है जो कि भारतीय दर्शन और परंपरा के भी अनुकूल है।

पंचशील और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व (Panchsheel and peaceful co-existence)

भारतीय दर्शन के अंतर्गत 'वसुधैव कुटुंबकम्' से 'एक विश्व' की भावना को प्रोत्साहन मिलता है। व्यवहार में इसका अर्थ यह है कि विभिन्न देशों में जहाँ अलग-अलग धर्मों के लोग निवास करते हैं और जिनकी सामाजिक व्यवस्थाएँ एक-दूसरे से भिन्न हैं, वे सभी एक-दूसरे की व्यवस्थाओं का आदर करते हुए शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व में रह सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न विचारधाराओं में विश्वास करने वाले देशों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का आदर करना भी भारत की विदेश नीति का एक अन्य प्रमुख सिद्धांत है।

भारतीय दर्शन से उद्धृत उक्त मूल सिद्धांत को सन् 1954 में उस समय औपचारिक मान्यता दी गई जब भारत और चीन ने आपसी संबंधों के आधार के रूप में 'पंचशील के सिद्धांतों की घोषणा' पर हस्ताक्षर किये। इन पाँच सिद्धांतों की व्याख्या 29 अप्रैल, 1954 के भारत-चीन समझौते (Indo-China Agreement, 1954) में विस्तार से की गई थी। वास्तव में यह समझौता भारत और चीन के तिब्बत क्षेत्र के बीच व्यापार संबंध सुनिश्चित करने के लिये किया गया था। इस समझौते की प्रस्तावना में निम्नलिखित 'पंचशील' अर्थात् पाँच सिद्धांतों का उल्लेख किया गया-

(i) एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता का आदर करना।

(ii) परस्पर अनाक्रमण के सिद्धांत का पालन करना।

(iii) एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।

(iv) समानता और परस्पर मित्रता की भावना बनाए रखना।

(v) शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व में विश्वास रखना।

औपनिवेशिक शोषण-तंत्र का विरोध (Opposing colonial system)

भारत की विदेश नीति के निर्माताओं को उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध उनके लिये आस्था का विषय रहा है। भारत स्वयं लंबे समय तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद से पीड़ित रहा था। इसलिये उसने उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के प्रत्येक रूप का विरोध करने का निर्णय किया एवं एशिया और अफ्रीका के पराधीन देशों के स्वतंत्रता-संग्राम में उनका समर्थन किया।

नव-साम्राज्यवाद/नव-उपनिवेशवाद (Neo-colonialism)

प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से किसी राष्ट्र की आर्थिक संप्रभुता पर किसी अन्य राष्ट्र की प्रभुसत्ता का विस्तार नव-साम्राज्यवाद या नव-उपनिवेशवाद कहलाता है।

भारत की विदेश नीति का एक प्रमुख सिद्धांत उपनिवेशों की जनता के आत्म-निर्णय के अधिकार को स्वीकार करना है। भारत का यह विश्वास था कि पराधीन राष्ट्रों को स्वतंत्रता से वंचित रखना मानव अधिकार की अवहेलना है और इससे अंतर्राष्ट्रीय संघर्षों का जन्म होता है।

वर्तमान परिवेश में जबकि उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद समाप्त हो चुका है, यह प्रश्न उठता है कि भारत की विदेश नीति में इस सिद्धांत की क्या प्रासंगिकता रह गई है? भारत के दृष्टिकोण से यह सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है क्योंकि भारत सहित एशिया और अफ्रीका के अनेक देशों में 'नव-उपनिवेशवाद' (Neocolonialism) के नए हथियार का प्रयोग किया जा रहा है। अत: भारत सभी विकासशील देशों के हित में इस सिद्धांत को अपनी विदेश नीति के प्रमुख पक्ष के रूप में रखता है।

नृजातीय आधार पर विभेद का निषेध (Prohibiting apartheid)

भारत की विदेश नीति जातिभेद का प्रत्येक रूप में विरोध करती है क्योंकि भारत समस्त मानव जाति की समानता के सिद्धांत में विश्वास करता है। 1990 के दशक में दक्षिण अफ्रीका रंगभेद का सबसे घृणित उदाहरण था। संयुक्त राष्ट्र के भीतर और बाहर भारत ने हमेशा ही रंगभेद की कड़ी निंदा और आलोचना की। भारत सभी प्रजातियों एवं वर्गों के लोगों की समानता के सिद्धांत का पुरज़ोर समर्थन करता आया है। उदाहरण के लिये, भारत ने क्रिकेट सहित अन्य खेलों में भी दक्षिण अफ्रीका का पूर्ण बहिष्कार किया।

प्रजातिवाद अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिये खतरा उत्पन्न करता है। भारत का यह पूर्ण विश्वास है कि प्रजातिवाद विश्व में संघर्ष का एक प्रमुख स्रोत है। अतः उसने हमेशा एक ऐसे समाज की स्थापना पर ज़ोर दिया है, जहाँ रंग, जाति, वर्ग इत्यादि पर आधारित कोई भेदभाव न हो। भारत संयुक्त राष्ट्र के उन सभी प्रयासों का समर्थन करता आया है, जिनके परिणामस्वरूप मानव अधिकारों की घोषणा के आधार पर समस्त विश्व आज मौलिक स्वतंत्रता का महत्त्व जान चुका है।

विदेशी आर्थिक सहायता पर युक्तियुक्त रणनीति (Rational strategy on foreign economic assistance)

भारत आर्थिक दृष्टि से विकसित नहीं था और देश के अपने संसाधन भी पर्याप्त नहीं थे। अतः उसके आरंभ में आर्थिक विकास के लिये यह ज़रूरी था कि विदेशों से पर्याप्त मात्रा में आर्थिक सहायता प्राप्त की जाए। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत ने एक योजनाबद्ध विकास का कार्यक्रम बनाया। भारत के पास प्राकृतिक संपदा तो बहुत थी, परंतु तकनीकी ज्ञान का अभाव था। इसी बीच उसने राजनीतिक स्तर पर गुटनिरपेक्षता की नीति अपना ली। इसका अर्थ था कि भारत विदेशी मामलों में अपनी स्वतंत्र नीति पर चलना चाहता था।

दूसरी ओर, यदि भारत को तेज़ी से आर्थिक विकास करना था तो उसे पूंजी चाहिये थी, मशीनों की आवश्यकता थी और तकनीकी ज्ञान प्राप्त करना था। देश के बहुमुखी विकास के लिये अनेक परियोजनाएँ शुरू की गईं, जिनकी सफलता के लिये आर्थिक सहायता के साथ-साथ ऋण भी लेना पड़ा। भारत को वित्तीय और तकनीकी सहायता या तो अमेरिका से प्राप्त हो सकती थी या फिर सोवियत संघ से। उस समय ऐसा माना जा रहा था कि सोवियत संघ किसी गैर-साम्यवादी देश को सहायता नहीं देगा। भारत सरकार और देश के व्यापारिक वर्ग दोनों ने यह अनुभव किया कि ऐसी परिस्थितियों में समुचित सहायता केवल अमेरिका से ही मिल सकती थी। स्थिति कुछ भी रही हो लेकिन भारत, अमेरिका से सहायता प्राप्त करने के लिये अपनी स्वतंत्रता, संप्रभुता और गुट-निरपेक्षता की नीति के साथ कोई समझौता करने के पक्ष में नहीं था। इस संदर्भ में 1948 में पं. नेहरू ने कहा कि हम बेशक अपने आर्थिक विकास में देरी कर सकते हैं, परंतु भारत को किसी भी राष्ट्र के आर्थिक प्रभुत्व में नहीं आने देंगे। स्पष्ट है कि भारत केवल बिना शर्त सहायता स्वीकार करना चाहता था।

1949 के अंत तक आर्थिक रूप से भारत, अमेरिका के काफी निकट आ गया था। भारतीय उद्योग जगत की ओर से सरकार पर इस बात के लिये दबाव डाला जा रहा था कि अधिक-से-अधिक विदेशी पूंजी का प्रबंध किया जाए क्योंकि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण व्यावहारिक नहीं था। एक ओर चीन में साम्यवाद की सफलता से भारत में यह अनुभव किया जाने लगा था कि यदि देश का तेज़ी से आर्थिक विकास नहीं हुआ तो यहाँ भी साम्यवाद अपना सिर उठा सकता है। दूसरी ओर अमेरिका में भी यह विचार उभर रहा था कि यदि भारत को शीघ्र ही आर्थिक सहायता नहीं मिली तो इस देश में भी चीन की तरह साम्यवादी सत्ता में आ जाएंगे। वस्तुतः इसी पृष्ठभूमि में अमेरिका द्वारा भारत को आर्थिक सहायता देने की प्रक्रिया आरंभ हुई।

विकास की गति जैसे-जैसे तेज़ होती गई, वैसे-वैसे भारत ने विश्व बैंक तथा कई अन्य देशों से सहायता और ऋण लेना आरंभ कर दिया। कुछ समय बाद सोवियत संघ की यह शंका दूर हो गई कि भारत पश्चिमी देशों के साथ था। परिणाम यह निकला कि इसके बाद से आर्थिक सहायता साम्यवादी गुट के देशों से भी प्राप्त होने लगी।

1980 के दशक में जहाँ एक ओर सोवियत संघ में अनेक कठिनाइयाँ शुरू हुईं, वहीं दूसरी ओर आर्थिक रूप से शक्तिशाली दो नए देश- जर्मनी और जापान उभर आए। इन दोनों देशों ने भी भारत सहित अनेक देशों को आर्थिक सहायता देना आरंभ कर दिया, परंतु दुर्भाग्यवश कि पश्चिमी देश भारत को प्रौद्योगिकी सहायता देने में काफी हिचकिचाहट दर्शाते थे।

संयुक्त राष्ट्र संघ का समर्थन (Support to the united nations)

भारत, संयुक्त राष्ट्र की अनेक विशिष्ट एजेंसियों का भी शुरू से ही एक सक्रिय सदस्य रहा है। वस्तुतः वह संयुक्त राष्ट्र के संस्थापक सदस्यों में से एक है। अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिये भारत की प्रतिबद्धता अतुलनीय है। परमाणु अस्त्रों का समर्थक होना तो दूर की बात है, भारत तो उनका पूर्ण विनाश चाहता है और उसकी यह इच्छा है कि पारंपरिक अस्त्रों तथा सैन्य बलों में भी काफी कमी की जाए। संयुक्त राष्ट्र को शक्तिशाली बनाकर ही इन उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है, भारत का ऐसा मानना है।

अंतर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान (Peaceful resolution to international disputes)

1919 में राष्ट्रसंघ (League of Nations) की स्थापना के साथ ही शांतिपूर्ण समाधान पर सभी राज्यों द्वारा बल दिया जाने लगा। शांतिपूर्ण समाधान के लिये प्रत्यक्ष बातचीत, मध्यस्थता, पंच निर्णय (Arbitration) और न्यायिक निर्णय (Judicial Decisions) जैसे उपायों का प्रयोग किया जाने लगा। कानूनी विवाद बेशक केवल अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के द्वारा ही निपटाए जा सकते हैं, राजनीतिक विवादों का समाधान अन्य उपायों द्वारा भी किया जा सकता है। भारत इस बात में विश्वास नहीं करता कि शक्ति के आधार पर कोई भी बातचीत की जाए। इसी दृष्टिकोण से भारत के संविधान के निर्माता इस बात के लिये उत्सुक थे कि भविष्य में देश की सभी सरकारें विवादों के शांतिपूर्वक समाधान की चेष्टा करें। अतः संविधान के अनुच्छेद-51 में यह निर्दिष्ट है कि सरकार अंतर्राष्ट्रीय विवादों को शांतिपूर्वक निपटाने का प्रयास करेगी।

गुजराल सिद्धांत (Gujral doctrine)

गुजराल सिद्धांत का सार है कि पड़ोसी देशों से संबंध सुधारने के लिये कुछ एकतरफा रियायतें दी जाएँ तथा भारत और अन्य देशों के लोगों के बीच प्रत्यक्ष संबंध स्थापित किये जाएँ। दरअसल गुजराल सिद्धांत भारत को एक ऐसे बड़े देश के रूप में प्रस्तुत करता है, जो अपने छोटे पड़ोसियों को मैत्री के संकेत देकर उनकी सहायता करने को सदा तत्पर है।

सार्क उपग्रह (उपग्रह कूटनीति)

इसका हालिया उदाहरण 5 मई, 2017 को प्रक्षेपित सार्क उपग्रह के रूप में देखा जा सकता है, जिसे भारत ने पूर्णतः अपने खर्च पर अंतरिक्ष में भेजा। यह सभी दक्षेस (पाकिस्तान को छोड़कर) पड़ोसियों को इसकी सेवाएँ, यथा- संचार, आपदा राहत, टेली-शिक्षा-स्वास्थ्य आदि निःशुल्क प्रदान करेगा।

परमाणु शक्ति के विकल्प का प्रभावी उपयोग (Effective use of alternative nuclear power)

प्रारंभ में परमाणु शक्ति के संबंध में 'शांति के लिये परमाणु' (Atoms For Peace) सिद्धांत को अपनाया गया अर्थात् केवल शांतिपूर्ण कार्यों के लिये परमाणु शक्ति के विकास का लक्ष्य रखा गया। आगे चलकर भारत ने परमाणु अस्त्रों के क्षेत्र में अनुसंधान किया। बांग्लादेश के संकट (सन् 1971) के पश्चात् जब यह स्पष्ट होने लगा कि चीन अपने मित्र पाकिस्तान की परमाणु अस्त्र निर्माण में सहायता कर सकता है, तब भारत को गंभीरता से अपने परमाणु अस्त्र कार्यक्रम पर विचार करना पड़ा। इससे पूर्व सन् 1964 में चीन ने अपना प्रथम परमाणु विस्फोट किया था तथा वह परमाणु अस्त्र संपन्न देश बन गया था। चीन और अमेरिका के मध्य बढ़े राजनीतिक संबंधों को देखते हुए भारत ने सन् 1974 में पहला परमाणु परीक्षण (पोखरन प्रथम) किया, परंतु विश्व समुदाय द्वारा इस विषय पर उठाए गए सवाल के संदर्भ में भारत ने स्पष्ट किया कि यह मात्र उसका शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट (Peaceful Nuclear Explosion – PNE) ही था।

तत्पश्चात् मई 1998 में तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने साहसिक कदम उठाकर परमाणु परीक्षण करवाया परमाणु परीक्षण अत्यंत गोपनीय रूप से किया गया इसके फलस्वरूप भारत ने स्वयं को परमाणु अस्त्र संपन्न राज्य (Nuclear Weapon State) घोषित कर दिया। भारत ने विश्व समुदाय द्वारा की गई आलोचनाओं का तथा अमेरिका व उसके मित्रों के द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों का साहसपूर्वक सामना किया। वाजपेयी ने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि भारत अब परमाणु अस्त्र संपन्न देश बन गया है। उन्होंने यह भी कहा कि भारत भविष्य में अब कोई परीक्षण नहीं करेगा और उसने स्वेच्छा से ही यह रोक लगाई है। स्मरण रहे कि भारत ने न तो परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर किये हैं और न ही प्रस्तावित व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि (CTBT) को स्वीकृति दी है। अपनी विदेश नीति के आधारभूत सिद्धांत के रूप में भारत इस कथन पर अब भी कायम है।

भारतीय विदेश नीति के भू-राजनीतिक एवं भू-आर्थिक कारक *(Geo-Political and Geo-Economic Factors of Indian Foreign Policy)*

भारतीय विदेश नीति के निर्धारण में विभिन्न भू-राजनीतिक तथा भू-आर्थिक कारकों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसी भी देश की विदेश नीति निर्धारण में भू-राजनीतिक व भू-आर्थिक कारकों का विशेष योगदान होता है। भौगोलिक अवस्थिति, हिंद महासागर के शीर्ष पर भारत की अवस्थिति, हिमालय पर्वत, इसका विशाल आकार एवं इसकी विशाल

जनसंख्या, प्राकृतिक सीमाएँ और मानव निर्मित सीमाएँ आदि कुछ ऐसे घटक हैं जिन्होंने विदेश नीति के स्वरूप को निर्धारित करने में अहम भूमिका निभाई है।

यदि हम भारत की भौगोलिक अवस्थिति की बात करें तो चीन, दक्षिण-पूर्व एशिया, दक्षिण एशिया, पश्चिमी व पूर्वी अफ्रीका के साथ इसका महत्त्वपूर्ण जुड़ाव है। भारत का विशाल आकार एवं बड़ी जनसंख्या इसकी राष्ट्रीय शक्ति के प्रमुख स्रोत हैं। प्राकृतिक सीमाओं के अंतर्गत हिमालय एवं हिंद महासागर द्वारा भारत की सीमाएँ निर्धारित होती हैं। मानव निर्मित सीमाओं के अंतर्गत पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं चीन के साथ उसकी निर्धारित सीमाएँ भी विशिष्ट रूप में भारतीय विदेश नीति की प्रकृति का निर्धारण करती हैं। भू-आर्थिक कारकों के अंतर्गत आर्थिक विकास तथा आर्थिक सहयोग के संदर्भ में भारत की आवश्यकताएँ वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग की संकल्पना, प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता के साथ-साथ उनका अनुकूलतम दोहन करने की प्रवृत्ति पर निर्भर करती हैं। भारत के विशाल बाज़ार तथा अर्थव्यवस्था की भावी संभावनाओं ने भी भारत की विदेश नीति को महत्त्वपूर्ण स्वरूप प्रदान किया है।

भारतीय विदेश नीति से संबद्ध महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ *(Important Institutions Associated with India's Foreign Policy)*

- संसद
- विदेश मंत्रालय
- प्रधानमंत्री कार्यालय
- मीडिया
- थिंक टैंक
- राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार
- राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद

भारतीय विदेश नीति की बदलती प्रवृत्ति *(Changing Facets of Indian Foreign Policy)*

भारतीय विदेश नीति स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर अब तक विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रमों के आलोक में गत्यात्मक (Dynamic) प्रवृत्तियों को धारण करती रही है। 'गुटनिरपेक्षता' और 'पंचशील' के मूल सिद्धांतों पर जिस ठोस-स्वतंत्र विदेश नीति की स्थापना की गई उसे केंद्र में रखकर आवश्यक और अनिवार्य परिवर्तनों को भी इसमें पर्याप्त स्थान दिया जाता रहा है। उदाहरण के लिये, वर्तमान एकध्रुवीय विश्व में गुटनिरपेक्षता की नीति (Policy of Non-Alignment) की प्रासंगिकता पर सवाल उठने लगे। 'गुटनिरपेक्षता' का सिद्धांत शीतयुद्धोत्तर विश्व में पुनर्परिभाषित हो गया और भारतीय विदेश नीति में इस चुनौती के अनुकूल परिवर्तन करने के भी पर्याप्त प्रयास किये जाते रहे हैं।

भारतीय विदेश नीति की प्रवृत्तियों में सर्वप्रथम एवं महत्त्वपूर्ण परिवर्तन 1962 में भारत-चीन युद्ध के उपरांत देखा गया। यह परिवर्तन 'रक्षा कूटनीति' के समावेश के रूप में किया गया। इसी क्रम में भारत ने अपनी सुरक्षा प्रणालियों को सुदृढ़ बनाने के लिये भी प्रयास किये। साठ के दशक के उत्तरार्द्ध में घरेलू अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिये विदेश नीति के माध्यम से महत्त्वपूर्ण प्रयास किये गए। इनमें विशेषकर 'भारत-अमेरिका आर्थिक संबंध' तथा 'भारत-पश्चिमी यूरोप आर्थिक संबंध' अति महत्त्व रखते थे।

इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन सन् 1971 की 'भारत-सोवियत संघ शांति एवं मित्रता संधि' के रूप में सामने आई। इसका नकारात्मक प्रभाव यह हुआ कि भारत-अमेरिका के संबंध निम्नतम स्तर पर आ गए। सत्तर का दशक परमाणु मुद्दों को दृष्टिगत रखते हुए भी भारतीय विदेश नीति के लिये महत्त्वपूर्ण रहा। उल्लेखनीय है कि वर्ष 1972 में परमाणु अप्रसार संधि (NPT) को हस्ताक्षर के लिये वैश्विक समुदाय के समक्ष रखा गया। इस पर हस्ताक्षर के लिये भारत पर अत्यधिक अंतर्राष्ट्रीय दबाव परिलक्षित हुआ जिससे उबरने के लिये भारत ने वर्ष 1974 में प्रथम परमाणु परीक्षण संपन्न किया। इस प्रकार उन्नत व नवीन तकनीकी विकास इस कालखंड में भारतीय विदेश नीति का प्रमुख पक्ष बनकर उभरा। भारतीय विदेश नीति में रक्षा और प्रौद्योगिकीय प्रणालियों को सुदृढ़ बनाने के लिये किये जाने वाले प्रयासों को शामिल किया गया। सत्तर के दशक के उत्तरार्द्ध में भारत में राजनीतिक अस्थिरता (आपातकाल की उद्घोषणा) के कारण भी विदेश नीति के लिये नई चुनौतियाँ उठ खड़ी हुईं।

अस्सी का दशक अनेक कारणों से महत्त्वपूर्ण रहा। सर्वप्रथम चीन तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में उभरने वाली अलगाववादी प्रवृत्तियों के फलस्वरूप चीन की भारत नीति तथा भारत की चीन-केंद्रित विदेश नीति में व्यापक परिवर्तन देखे गए। शीघ्र

ही भारत-चीन वार्ताओं को पुनर्जीवित किया गया। यह दशक वैश्विक आर्थिक संकट के लिये भी विख्यात रहा। इसके परिणामस्वरूप भारत के अन्य राष्ट्रों से आर्थिक संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इस अवधि में तेल संकट के उत्पन्न होने के कारण भारत ने लैटिन अमेरिकी देशों के साथ संबंध बनाने की पहल की। इस दौर में भारतीय विदेश नीति में ऊर्जा सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए विशेष प्रयास किया जाना एक नवीन प्रवृत्ति दिखाई देती है। इस कालखंड में भारत-अमेरिकी व्यापारिक संबंधों को सुधारने के लिये की जाने वाली पहल भी एक महत्त्वपूर्ण बिंदु रहा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वर्ष 1989-90 तक अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार बन चुका था। अत: भारतीय विदेश नीति की प्रवृत्तियों में होने वाले परिवर्तनों में सबसे महत्त्वपूर्ण चरण 'आर्थिक उदारीकरण' से उत्पन्न परिस्थितियों में देखा गया। इसी बीच भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को बंद अर्थव्यवस्था (Closed Economy) से खुली अर्थव्यवस्था (Open Economy) के रूप में परिणत किया। परिणामत: भारतीय कूटनीति की प्रकृति ने अब राजनीतिक से आर्थिक स्वरूप ले लिया।

वर्ष 1991 में सोवियत संघ के विघटन, शीतयुद्ध की समाप्ति तथा आर्थिक उदारीकरण के आरंभ ने भारतीय विदेश नीति में साम्राज्यवादी विचारों से अलग हटने की प्रवृत्ति को सुदृढ़ता प्रदान की। भारत के वैश्विक संबंधों का विस्तार अब आर्थिक आधारों पर किया जाने लगा। इस काल में भारत-अफ्रीका संबंधों में सुधार, लैटिन अमेरिकी देशों के साथ विशेषकर तेल सुरक्षा के लिये किये जाने वाले प्रयत्न तथा आसियान (ASEAN) और एशिया प्रशांत आर्थिक समुदाय (APEC) के साथ आर्थिक संबंधों की स्थापना का उल्लेख आता है।

विश्व स्तर पर इसी अवधि में नाफ्टा (NAFTA) तथा बिम्सटेक (BIMSTEC) जैसे संगठनों की स्थापना हुई जिन्होंने भारत के आर्थिक संबंधों को दृढ़ आधार प्रदान किया। इसी क्रम में भारत ने खाड़ी सहयोग परिषद (Gulf Cooperation Council-GCC) के साथ संबंध स्थापित करने पर भी बल दिया। इस चरण की महत्त्वपूर्ण विशेषता के रूप में आर्थिक, सामरिक तथा राजनीतिक संबंधों की सुदृढ़ता के लिये 'पूर्व की ओर देखो नीति' (Look East Policy) तथा 'पश्चिम की ओर देखो नीति' (Look West Policy) को भारतीय विदेश नीति में प्रमुख भूमिका प्रदान की गई। इनके अनुपालन में क्रमश: 'दक्षिण-पूर्व एशिया' तथा पश्चिम एशिया के देशों के साथ संबंधों में महत्त्वपूर्ण बदलाव देखने को मिले। भारत के अपने पड़ोसी देशों के साथ संबंधों का शाश्वत आधार पारस्परिकता का सिद्धांत (Principle of Reciprocity) रहा है। इसके अंतर्गत किसी भी सहयोग के बदले दूसरे पक्ष से भारत भी सहयोग की अपेक्षा रखता था। भारतीय विदेश नीति में 'गुजराल सिद्धांत' का समायोजन इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन था। इसके अंतर्गत लाई गई 'सहयोगात्मक क्षेत्रवाद' की संकल्पना ने विदेश नीति को नवीन दिशा दी तथा बदला व्यवहार (गैर-पारस्परिकता) के सिद्धांत (Principle of Non-Reciprocity) को लागू किया गया।

21वीं शताब्दी में भारतीय विदेश नीति कई नवीन और मौलिक बिंदुओं को धारण करती प्रतीत होती है। इसकी शुरुआत वर्ष 2001 में अमेरिका पर हुए आतंकी हमले के फलस्वरूप दृष्टिगत होती है। आतंकवाद जैसे विषय को अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण मिल जाने से भारत की वैश्विक भूमिका का विस्तार हो गया। न सिर्फ एशिया में वरन् संपूर्ण विश्व के राजनीतिक घटनाक्रम में भारत एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिये सक्रिय सहभागी राष्ट्र माना जाने लगा और भारत ने भी इस भूमिका के लिये एक क्रियाशील और गतिशील विदेश नीति के प्रारूप पर तेज़ी से कार्य प्रारंभ किया। इसी अवधि में भारत ने चीन जैसे देशों के साथ नए आर्थिक संबंधों की स्थापना की। वर्ष 2003 में भारत-चीन संयुक्त घोषणा-पत्र ने दोनों देशों के संबंधों को काफी मज़बूती प्रदान की।

भारत की विदेश नीति का एक अन्य महत्त्वपूर्ण उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के लोकतांत्रीकरण की दिशा में प्रयत्न करना भी है। इनमें संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO), विश्व बैंक (World Bank), अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund – IMF), अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (International Atomic Energy Agency – IAEA) आदि प्रमुख हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ में सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिये भारत, ब्राज़ील, जापान और जर्मनी को साथ लेकर जी-4 (G-4) नामक समूह का निर्माण कर अपनी ठोस दावेदारी के लिये प्रयत्नशील है। ऐसे प्रयासों को दृष्टिगत रखते हुए भविष्य में भारतीय विदेश नीति के क्षैतिज विस्तार को स्पष्ट देखा जा सकता है।

आधुनिक विश्व में ऊर्जा सुरक्षा (Energy Security) सभी देशों की विदेश नीति के प्रमुख तत्त्वों में से एक बन चुकी है। भारत ने भी परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में शेष विश्व के साथ उत्पन्न गतिरोध को तोड़ते हुए 2005 में अमेरिका के साथ नागरिक परमाणु समझौता करके एक बड़ी उपलब्धि अर्जित की और भारतीय विदेश नीति को और अधिक बहिर्मुखी बनाने में मदद की।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर आज तक भारतीय विदेश नीति लगातार परिवर्तित हो रही आंतरिक और बाह्य परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बिठाती हुई अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत को एक सुदृढ़ स्थिति प्रदान करती आई है।

विदेश नीति में नवीन परिवर्तन *(New Changes in Foreign Policy)*

पड़ोसी प्रथम की नीति

- शपथ ग्रहण समारोह में प्रधानमंत्री मोदी द्वारा सभी आठ पड़ोसी देशों के राष्ट्राध्यक्षों को आमंत्रित करना।
- सार्क उपग्रह का लाभ निःशुल्क उपलब्ध कराना।

अमेरिका को प्राथमिकता देना

- तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा को गणतंत्र दिवस के मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित करना, इसका स्पष्ट प्रमाण है।
- लिमेयो समझौता (रक्षा समझौता), आतंकवाद पर साझा दृष्टिकोण, जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर सहमति, द. चीन सागर में नौवहन एवं नागरिक उड्डयन की स्वतंत्रता पर समान विचार आदि दोनों राष्ट्रों की नज़दीकियों को स्वतः बयान कर रहे हैं।

प्रधानमंत्री स्तरीय शिखर वार्ता एवं दौरा

- प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा अब तक विभिन्न देशों के किये गए दौरों से स्पष्ट है कि वह स्वयं व्यक्तिगत आधार पर वैदेशिक संबंधों में रुचि ले रहे हैं।
- चाहे वह शक्तिशाली राष्ट्रों के दौरे हों या पड़ोसियों के, यहाँ वह सभी देशों में अपनी व्यक्तिगत उपस्थिति के दौरान द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय संबंधों को नई दिशा दे रहे हैं।

पाकिस्तान नीति एवं आतंकवाद के मुद्दे पर

- वर्तमान में सरकार ने स्पष्ट कर दिया है कि सीमापार आतंकवाद एवं वार्ता दोनों साथ-साथ नहीं चल सकते हैं।
- साथ ही वर्तमान सरकार ने पाकिस्तान से निपटने हेतु सख्त कूटनीति का अवलंबन किया है, जिसके अंतर्गत गोली का जवाब गोली से, सभी द्विपक्षीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर आतंकवाद के मुद्दे पर पाकिस्तान को घेरना या सिंधु नदी जल समझौता अथवा उड़ी-पठानकोट हमलों का जवाब सर्जिकल स्ट्राइक में देना आदि के रूप में देखा जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन पर

- सरकार ने जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी के समक्ष स्वतः प्रतिबद्धता के आधार पर पेरिस जलवायु समझौते का अनुमोदन किया है।
- साथ ही अंतर्राष्ट्रीय सौर संगठन (ISA) के माध्यम से विभिन्न राष्ट्रों को एक साथ जोड़ना सरकार की महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय कूटनीति के रूप में देखा जा सकता है।

निर्यात नियंत्रण समूहों में प्रवेश हेतु कूटनीति

- वर्तमान में सरकार परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह (NSG) में प्रवेश हेतु युद्धस्तर पर कूटनीति कर रही है।
- भारत को मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण समूह (MTCR), ऑस्ट्रेलिया समूह तथा वासेनार समूह में प्रवेश मिल गया है।
- जबकि एन.एस.जी. में चीन की अड़ंगेबाजी के बावजूद पर्याप्त समर्थन जुटाने में भारत सफल रहा। हालाँकि सदस्यता नहीं मिली है लेकिन चीनी आपत्तियों का भी समाधान करने के लिये 'बैकचैनल कूटनीति' जारी है।

विदेश नीति एवं कूटनीति के केंद्र में आम नागरिक का होना

- वर्तमान में एक बड़ा परिवर्तन यह आया है कि आज विदेश मंत्रालय, विदेश में मुश्किल में फँसे एक आम नागरिक की समस्या के समाधान हेतु भी त्वरित कार्रवाई कर रहा है, यथा- इस्लामिक स्टेट के चंगुल से नर्सों की रिहाई, कुलभूषण जाधव के मुद्दे को अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में ले जाना आदि।

- वर्तमान में ट्विटर, फेसबुक आदि जैसे सोशल मीडिया के माध्यम से शीर्षस्तरीय अधिकारियों की संलग्नता इसका मुख्य कारण है, जैसे- सुषमा स्वराज द्वारा ट्विटर के माध्यम से आम भारतीयों हेतु सक्रिय वैदेशिक कूटनीति का प्रदर्शन, जिसे 'ट्विप्लोमेसी' भी कहा जा रहा है।

भारतीय डायस्पोरा

- प्रधानमंत्री मोदी ने अपनी विदेश यात्राओं के दौरान प्रवासी भारतीय समुदायों (डायस्पोरा) से सीधे संवाद स्थापित कर एक नई कूटनीतिक परंपरा की नींव डाली है।
- इसके माध्यम से जहाँ वह एक ओर उस देश में रह रहे भारतीय मूल के लोगों के योगदान का वर्णन करते हैं, वहीं दूसरी ओर उनसे भारत के विकास, यथा- 'मेक इन इंडिया', 'डिजिटल इंडिया' आदि में सक्रिय सहभागिता की इच्छा रखते हैं।

विदेश नीति से संबंधित वर्तमान चुनौतियाँ *(Present Challenges in Foreign Policy)*

आज सरकार के सामने विदेश नीति के मोर्चे पर कई चुनौतियाँ हैं। विदेशी निवेशकों को सही अर्थों में भारत की तरफ आकर्षित करने के लिये ठोस एक्शन की ज़रूरत है, जिसमें मेक इन इंडिया कार्यक्रम को और सक्षम बनाने की आवश्यकता है। चीन और पाकिस्तान के साथ सीमा विवाद, पाकिस्तान के साथ आतंकवाद का मुद्दा, रणनीतिक वैश्विक मंच पर जगह पाने के भारत के दावे का चीन द्वारा लगातार विरोध, परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह में शामिल होने तथा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता पाने के हमारे प्रयासों को विफल करने का प्रयास भी चीन द्वारा किया जा रहा है। अफगानिस्तान मुद्दे पर चीन, रूस व पाकिस्तान का नज़दीक आना भी हमें सोचने पर मजबूर करता है। दुनिया बदल रही है, विशेष रूप से वर्तमान परिदृश्य में प्रमुख शक्तियों के बीच नए द्विपक्षीय समीकरण बन सकते हैं, जिनका आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था एवं व्यापार पर प्रभाव पड़ेगा। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जारी संघर्षों के संबंध में भारत को प्रासंगिक बने रहने के लिये जोखिमों की थाह लेनी होगी और अपना रुख तय करना होगा।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- संविधान के अनुच्छेद 51 के अनुसार राज्य अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की अभिवृद्धि तथा अंतर्राष्ट्रीय विवादों के समाधान का प्रयास करेगा।
- भारत ने सौर ऊर्जा के महत्त्व को समझते हुए, फ्राँस के सहयोग से अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की स्थापना की है। इसका मुख्यालय गुरुग्राम में है।
- परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह परमाणु आपूर्तिकर्त्ता देशों का समूह है, जो परमाणु प्रसार को रोकने के लिये प्रतिबद्ध हैं।
- भारत परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह का सदस्य नहीं है।
- भारत मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण समूह का 35वाँ सदस्य बना है। इस समूह का उद्देश्य मिसाइल तकनीक तथा मानवरहित हवाई वाहन प्रौद्योगिकी के प्रसार को नियंत्रित करना है।
- ऑस्ट्रेलिया समूह में शामिल होने वाला भारत 43वाँ सदस्य देश है। यह समूह जैविक एवं रासायनिक हथियारों के नियंत्रण हेतु प्रतिबद्ध है।
- वासेनार व्यवस्था दोहरे उपयोग के सामान और तकनीक के निर्यात पर नियंत्रण लगाती है। भारत इस व्यवस्था में सम्मिलित होने वाला 42वाँ देश है।
- वर्तमान में भारत सरकार की विदेशी नीति की प्रवृत्ति 'प्रैग्मेटिक' (व्यावहारिक) है, जो यथार्थवादी (Realistic) एवं आदर्शवादी (Idealistic) नीति का मध्यम मार्ग समझा जा सकता है।
- भारत-सोवियत संघ के बीच शांति एवं मित्रता की संधि पर 1971 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने हस्ताक्षर किये।
- भारत के द्वारा अब तक 2 बार परमाणु परीक्षण पोखरण में किये गए हैं। प्रथम परमाणु परीक्षण 18 मई, 1974 में इंदिरा गांधी सरकार के अंतर्गत किया गया, जिसे 'स्माइलिंग बुद्ध' का नाम दिया गया, जबकि द्वितीय परमाणु परीक्षण 11 और 13 मई, 1998 में अटल बिहारी वाजपेयी सरकार के अंतर्गत शक्ति-1 और शक्ति-2 के नाम से किया गया।
- IBSA वार्ता मंच भारत, ब्राज़ील एवं दक्षिण अफ्रीका का एक त्रिपक्षीय समूह है, जिसका उद्देश्य इन देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ाना है। यह दक्षिण-दक्षिण सहयोग को दर्शाता है।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. भारत इनमें से किस समूह का सदस्य नहीं है?
   (1) ऑस्ट्रेलिया समूह
   (2) वासेनार व्यवस्था
   (3) मिसाइल तकनीक नियंत्रण समूह
   (4) परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह
2. अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन का मुख्यालय कहाँ स्थित है?
   (1) पेरिस (2) गुरुग्राम
   (3) शंघाई (4) ढाका
3. वासेनार व्यवस्था किससे संबंधित है?
   (1) जैविक हथियारों के नियंत्रण से
   (2) मिसाइल तकनीक के नियंत्रण से
   (3) दोहरे उपयोग वाली तकनीक के नियंत्रण से
   (4) परमाणु आपूर्ति से
4. सार्क उपग्रह कब प्रक्षेपित किया गया?
   (1) 5 जून, 2017 (2) 5 मई, 2017
   (3) 25 जून, 2017 (4) 25 अगस्त, 2017
5. इनमें से कौन भारतीय विदेश नीति को प्रभावित करता है?
   (1) संसद (2) मीडिया
   (3) विदेश मंत्रालय (4) सभी तीनों

उत्तरमाला

1. (4) 2. (2) 3. (3) 4. (2) 5. (4)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. गुटनिरपेक्षता क्या है? स्पष्ट करें।
2. भारतीय विदेश नीति से संबद्ध महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ कौन-सी हैं?
3. गुजराल सिद्धांत क्या है?

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दीजिये)

1. भारत की उपग्रह कूटनीति से क्या समझते हैं?
2. पंचशील सिद्धांत क्या है?
3. विदेश नीति को परिभाषित करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. भारत की अपने पड़ोसी देशों के साथ वर्तमान विदेश नीति की व्याख्या कीजिये। **RAS (Mains), 2013**
2. विदेश नीति का क्या महत्त्व है?
3. भारतीय विदेश नीति के आधारभूत सिद्धांत कौन-से हैं?
4. भारतीय विदेश नीति के भू-राजनीतिक एवं भू-आर्थिक कारक स्पष्ट करें।

अध्याय
7

भारत का अन्य देशों के साथ संबंध (India's Relation With Other Country)

वर्तमान परिवेश में, किसी भी देश या नगर-राज्य के नागरिक के लिये केवल अपने ही देश के बारे में सोचना बिल्कुल भी यथार्थपरक नहीं होगा। ध्यातव्य है कि अमेरिका में 11 सितंबर, 2001 में घटी घटना ने वैश्विक ग्राम (Global Village) के विषय में हमारी पुरानी धारणा को ही स्पष्ट किया अर्थात् इस एक घटना ने यह साफ कर दिया कि यदि किसी दूरस्थ गाँव के किसी कोने में अवस्थित फूस की झोंपड़ी अथवा धूल भरे किसी शिविर में आग लगती है तो यह हमारे वैश्विक ग्राम के दूसरे छोर पर अवस्थित ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं में लगी इस्पात की चादरों को भी पिघला सकती है। अन्य शब्दों में, आज विश्व में जो मुद्दे कभी दूर के लगते थे, वे अब आपके आँगन में आ गए हैं। अतः हमारा विकल्प स्पष्ट होना चाहिये कि यदि हमें अपने देश में अपनी इच्छा के अनुरूप समाज का निर्माण करना है और इसे बनाए रखना है तो हमें वैश्विक स्तर पर भी निश्चित रूप से सक्रिय रहना होगा।

वर्तमान में भारत पर अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रमों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। हमारा स्वास्थ्य, हमारी सुरक्षा, हमारी संवृद्धि एवं समृद्धि के साथ-साथ हमारे जीवन की गुणवत्ता भी उत्तरोत्तर इस बात से प्रभावित होती है कि देश की सीमा के पार क्या हो रहा है? यही कारण है कि हम पड़ोस में होने वाली घटनाओं को नज़रअंदाज करने का साहस नहीं कर सकते, बेशक ये घटनाएँ कहीं दूर घटती प्रतीत होती हों। दरअसल, आज के विश्व में आपको दूसरों के संबंध में जानकारी रखना लाभकारी ही होगा।

7.1 भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका
(India and United States of America)

संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का सबसे पुराना लोकतंत्र होने के साथ एक महाशक्ति है जो वैश्विक परिदृश्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं एवं नीतियों को प्रभावित करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व व्यवस्था में संतुलन बनाए रखने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस क्रम में भारत के लिये संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ संबंधों को व्यापक दृष्टिकोण से देखा जाना अनिवार्य हो जाता है। शीत युद्ध के पहले तथा बाद में भारत-अमेरिकी संबंधों में प्रायः उतार-चढ़ाव देखे गए, जिसका प्रमुख कारण दोनों देशों के द्वारा अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति हेतु प्रयत्न तथा वैश्विक शक्ति संतुलन स्थापित करने हेतु व्यवस्था निर्माण के रूप में देखा जा सकता है।

भारत-अमेरिकी संबंधों में सहयोग के मुद्दे *(Issues of Cooperation between India and USA)*

- दोनों देश लोकतांत्रिक व्यवस्था से संचालित होते हैं।
- भारत तथा अमेरिका दोनों ही मुक्त अर्थव्यवस्था तथा उदारवाद को प्रोत्साहन देते हैं।
- अमेरिका आर्थिक एवं तकनीकी रूप से अत्यधिक विकसित देश है, जो भारत के आर्थिक एवं तकनीकी विकास में सहायक सिद्ध होता है।
- भारत की विशाल जनसंख्या अमेरिकी पूंजीवादी कंपनियों को बड़ा बाज़ार उपलब्ध कराती है।
- भारत और अमेरिका दोनों आतंकवाद के शिकार रहे हैं। अतः आतंकवाद के विरुद्ध साझा सहयोग दोनों की प्राथमिकता में है।
- चीन का शक्तिशाली उभार दोनों देशों के लिये चिंता का विषय है, जिसे संतुलित करने हेतु भारत एवं अमेरिका के बीच सहयोग अपेक्षित है।
- अफगानिस्तान में शांति एवं स्थायित्व तथा क्षमता निर्माण दोनों देशों की प्राथमिकता में शामिल है।
- अमेरिका में एक बड़ी जनसंख्या भारतीय मूल की है जो दोनों देशों के मध्य परस्पर सांकृतिक, सामाजिक मेल-मिलाप को बढ़ाकर सहयोगी एवं सकारात्मक वातावरण का निर्माण करती है।

भारत और अमेरिका के बीच मतभेद के मुद्दे *(Issues of difference between India and USA)*

- भारत का अमेरिका के साथ-साथ रूस एवं चीन से भी महत्त्वपूर्ण संबंध रहे हैं, जबकि अमेरिका, रूस और चीन को प्रति संतुलित करने का प्रयास करता रहता है, जिसका प्रभाव भारत-रूस एवं भारत-चीन संबंधों पर पड़ता है।
- भारतीय विदेश नीति की प्रमुख विशेषता गुटनिरपेक्षता है, जबकि अमेरिका में ऐसा मानने की प्रवृत्ति रही है कि जो हमारे साथ नहीं है, वह हमारा विरोधी है।
- कश्मीर के मुद्दे पर भारत को अमेरिका से पर्याप्त सहयोग नहीं मिल सका है।
- अमेरिकी अर्थव्यवस्था की विशेषता पूंजीवाद है, जबकि भारत मुख्यतः समाजवादी आर्थिक प्रणाली को समर्थन प्रदान करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1962 तक भारत और अमेरिका के बीच संबंध अत्यंत मित्रतापूर्ण रहे, वहीं 1962 के बाद से लेकर 1971 तक भारत अमेरिकी संबंधों में संदेह एवं अविश्वास देखा गया। 1971 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंद्रिरा गांधी के द्वारा सोवियत संघ के साथ मिलकर संधि पर हस्ताक्षर किये जाने के बाद भारत-अमेरिकी संबंध परस्पर विरोधी हो गए, जिससे भारत, अमेरिका से प्राप्त होने वाले सहयोग से वंचित हो गया। 1991-92 में हुए आर्थिक सुधारों के बाद उदारीकरण, वैश्वीकरण तथा निरस्त्रीकरण की नीति अपनाने के पश्चात् भारत अमेरिकी संबंध पुनः सुधरने शुरू हुए। 1998 में भारत द्वारा परमाणु परीक्षण किये जाने के बाद पुनः भारत-अमेरिका संबंधों में दरार आ गई, जिसे सिविल परमाणु समझौते के साथ सुधारने का प्रयास किया गया। इस समझौते (2010) के बाद अमेरिकी कंपनियाँ भारत में परमाणु संयंत्र लगाने हेतु अग्रसर हुई हैं, वहीं भारत ने अन्य कई देशों यथा- ऑस्ट्रेलिया, कजाकस्तान, फ्राँस तथा दक्षिण कोरिया के साथ परमाणु संयंत्र स्थापित करने तथा यूरेनियम खनिज प्राप्त करने के लिये समझौते किये हैं।

सिविल परमाणु समझौते *(Civil nuclear agreement)*

इस समझौते की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके बाद भारत अन्य परमाणु संपन्न राष्ट्रों से परमाणु तकनीकी, रिएक्टर एवं परमाणु खनिज प्राप्त करने वाला एकमात्र ऐसा देश होगा, जिसने परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। इसके साथ ही परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह के अन्य देशों के साथ भी परमाणु समझौते स्थापित किये जा सकते हैं। ऐसी छूट प्राप्त करने वाला भारत एकमात्र देश है। इस समझौते में भारत ने अपने परमाणु कार्यक्रम को शांतिपूर्ण एवं सैन्य उद्देश्यों के लिये विभाजित किया है। यह समझौता भारत एवं अमेरिका के बीच बढ़ते सामरिक संबंधों का प्रमाण है। इसके द्वारा भारत से न सिर्फ परमाणु तकनीक आधारित प्रतिबंध समाप्त हुए हैं बल्कि भारत को एक उत्तरदायी राज्य का दर्जा भी प्राप्त हुआ है।

भारत-अमेरिकी लॉजिस्टिक सहयोग समझौता
(Logistics Exchange Memorandum of Agreement)

भारत को अमेरिका द्वारा मुख्य रक्षा भागीदार का दर्जा देते हुए अमेरिका और भारत के बीच 'लेमोआ समझौता' क्रियान्वित किया गया है। यह भारत और अमेरिका के बीच बढ़ते सामरिक एवं सैन्य संबंधों को प्रदर्शित करता है। इसके द्वारा दोनों देशों की सेनाओं के बीच शांतिकाल के दौरान ईंधन तथा सैन्य सामग्री की रिपेयरिंग की सुविधा एक दूसरे को प्रदान की जाएगी। वहीं एक-दूसरे के सैन्य अड्डों का भी प्रयोग किया जा सकेगा। भारत को अमेरिकी सैन्य साम्रगी प्राप्त करने में भी सुविधा होगी। यह समझौता चीन की बढ़ती वर्चस्ववादी नीतियों के परिप्रेक्ष्य में भारत के लिये महत्त्वपूर्ण है।

कुछ विश्लेषकों द्वारा इस समझौते को भारतीय सामरिक स्वायत्तता के विरुद्ध देखा जा रहा है तथा इसकी आलोचना की जा रही है, किंतु यह ध्यान देने योग्य है कि यह समझौता शांतिकाल के लिये है तथा भारत अमेरिका के किसी भी सैन्य गुट का सदस्य नहीं है। अतः ऐसी आशंका निराधार प्रतीत होती है। कुछ आलोचकों का यह भी मानना है कि इससे

भारत-रूस तथा भारत-चीन संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है तथा भारत की अमेरिका से बढ़ती निकटता रूस को पाकिस्तान के नज़दीक जाने का प्रमुख कारण बन सकती है।

यह उल्लेखनीय है कि भारत अमेरिका के बीच लॉजिस्टिक सहयोग समझौता चीन के विरुद्ध नहीं है बल्कि भारत के अपने हितों के परिप्रेक्ष्य में है। बदलते वैश्विक परिदृश्य में अमेकिा के साथ सुदृढ़ संबंध भारत की प्रेग्मेटिक (व्यावहारिक) नीति का हिस्सा है।

अमेरिका की एशिया केंद्रित नीति तथा भारत की भूमिका *(America's Asia Centric Policy and Role of India)*

दक्षिण चीन सागर के मुद्दे पर भारत और अमेरिका दोनों नौवहन की स्वतंत्रता के समर्थक हैं। दोनों देशों के मध्य सहयोग हिन्द महासागर के साथ-साथ भारतीय प्रशांत (Indo Pacific) क्षेत्र तक विस्तृत हो चुका है जो यह दर्शाता है, कि अमेरिका की 'धुरी एशिया' (Pivot Asia) की नीति तथा भारत की 'एक्ट ईस्ट नीति' परस्पर पूरक हैं तथा भारत अमेरिका का महत्त्वपूर्ण सहयोगी सिद्ध हो सकता है। इसके अतिरिक्त अफगानिस्तान में भी शांति एवं स्थायित्व की स्थापना में अमेरिका भारत को महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रदान करने के पक्ष में है। यह भारत की बढ़ती महत्ता तथा भारत-अमेरिकी संबंधों में बढ़ते विश्वास का परिचायक है।

भारत-अमेरिका-चीन *(India-USA-China)*

भारत-अमेरिका के प्रगाढ़ होते संबंधों में चीन निश्चित ही एक महत्त्वपूर्ण कारक है, किंतु एकमात्र कारक नहीं। चीन के वर्चस्ववादी उभार को प्रति संतुलित करने के लिये भारत और अमेरिका को एक-दूसरे के सहयोग की आवश्यकता है। एशिया-प्रशांत क्षेत्र में 'क्वाड' (चार देशों-ऑस्ट्रेलिया, भारत, जापान तथा अमेरिका का समूह) की संकल्पना इसी परिप्रेक्ष्य में लाई गई है, किंतु भारत का चीन के साथ तथा अमेरिका का चीन के साथ बड़ा व्यापारिक संबंध है। अतः यह नहीं भूलना चाहिये कि चीन एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक भागीदार होने के कारण स्वयं दोनों देशों के लिये विशेष स्थान रखता है, जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

भारत और अमेरिका, क्या प्राकृतिक मित्र हैं? *(India and USA : are they natural ally?)*

- अमेरिका भारत का महत्त्वपूर्ण सामरिक सहयोगी है। आतंकवाद का विरोध, तालिबान पर नियंत्रण तथा अफगानिस्तान में क्षमता निर्माण इत्यादि ऐसे विषय हैं, जिन पर दोनों देशों के बीच परस्पर सहयोग किया जा रहा है। अमेरिका भारत की दक्षिण एशिया में महत्त्वपूर्ण केंद्रीय भूमिका को स्वीकार करता है।
- भारतीय और अमेरिकी अर्थव्यवस्था एक-दूसरे की पूरक हैं और दोनों के बीच का द्विपक्षीय व्यापार 2016 में 110 बिलियन डॉलर का था, जो 2017 में 140 बिलियन डॉलर अपेक्षित है।
- दोनों देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम है। अमेरिका सबसे पुराना लोकतंत्र है तथा भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है।
- दोनों देशों में व्यापक सामजिक सांस्कृतिक विविधता विद्यमान है। यहाँ विश्व के लगभग सभी धर्मों के लोग निवास करते हैं।
- अमेरिका में 60 लाख भारतीय लोग रहते हैं, जो भारत अमेरिका के निकट संबंधों को दर्शाता हैं। यह सांस्कृतिक संबंधों को प्रगाढ़ बनाने में भी सहायक है।

इन सबके अतिरिक्त अमेरिका भारत में स्मार्ट सिटी मिशन में निवेश वैश्विक एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर सहयोग कर रहा है। किंतु दोनों देशों के बीच मतभेद के भी विभिन्न मुद्दे प्रमुख हैं। अमेरिका की हस्तक्षेपवादी प्रवृत्ति, पर्यावरण संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर असहयोग तथा आर्थिक संरक्षणवाद की नीतियाँ भारतीय हितों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है। वहीं भारत अपनी स्वायत्तता को बनाए रखने का हिमायती है तथा किसी महाशक्ति का पिछलग्गू बनना उसे स्वीकार नहीं है। अतः साझा विषयों पर बढ़ते सहयोग सराहनीय हैं, किंतु अमेरिका की निर्देशित विदेश नीति एवं भारत की सामरिक स्वायत्तता के सिद्धांत में साम्य नहीं है। अमेरिका भारत का एक महत्त्वपूर्ण मित्र तो है किंतु, इसे प्राकृतिक मित्र कहना पूर्णतया प्रासंगिक नहीं प्रतीत होता है।

7.2 भारत और रूस *(India and Russia)*

आज हम भारत और रूस के बीच 'विशेष एवं विशेषाधिकृत रणनीतिक भागीदारी' (Special and Privileged Strategic Partnership) की बात करते हैं। इस विलक्षण और बहुआयामी संबंध का निर्माण अचानक नहीं हुआ है। सहयोग के व्यापक क्षेत्रों में इसके ठोस और रचनात्मक परिणाम सामने आए हैं। विश्वसनीय मैत्री भारत-रूस संबंधों की विशेषता रही है। प्रत्येक पीढ़ी ने इन विलक्षण संबंधों को पोषित एवं संवर्द्धित किया है। इसे दोनों देशों के राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में व्यापक सम्मति भी प्राप्त है।

भारत के शुरुआती औद्योगिक एवं प्रतिरक्षा संवर्द्धन काल के दौरान सोवियत संघ की सहायता से लेकर प्रमुख रणनीतिक क्षेत्रों में संयुक्त उपक्रम एवं विकास की ठोस भागीदारी तक दोनों राष्ट्रों को विभिन्न स्तरों पर नियमित वार्ताओं एवं द्विपक्षीय तंत्रों से सहारा मिलता रहा है। हमारा सहयोग संस्थागत बन गया है– चाहे आप प्रतिरक्षा क्षेत्र की बात करें अथवा अंतरिक्ष क्षेत्र, हाइड्रोकार्बन अथवा परमाणु ऊर्जा क्षेत्र की, इनसे दोनों ही देशों को निरंतर लाभ हुआ है।

दोनों देशों के लोगों के बीच शैक्षणिक और कलात्मक संपर्क भी बहुत महत्त्वपूर्ण रहे हैं। 5000 से अधिक भारतीय छात्र रूसी विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में अध्ययन कर रहे हैं। सभी स्तरों पर दोनों देशों के निजी क्षेत्र के बीच व्यावसायिक संपर्कों में तेज़ी आ रही है। एक-दूसरे के संगीत, नृत्य तथा प्राचीन परंपराओं के प्रति महान आस्था के चलते सांस्कृतिक संपर्क सुदृढ़ हुए हैं।

वैश्विक मुद्दों के प्रति भारत और रूस का साझा दृष्टिकोण है और बदलती विश्व व्यवस्था के संदर्भ में इनके साझे लक्ष्य हैं। बदलती अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में उदीयमान एवं ज़िम्मेदार भागीदारों के रूप में एक-दूसरे की ताक़तों एवं रणनीतिक स्वायत्तता से भी लाभ प्राप्त करते हैं। द्विपक्षीय संबंध, स्थायी शांति, न्यायसंगत विश्व व्यवस्था तथा बहुपक्षीय प्रणाली में विश्वास के आधार पर कार्य करते हैं।

यह बात दिसंबर 2011 के भारत-रूस संयुक्त वक्तव्य (India-Russia Joint Statement), मार्च 2012 के नई दिल्ली ब्रिक्स घोषणा (New Delhi BRICS Declaration) तथा अप्रैल 2012 की मॉस्को की रूस-भारत-चीन संयुक्त विज्ञप्ति (Russia-India-China Joint Statement) में झलकती है। परमाणु आपूर्तिकर्त्ता समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) तथा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (United Nations Security Council – UNSC), जिसमें भारत अभी स्थायी सदस्य नहीं है, जैसे बड़े मंचों पर रूस के समर्थन की भारत सराहना करता है।

सोवियत संघ के विघटन के बाद भारत की सुरक्षा चिंताएँ बढ़ गईं, क्योंकि भारत को हथियारों की सर्वाधिक आपूर्ति सोवियत संघ से होती थी। भारत का सबसे बड़ा द्विपक्षीय व्यापार सोवियत संघ के साथ होने के कारण भारत को वैकल्पिक बाज़ारों की आवश्यकता हुई। रूस के संयुक्त राज्य अमेरिका एवं चीन के साथ संबंध सुधरने लगे, जिससे भारत के समक्ष सामरिक चुनौती प्रस्तुत हुई। ब्लादिमीर पुतिन के समय में रूस-चीन संबंध अत्यधिक प्रगाढ़ हो रहे हैं, जिससे भारत की रक्षा चिंताएँ और बढ़ गई हैं। रूस के द्वारा भारत को दी जाने वाली सैन्य सामग्री अब चीन को भी उपलब्ध कराई जा रही है। वहीं रूस ने पहली बार 2017 में पाकिस्तान को सैन्य हेलीकॉप्टर प्रदान किये तथा पाकिस्तान के साथ रूस के बढ़ते सामरिक संबंध भारत के लिये चिंता का विषय है। इस परिदृश्य में भारत-रूस संबंधों के नए परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

रूस का चीन व पाकिस्तान की तरफ बढ़ता झुकाव भारत-अमेरिका संबंधों के प्रतिक्रियास्वरूप है, इस बात को भी समझा जा सकता है। भारत ने अपनी रक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आयात स्रोतों को विविधता प्रदान करने का प्रयास शुरू किया है, जिससे रूस पर निर्भरता कम हुई है। इस कारण रूस नए बाज़ारों की खोज कर रहा है।

भारत-सोवियत संधि (Indo-Soviet Treaty), 1971

इसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है-

- दोनों देशों और उनकी जनता के बीच स्थायी शांति तथा मित्रता रहेगी। दोनों एक-दूसरे की स्वतंत्रता, संप्रभुता एवं प्रादेशिक अखंडता की रक्षा करेंगे तथा एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

- स्थायी शांति के लिये प्रतिबद्ध दोनों देश एशिया तथा समस्त विश्व में शांति की रक्षा करेंगे, उसे सुदृढ़ बनाएंगे तथा शस्त्रों की होड़ को रोककर निरस्त्रीकरण के लिये कार्य करेंगे।
- दोनों देश समानता में विश्वास करते हुए उपनिवेशवाद (Colonialism) एवं प्रजातिवाद (Racialism) की निंदा करते हैं।
- भारत सोवियत संघ की शांति की नीति का आदर करता है तथा सोवियत संघ भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति का सम्मान करता है। विश्व शांति और सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिये दोनों देश एक-दूसरे से संपर्क तथा सहयोग करेंगे।
- दोनों देश समानता और पारस्परिक हित के उद्देश्य से आर्थिक, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक सहयोग एवं वाणिज्य, यातायात और संचार साधनों का विस्तार करेंगे।
- विज्ञान, कला, साहित्य, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रेस, रेडियो, दूरदर्शन, खेलकूद एवं पर्यटन के क्षेत्र में संबंधों को और अधिक विकसित करेंगे।
- दोनों देश किसी ऐसी सैनिक संधि में शामिल नहीं होंगे जो कि दूसरे पक्ष के विरुद्ध हो। वे एक-दूसरे के विरुद्ध आक्रमण नहीं करेंगे।
- दोनों देश किसी ऐसे तीसरे देश को सैन्य, आर्थिक या तकनीकी सहायता नहीं देंगे, जो कि दूसरे पक्ष के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष कर रहा हो। दोनों में से किसी पर आक्रमण या उसका खतरा होने की स्थिति में वे तुरंत पारस्परिक परामर्श करेंगे, ताकि आक्रमण या उसके खतरे को रोका जा सके।
- दोनों देशों ने यह आश्वासन दिया कि वे किसी अन्य देश के साथ ऐसी कोई संधि नहीं करेंगे, जो इस संधि से मेल न खाती हो या उसके विरुद्ध हो।
- इस संधि की अवधि 20 वर्ष होगी। उसके पश्चात् इसे पाँच-पाँच वर्ष की अवधि के लिये बढ़ाया जा सकेगा। एक वर्ष का नोटिस देकर कोई भी पक्ष इसे समाप्त कर सकेगा।
- संधि की किसी धारा की व्याख्या के संबंध में किसी मतभेद का दोनों पक्ष पारस्परिक बातचीत के द्वारा शांतिपूर्वक समाधान करेंगे।

भारत-रूस के मध्य सहयोग के मुद्दे *(Issues of cooperation between India and Russia)*

भारत और रूस परंपरागत और विश्वसनीय मित्र हैं तथा सहयोग की अवधि बहुत पुरानी है। दोनों देश रक्षा सामग्री में सहयोग के साथ साझा उत्पादन कर रहे हैं। ब्रह्मोस मिसाइल का उत्पादन इसका बेहतरीन उदाहरण है। परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में रूस ने भारत को महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है। कुडनकुलम परमाणु ऊर्जा संयंत्र रूस की सहायता से विकसित किया गया है। इसके अतिरिक्त हाल ही में रूस ने भारत को S-400 मिसाइल रक्षा तकनीक देने के लिये सहमति प्रदान कर दी है। रूस और भारत के मध्य 'इंद्रा' सैन्य अभ्यास संपन्न होता है तथा दोनों ही बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के समर्थक हैं। रूस भारत की संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता को भी समर्थन देता है। इस प्रकार रूस भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं से लेकर रक्षा ज़रूरतों तक की पूर्ति करने में सक्षम है तथा दोनों देशों के बीच संबंध शुरू से ही प्रगाढ़ एवं विश्वसनीय रहे हैं।

भारत-रूस के मध्य मतभेद के मुद्दे *(Issues of differences between India and Russia)*

भारत और रूस के बीच संबंधों में कोई गंभीर मतभेद नहीं हैं, न ही कोई द्विपक्षीय मुद्दा भारत की चिंता का विषय बना है। किंतु, रूस की चीन एवं पाकिस्तान के साथ बढ़ती निकटता को भारत अपने सामरिक हितों के लिये सही नहीं मानता है। रूस ने भारत से पहले S-400 मिसाइल रक्षा प्रणाली चीन को प्रदान कर भारत की चिंता को और बढ़ा दिया। वहीं रूस का मानना है कि इससे भारतीय हित प्रभावित नहीं होंगे तथा इसे रूस के रक्षा उत्पादन हेतु बाजार उपलब्धता के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिये। दक्षिण चीन सागर के विषय पर भी जहाँ भारत समुद्री मार्गों की स्वतंत्रता का पक्षधर है, वहीं रूस चीन के पक्ष को समर्थन प्रदान करता है। इसी प्रकार तालिबान और अफगानिस्तान के मुद्दे पर भी रूस का दृष्टिकोण चीन जैसा है।

जिस प्रकार भारत के द्वारा अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति हेतु सामरिक एवं अन्य क्षेत्रों में एक देश पर निर्भरता को कम करते हुए अन्य देशों के साथ संबंध स्थापित किये जा रहे हैं, उसी प्रकार रूस के द्वारा अपने रक्षा उत्पादों के बाजार का

विस्तार किया जा रहा है। भारत और रूस के बीच किसी भी प्रकार के द्विपक्षीय मतभेद नहीं हैं तथा परस्पर विश्वसनीय संबंध बने हुए हैं। दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार 10 बिलियन डॉलर का है, जिसे बढ़ाने की आवश्यकता है। इस दिशा में पहल करते हुए भारत ने रूस से ऊर्जा उत्पादों के आयात को बढ़ाने का निश्चय किया है। साथ ही दोनों देशों के बीच कृषि उत्पादन बढ़ाने, फार्मास्यूटिकल एवं हीरा उत्पादन के क्षेत्र में सहयोग हेतु समझौते किये गए हैं। दोनों देशों के बीच छात्रों के आदान-प्रदान को बढ़ावा देने का भी प्रयास किया जा रहा है।

भारत और रूस के मध्य सांस्कृतिक संबंध बहुत पुराने हैं, किंतु दोनों के संबंधों में भाषायी अंतर तथा जलवायवीय परिस्थितियाँ बाधा उत्पन्न करती हैं। भारत की सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियाँ ही अधिकांशतः रूस में व्यापारिक गतिविधियों में संलग्न है, निजी कंपनियाँ नहीं। अतः निजी कंपनियों को व्यापार एवं वाणिज्य में संलग्न होने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। भारत-रूस के संबंध अन्य कई क्षेत्रों में सहयोगी एवं सकारात्मक रहे हैं, जिसे और बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। इनमें प्रमुख हैं- अंतरिक्ष तकनीकी, साइबर सुरक्षा इत्यादि।

रूस के दो तेल ब्लॉकों में भारत की हिस्सेदारी *(India's share in two Russian oil blocks)*

मार्च 2016 में विदेशी परिसंपत्तियों के अधिग्रहण के ज़रिये ऊर्जा सुरक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारत ने दीर्घावधि के रणनीतिक साझेदार रूस के साथ 4 अरब डॉलर का सौदा किया था। इसके तहत भारत पूर्वी साइबेरिया में रोसनेफ्ट (Rosneft) के परिचालन वाले दो प्रमुख तेल क्षेत्रों को खरीदेगा। इस सौदे के तहत सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कंपनियाँ-ऑयल इंडिया लिमिटेड (OIL), इंडियन ऑयल (Indian Oil) और भारत पेट्रो रिसोर्सेस का कंसोर्टियम रोसनेफ्ट परिचालित तास-यूरियाख (Tass-Yuriakh) तेल क्षेत्र में 29.9% हिस्सेदारी खरीदने पर 1.28 अरब डॉलर का निवेश करेंगी।

यह समझौता दोनों देशों के लिये उपयोगी है, क्योंकि एक ओर जहाँ मंदी के इस दौर में रोसनेफ्ट को निवेश के लिये नई राशि मिल गई है, वहीं भारतीय कंपनियों को अहम पेट्रोलियम ब्लॉकों में हिस्सेदारी मिली है, जो भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिये महत्त्वपूर्ण है।

- तास-यूरियाख क्षेत्र में गैस के अकूत भंडार हैं और वहाँ तेल की भी मौजूदगी है। यहाँ से फिलहाल प्रतिदिन लगभग 20,000 बैरल तेल का उत्पादन किया जा रहा है और अगले दो साल में 1 लाख बैरल रोज़ाना उत्पादन करने का लक्ष्य रखा गया है।
- इसके अलावा वैंकोर तेल क्षेत्र (Vankor Oil Field) में 23.9% हिस्सेदारी के लिये अलग से समझौता हुआ। इस तेल क्षेत्र में सरकारी क्षेत्र की एक अन्य कंपनी ओ.एन.जी.सी. विदेश लिमिटेड पहले ही 15% हिस्सेदारी खरीद चुकी है।
- इस तरह से भारतीय कंपनियों के पास इस फील्ड में लगभग 45% हिस्सेदारी हो गई। इसमें ओवीएल को 4.9% हिस्सेदारी और देने की बात है। ऐसा होने पर इस फील्ड में भारतीय कंपनियों के पास कुल 49.9% हिस्सेदारी हो जाएगी। शेष हिस्सेदारी 50.1% रोसनेफ्ट के पास रहेगी। इससे भारत को कुल 1.2 करोड़ टन तेल हासिल होगा।

उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हालिया रूस यात्रा के दौरान भारत और रूसी कंपनियों के बीच तेल एवं गैस क्षेत्र में चार बड़े समझौतों पर हस्ताक्षर किये गए थे। इनमें ओएनजीसी विदेश लिमिटेड को रूस के दूसरे सबसे बड़े तेल क्षेत्र वैंकोर में 15% हिस्सेदारी के अधिग्रहण का समझौता भी शामिल था।

भारत-रूस संबंध : सामयिक आयाम *(India-Russia relations : contemporary dimensions)*

- रूस की सबसे बड़ी गैस कंपनी 'गाज़प्रोम' तथा भारतीय तेल और गैस कंपनियों के नेतृत्व में इस 'ऊर्जा सेतु' के निर्माण के लिये एक संयुक्त कार्यकारी-दल का भी गठन किया गया।
- भारत-रूस अंतर-सरकारी आयोग की बैठक (13 सितंबर, 2016) के दौरान भारतीय कंपनी वोकहार्डट ने रूसी कंपनी फार्माएको के साथ 'फार्मा 2020 कार्यक्रम' के तहत रूस में इंसुलिन के उत्पादन के लिये समूह परियोजना शुरू करने से जुड़े एक समझौते पर हस्ताक्षर किये।

- वर्ष (2017) में दोनों देशों के बीच कूटनीतिक रिश्तों की 70वीं जयंती मनाई गई। इस अवसर पर रूस के अधिकारी भारत और भारतीय अधिकारी रूस की महत्त्वपूर्ण यात्राएँ करेंगे।
- 12 दिसंबर, 2016, भारत और रूस के बीच रेलगाड़ी चलनी शुरू हो गई है। ईरान और अज़रबैजान होकर मुंबई से सेंट पिट्सबर्ग तक जाने वाली यह रेलगाड़ी मालों की ढुलाई करेगी। इस रेलमार्ग के निर्माण से सिर्फ ये चार देश (भारत, ईरान, अज़रबैजान, रूस) ही आपस में एक-दूसरे से नहीं जुड़ेंगे, बल्कि यूरेशिया के इलाके में बसे सभी देश एकजुट हो जाएंगे।

भारत और यूरेशियाई आर्थिक संघ *(India and Eurasian economic union)*

भारत और यूरेशियाई आर्थिक संघ के बीच 2017 में मुक्त व्यापार समझौते के बारे में बातचीत होने की आशा है, जिसमें जिंस व्यापार, सेवा व्यापार के साथ-साथ निवेश भी शामिल होगा। यह आर्थिक सहयोग के मामले में बड़ा कदम होगा।

इस मुक्त व्यापार समझौते के भीतर ऊर्जा सहयोग और 'हरित गलियारे' का इस संपूर्ण क्षेत्र में विस्तार करना काफी महत्त्वपूर्ण होगा। एक ओर आरमेनिया, बेलारूस, कज़ाखस्तान, किरगिस्तान तथा रूस और दूसरी ओर भारत के इससे जुड़ने के कारण आशा है कि व्यापार व निवेश से जुड़ी गतिविधियों में भारी तेज़ी आएगी और इन सभी देशों को अत्यधिक लाभ होगा।

यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि चाबहार बंदरगाह को विकसित करने और अंतर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारे (रूस और भारत के बीच रेलमार्ग) को सक्रिय करने पर मुख्य रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये क्योंकि इससे आपसी व्यापार में लगने वाले समय के साथ-साथ परिवहन लागत में भी भारी कमी आएगी; जिसके कारण व्यापार व निवेश संबंधी गतिविधियों में अभूतपूर्व तेज़ी आने की संभावना है। हाल ही में भारत ने अंतर्राष्ट्रीय सड़क परिवहन यानी अंतर्राष्ट्रीय माल परिवहन सीमा शुल्क समझौते पर हस्ताक्षर करने की इच्छा व्यक्त की है। भारत द्वारा इस समझौते पर हस्ताक्षर किया जाना काफी महत्त्वपूर्ण होगा। इस प्रकार के विनियामक प्रयासों से व्यापारिक सुगमता लाने में काफी आसानी रहती है। इसके कारण दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में रूस को व्यापारिक अवसर मिलने की भी संभावना बनी रहती है।

भारत और रूस के बीच संबंध अत्यंत प्रगाढ़ रहे हैं परंतु बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष्य में आर्थिक संबंधों को सुदृढ़ बनाकर ही पूर्ण रूप में क्षमता को साकार किया जा सकता है।

18वाँ भारत-रूस वार्षिक शिखर सम्मेलन *(18th India-Russia annual summit)*

18वें भारत-रूस वार्षिक शिखर सम्मेलन के दौरान भारत और रूस के नेताओं की उपस्थिति में हस्ताक्षर किये गए दस्तावेज़ का उल्लेख निम्नलिखित है-

1. भारत गणराज्य के संस्कृति मंत्रालय और रूसी परिसंघ के संस्कृति मंत्रालय के बीच वर्ष 2017-19 के सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम।
2. वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी अनुसंधान परिषद और संघीय बौद्धिक संपदा सेवा (रॉस्पेटेंट) के बीच भारतीय पारंपरिक ज्ञान आंकिक संग्रहालय प्रवेश समझौता।
3. 'कुडनकुलम' परमाणु ऊर्जा संयंत्र की इकाई 5 और 6 के कार्यान्वयन के लिये भारतीय परमाणु ऊर्जा निगम और संयुक्त स्टॉक कंपनी 'एटमस्ट्रोएक्सपोर्ट' के बीच सामान्य रूपरेखा समझौता।
4. भारत के रत्न और आभूषण निर्यात संवर्धन परिषद और लोक संयुक्त स्टॉक कंपनी 'अलरोसा' के बीच सहयोग का ज्ञापन।
5. भारत गणराज्य के रेल मंत्रालय और संयुक्त स्टॉक कंपनी 'रूसी रेलवे' के बीच भारत में नागपुर-सिकंदराबाद अर्द्ध द्रुतगामी क्रियान्वयन अध्ययन के लिये समझौता।

18वें भारत-रूस शिखर सम्मेलन के दौरान हस्ताक्षर किये गए समझौते निम्नलिखित हैं-

- 5 दिसंबर, 2008 को भारत गणराज्य की सरकार और रूसी परिसंघ की सरकार के बीच प्रोटोकॉल संख्या 2 पर समझौते।
- रेलवे के लिये एक विशेष प्रयोजन वाहन की स्थापना के लिये भारी इंजीनियरिंग निगम लिमिटेड और संयुक्त स्टॉक कंपनी 'कैसकेड-प्रौद्योगिकी' के बीच समझौता।
- भारत-रूस पूंजीगत वस्तुएँ वित्तपोषण। पट्टे पर देने के कारोबार के विकास में रूसी निर्यात समर्थन और भागीदारी पर एसआरईआई आधारभूत संरचना वित्त लिमिटेड और राज्य निगम 'विकास और विदेशी आर्थिक मामलों के बैंक के बीच समझौता।

- जेआईटीएफ शहरी आधारभूत संरचना सेवाएँ लिमिटेड (भारत गणराज्य), जिंदल रेल आधारभूत संरचना लिमिटेड (भारत गणराज्य), संयुक्त स्टॉक कंपनी (रूसी परिसंघ) और सीमित देयता प्रबंधन कंपनी (रूसी परिसंघ) के बीच सहयोग समझौता।
- भारत और रूस में निवेश को बढ़ावा देने के संबंध में राष्ट्रीय निवेश संवर्धन एजेंसी 'निवेश भारत' और भारत के साथ सहयोग के लिये व्यापार परिषद के बीच समझौता ज्ञापन।
- राष्ट्रीय निवेश संवर्धन एजेंसी 'निवेश भारत' और 'रॉसकॉन्ग्रेस फाउंडेशन' के बीच सहयोग समझौता ज्ञापन।
- 'सन गुप्त प्राइवेट लिमिटेड' और संयुक्त स्टॉक कंपनी 'प्रिवोर' के बीच समझौता ज्ञापन।

7.3 भारत और चीन *(India and China)*

सन् 1947 में भारत की स्वतंत्रता के बाद यह आशा की जा रही थी कि भारत और चीन के संबंध इतने घनिष्ठ व सुदृढ़ होंगे कि ये दोनों देशों के लिये लाभप्रद स्थितियाँ उत्पन्न करने में सक्षम होंगे। प्राचीन सांस्कृतिक संबंधों और साम्राज्यवाद के विरुद्ध दोनों के समान हितों को दृष्टिगत रखते हुए दोनों देशों के बीच अंतरंगता की दुहाई भी दी जाती रही। यह भी स्पष्ट था कि दोनों राष्ट्र आर्थिक अभाव से ग्रस्त विकास की जटिल चुनौतियों से जूझने को विवश थे। वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्र में भी सहयोग की संभावनाएँ तलाशी जा सकती थीं। ऐसी स्थिति में द्विपक्षीय संबंधों में किसी तनाव या गतिरोध के बड़े आधारों को चिह्नित करना मुश्किल था।

दोनों के पारस्परिक संबंधों के पीछे कई कारण निहित थे। उदाहरणार्थ- भारत को जब स्वतंत्रता प्राप्त हुई तब चीन में भयंकर गृहयुद्ध (Civil War) चल रहा था। साम्यवादी उस गृहयुद्ध में विजय की ओर अग्रसर थे तथा दूसरी ओर भारत में भी अनेक समस्याएँ थीं, जो देश के विभाजन से उत्पन्न हुई थीं। शुरुआती दौर की बात की जाए तो भारत-चीन संबंध केवल औपचारिक स्तर पर थे। अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत-चीन संबंध ज़रूर दृष्टिगत होते थे अन्यथा दोनों देशों के बीच कोई ठोस संबंध नहीं था। चीन की क्रांति (Chinese Revolution) के पश्चात् इस स्थिति में परिवर्तन आया और दोनों देशों में शीघ्रता से घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण संबंध विकसित होने लगे।

एक अक्टूबर, 1949 को साम्यवादी चीन की विधिवत् स्थापना हुई। जिन देशों ने क्रांति के पश्चात् साम्यवादी चीन को मान्यता दी, उनमें भारत भी सम्मिलित था। भारत ने 30 दिसंबर, 1949 को साम्यवादी चीन को मान्यता प्रदान की। भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन के प्रतिनिधित्व का पूरा समर्थन किया। परिणामतः अमेरिका तथा अन्य गैर-साम्यवादी देश अप्रसन्न ज़रूर हुए, परंतु भारत की यह नीति उसकी विदेश नीति के ठोस सिद्धांतों पर आधारित थी।

जिस सरकार को चीन के विशाल जनसमुदाय ने हृदय से स्वीकार किया, उसको मान्यता देना और संयुक्त राष्ट्र में उसकी सदस्यता का समर्थन करना, भारत का स्वाभाविक और नैतिक कदम था। सन् 1950 में जब भारत ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UN Security Council) के उस प्रस्ताव का समर्थन किया, जिसमें उत्तर कोरिया को दक्षिण कोरिया पर आक्रमण करने के लिये दोषी ठहराया गया था तब अमेरिका ने भारत की सराहना की थी। दूसरी ओर इससे साम्यवादी जगत को निराशा हाथ लगी। परंतु कुछ ही समय पश्चात् जब अमेरिकी नेतृत्व में संयुक्त राष्ट्र की सेनाएँ उत्तर कोरिया में प्रवेश कर गईं तथा चीन की ओर बढ़ने लगीं तब भारत ने स्पष्ट शब्दों में अमेरिका की भी आलोचना की। स्पष्ट है कि इन तमाम विकल्पों का चयन करके भारत ने अपनी स्वतंत्र विदेश नीति का परिचय दिया।

भारत-चीन संबंधों में पंचशील की भूमिका *(Role of Panchsheel in India-China relations)*

पंचशील के पाँच सिद्धांतों का भी इसी समझौते में उल्लेख किया गया। वाणिज्य समझौते पर हस्ताक्षर होने के पश्चात् चीन के प्रधानमंत्री चाऊ एन-लाई जून 1954 में भारत की यात्रा पर आए और फिर अक्टूबर 1954 में नेहरू चीन की यात्रा पर गए। दोनों प्रधानमंत्रियों का एक-दूसरे के देश में भव्य स्वागत किया गया। प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई की भारत यात्रा के दौरान जून 1954 के अंत में दोनों प्रधानमंत्रियों ने एक संयुक्त विज्ञप्ति में इस बात पर बल दिया कि दोनों देशों के पारस्परिक संबंध भविष्य में पंचशील के आदर्शों पर आधारित होंगे। पंचशील के सिद्धांत को औपचारिक मान्यता इसी विज्ञप्ति द्वारा प्रदान की गई। पंचशील के पाँच सिद्धांत निम्नलिखित हैं-

- एक-दूसरे की प्रादेशिक अखंडता और संप्रभुता के लिये पारस्परिक सम्मान की भावना पर आचरण करना।
- अनाक्रमण अर्थात् एक-दूसरे पर आक्रमण न करना।
- एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना।
- समानता और आपसी हित।
- शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व।

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने पंचशील की घोषणा करते समय कहा था कि इन सिद्धांतों के पालन से ही स्थायी विश्व शांति की स्थापना संभव हो सकेगी। पंचशील के सिद्धांतों को 29 अफ्रीकी-एशियाई देशों के सम्मेलन-1955 (Bandung Conference-1955) में कुछ परिवर्तनों के साथ स्वीकार किया गया। द्विपक्षीय संबंधों के आधार पर बाद में अन्य अनेक देशों ने भी पंचशील को स्वीकार कर लिया।

भारत-चीन की प्रगाढ़ मैत्री तथा 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' का युग पंचशील पर हस्ताक्षर होने के बाद के चार वर्षों को कहा जाता है। प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई ने सन् 1954-1957 की अवधि में चार बार भारत की यात्रा की। भारत-चीन मैत्री, अफ्रीकी-एशियाई देशों के बांडुंग सम्मेलन (अप्रैल 1955) के समय अपनी चरम सीमा पर थी। उस समय चाऊ-एन-लाई और जवाहर लाल नेहरू ने निकटतम सहयोग का प्रदर्शन किया था। अफ्रीकी-एशियाई देशों के बांडुंग सम्मेलन (Bandung Conference) के पश्चात् फार्मोसा तट से दूर स्थित क्वेमोए और मात्सू द्वीपों पर चीन के दावे को भारत ने पूर्ण नैतिक और राजनयिक समर्थन प्रदान किया। च्यांग काई-शेक की राष्ट्रवादी सरकार सन् 1949 में मुख्य भूमि से पलायन करके फार्मोसा (ताइवान) में स्थापित हो गई थी और अब जनवादी चीन की सरकार उसे 'स्वतंत्र' करवाना चाहती थी। इस बीच साम्यवादी चीन की सरकार गोवा और पुर्तगाली बस्तियों पर भारत के दावे का समर्थन करती रही।

चीन की 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' नीति *('String of Pearls' policy of China)*

21वीं सदी में चीन ने 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' (String of Pearls) द्वारा भारत के सुरक्षा मानदंडों की अवहेलना करते हुए भारत को घेरने की एक रणनीति बनाई। वस्तुत: 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' अर्थात् 'मोतियों की माला' विदेशी बंदरगाहों व हवाई अड्डों तक अपनी पहुँच बढ़ाकर, विशिष्ट राजनयिक संबंधों का विकास कर और दक्षिण चीन सागर से मलक्का जलडमरूमध्य (Malacca Strait), हिन्द महासागर होते हुए, विशेषकर म्याँमार, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, मालदीव, मॉरीशस, सेशेल्स व पाकिस्तान जैसे देशों को शामिल करते हुए अरब की खाड़ी तक विस्तृत सैन्य बलों के आधुनिकीकरण द्वारा भू-राजनीतिक प्रभाव बढ़ाने हेतु चीन की एक सामरिक रणनीति है।

स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स रणनीति की मूल मान्यताएँ निम्नलिखित तथ्यों पर आधारित हैं:

1. क्षेत्र में विभिन्न देशों की सहमति से आर्थिक व सैन्य शक्ति केंद्रों की श्रृंखला कायम करना।
2. विभिन्न ज़रूरतमंद देशों की आवश्यकताओं को प्रभावित करने के लिये उक्त अनुकूलता कूटनीति व आर्थिक पैकेजों के संयोजन द्वारा सुरक्षित करने का प्रयास करना।
3. आस-पास के सभी हवाई अड्डों व बंदरगाहों तक अपनी पहुँच बढ़ाना व उन्हें आर्थिक व सैन्य दोनों स्तरों पर भविष्य के कार्यकलापों के लिये आधारभूमि के रूप में देखना।
4. चीन व संबंधित देश द्वारा दोनों के हित वाले सभी रणनीतिक क्षेत्रों में अधिकाधिक निवेश करना। इस संदर्भ में चीन ने दक्षिण चीन सागर के हैनान द्वीप, मलक्का जलडमरूमध्य, बांग्लादेश में चिटगाँव, म्याँमार में जादेत्की, थाईलैंड में

लेम चावांग व कंबोडिया में सिहानोकविले में बंदरगाहों के विकास में निवेश किया है। यह हिन्द महासागर, श्रीलंका, मालदीव, पाकिस्तान के ग्वादर पोर्ट, अरब सागर, फारस की खाड़ी आदि द्वीपों तक विस्तृत है।

चीन की सिल्क रूट परियोजना *(China's Silk Route project)*

चीन ने समुद्री सिल्क रूट सड़क प्रस्ताव में भारत को शामिल करने का प्रस्ताव किया है। सिल्क रूट पहल के ज़रिये चीन हिन्द महासागर क्षेत्र में अपना प्रभाव बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। वह दक्षिण चीन सागर में अपने प्रभाव को बढ़ाने के लिये शक्ति जुटाना चाहता है, जो प्रशांत महासागर और हिन्द महासागर के बीच महत्त्वपूर्ण गलियारा है।

- चीन में आर्थिक विकास धीमा पड़ रहा है। ऐसे समय में सिल्क रूट प्रस्ताव इस तरह तैयार किया गया है कि चीन की कंपनियों को लाभप्रद ठेके मिल सकें। यह उदार निवेश और भरोसे के तौर पर व्यावसायिक पैठ बनाने की दृष्टि से तैयार किया गया है।
- चीन की नज़र हिन्द महासागर की समृद्ध खनिज संपदा पर भी है। एक ओर वह वहाँ गहरे समुद्र तल में खनन के लिये भारत को आमंत्रित करता है लेकिन दूसरी तरफ दक्षिण चीन सागर में भारत-वियतनाम सहयोग का विरोध करता है।
- सिल्क रूट सड़क प्रस्ताव क्षेत्रीय सरकारों को सहयोगी बनाने की चीन की विस्तृत रणनीति के अनुरूप है।

समुद्री सिल्क रूट के ज़रिये चीन, हिन्द महासागर में शक्ति के वर्तमान संतुलन को चुनौती दे रहा है। इसका प्रयास महत्त्वपूर्ण समुद्री रास्तों के साथ बंदरगाह परियोजनाओं को हासिल करना, म्याँमार और पाकिस्तान के ज़रिये चीन तक ऊर्जा और परिवहन गलियारा बनाना और बड़े व्यापारिक रास्तों के ज़रिये ईंधन भरने वाले स्टेशन और सामुद्रिक नियंत्रण वाले आउटपोस्ट के रूप में 'मोतियों की माला' बनाना है।

भारत की चिंता (India's Concern)

चीन ने अपनी महत्त्वाकांक्षी सिल्क रोड परियोजना के वन बेल्ट वन रोड (ओबीओआर) को लेकर भारत की आशंकाओं को नकार दिया है। चीन ने भारत को आश्वस्त किया है कि इस परियोजना से जुड़ने वाले देश व्यावसायिक रूप से लाभ में रहेंगे।

इस परियोजना का उद्देश्य उन सभी देशों को लाभ प्रदान करना है जो इसमें चीन के साथ शामिल होंगे। वर्तमान विश्व में कोई भी देश अकेले तरक्की नहीं कर सकता। ओबीओआर परियोजना कई देशों से जुड़ी है। प्राचीन समय में भी चीन इसी सिल्क रोड के ज़रिये कई सभ्यताओं, संस्कृतियों और धर्मों के संपर्क में आया।

भारत ने ओबीओआर परियोजना के तहत प्रस्तावित चीन-पाकिस्तान आर्थिक कॉरीडोर (सीपीईसी) का विरोध किया है क्योंकि इसका पाक अधिकृत कश्मीर से होकर गुज़रना तय है। लेकिन भारत ने आधिकारिक तौर पर ओबीओआर का कभी खुले तौर पर विरोध नहीं किया। इस परियोजना के लिये चीन ने 46 अरब डॉलर का सिल्क रोड फंड बना रखा है।

नाभिकीय आपूर्तिकर्त्ता समूह में भारत की सदस्यता *(India's membership in Nuclear Supplier Group: NSG)*

- यह नाभिकीय ईंधन एवं प्रौद्योगिकी के निर्यात को नियंत्रित करने वाला 48 सदस्यीय समूह है, जिसमें फैसला सर्वसम्मति से लिया जाता है।
- भारत अपनी बढ़ती ऊर्जा की आवश्यकता को पूरा करने एवं नवीन नाभिकीय प्रौद्योगिकी एवं अबाध नाभिकीय ईंधन तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिये इस समूह की सदस्यता पाने का प्रयास पिछले एक वर्ष से अधिक समय से कर रहा है।

सदस्यता में बाधा क्यों? (Why Obstacles to the Membership?)

- भारत को इसकी सदस्यता प्राप्त करने में चीन के साथ-साथ कुछ अन्य देशों द्वारा व्यवधान उत्पन्न किया जा रहा है।
- चीन का तर्क है कि भारत ने अभी तक परमाणु अप्रसार संधि (एन.पी.टी.) पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं, जो इस समूह में प्रवेश की पूर्व शर्त है।

- चीन का कहना है कि किसी विशिष्ट देश (भारत) के लिये नियमों में बदलाव करना उचित नहीं है।
- चीन के अनुसार, भारत को समूह में प्रवेश करने के मुद्दे से पहले गैर-एन.पी.टी. हस्ताक्षरित देशों के प्रवेश के संबंध में नियम बनाया जाना चाहिये। इस प्रावधान के द्वारा चीन, पाकिस्तान को इस समूह में प्रवेश कराना चाहता है।

समाधान एवं भारत का तर्क (Solution & Argument of India)

- भारत का कहना है कि उसका अब तक का नाभिकीय सुरक्षा संबंधी ट्रैक रिकॉर्ड काफी शानदार रहा है एवं एन.एस.जी. परमाणु अप्रसार से संबंधित न होकर निर्यात नियंत्रण से संबंधित है। अतः एन.पी.टी. पर हस्ताक्षर आवश्यक शर्त नहीं होनी चाहिये।
- साथ ही भारत परमाणु अप्रसार संधि को भेदभावपूर्ण मानता है। अतः इस पर हस्ताक्षर को तैयार नहीं है।
- भारत, रूस के माध्यम से (चूँकि वर्तमान में रूस-चीन के संबंध प्रगाढ़ हैं) चीन पर कूटनीतिक दबाव बनाने की रणनीति पर विचार कर रहा है, जिसके बदले में कुडनकुलम नाभिकीय प्लांट में दो और इकाइयों के प्रस्ताव को हरी झंडी दिखाई जा सकती है।
- इसके साथ ही भारत, चीन के साथ 'बैकचैनल कूटनीति' (पर्दे के पीछे की कूटनीति) के द्वारा उसकी चिंताओं का समाधान करने का प्रयास कर रहा है, जिसके अंतर्गत भारत यह समझाने का प्रयास कर रहा है कि यह उसकी स्वच्छ ऊर्जा एवं पर्यावरण संधि की प्रतिबद्धताओं को पूरा करने हेतु आवश्यक है।
- संभावना है कि इसका सकारात्मक प्रभाव जल्द सामने आ सकता है, किंतु चीन ने स्पष्ट कर दिया है कि बिना प्रक्रियागत मुद्दों को सुलझाए वह अपना सहयोग नहीं देगा।

भारत चीन सीमा विवाद *(India China border dispute)*

1962 से लेकर आज तक भारत-चीन के बीच चल रहे सीमा विवाद का हल नहीं हो सका। दोनों देशों के द्वारा सीमा-विवाद के मुद्दे पर अत्यधिक कठोर दृष्टिकोण अपनाया गया है, क्योंकि चीन के द्वारा अपने समूचे सीमावर्ती क्षेत्रों पर बेहतर आधारभूत संरचना का निर्माण किया गया है, जबकि भारतीय क्षेत्र में आधारभूत संचानाओं के निर्माण में चीन विरोध व्यक्त कर रहा है एवं उसके अनुसार जब तक सीमा विवाद हल नहीं होगा तब तक भारत इन क्षेत्रों में आधारभूत संरचनाओं का निर्माण नहीं कर सकता।

- भारत का आरोप है कि चीन निरंतर भारतीय सीमा के क्षेत्र में अतिक्रमण करता रहता है, जबकि चीन का कहना है कि दोनों के बीच कोई सीमा ही नहीं है, इसलिये अतिक्रमण का सवाल पैदा नहीं होता-
- चीन का तर्क है कि अक्साई चीन जम्मू-कश्मीर का एक भाग है, जो विवादास्पद है, इसलिये सीमा विवाद में इसे शामिल नहीं किया जाना चाहिये, जबकि भारत इसे अपना हिस्सा मानता है।

सीमा-विवाद को हल करने के लिये पैकेज दृष्टिकोण अपनाया जाता है, जिसके अंतर्गत अरुणाचल क्षेत्र में भारत का कब्ज़ा है तो यह भारत को प्राप्त हो जाए। सीमा के तीन सेक्टर हैं, जिसमें मध्य सेक्टर पर सबसे कम विवाद है, इसलिये विश्वास निर्माण हेतु पहले मध्य सेक्टर में समझौते की पहल की जा सकती है, तत्पश्चात् अन्य सेक्टर में विवाद का समाधान होगा। भारत एवं चीन सीमा विवाद का मूल कारण दो महाशक्तियों के बीच हितों का टकराव एवं विद्यमान गंभीर अविश्वास है, जिन्हें परस्पर लेन-देन से हल किया जा सकता है।

दक्षिण चीन सागर विवाद *(South China sea dispute)*

चीन के द्वारा 9 डैश लाइन का समर्थन किया जा रहा है, जबकि संयुक्त राष्ट्रसंघ के समुद्री कन्वेंशन में यह कहा गया है कि प्रत्येक राज्य को समुद्र के 12 नॉटिकल मील में अपनी संप्रभुता का अधिकार होगा तथा 200 नॉटिकल मील तक उस देश का अपने समुद्री क्षेत्र तक अन्य अधिकार होगा। चीन के दावे के अनुसार वर्तमान व्यवस्था से फिलीपींस जैसे राज्यों के अनन्य अधिकार प्रभावित हो रहे हैं। 'अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण' के द्वारा चीन के दावे को अस्वीकार कर दिया गया है, फिर भी चीन इसे मानने के लिये तैयार नहीं है, क्योंकि चीन के अनुसार यह समुद्री सीमा विवादित नहीं है, बल्कि चीन का भौगोलिक क्षेत्र है।

दक्षिण चीन सागर विवाद-एवं नौवाहन की स्वतंत्रता

दक्षिण चीन सागर: विवाद में अभी भी द्वीपों की संप्रभुता को लेकर विवाद है, इसलिये समुद्री सीमा क्षेत्र का भी विभाजन नहीं हो पा रहा है, परिणामस्वरूप चीन समुद्री जहाजों के आवागमन को प्रतिबंधित कर रहा है, जो अंतर्राष्ट्रीय कानून के विरुद्ध है। भारत का मानना है कि समुद्री नौवाहन की स्वतंत्रता को बाधित नहीं करना चाहिये, जिस दृष्टिकोण का समर्थन जापान, USA जैसे देश भी करते हैं।

दक्षिण चीन सागर विवाद और भारत

- भारत एवं वियतनाम के बीच अत्यधिक मित्रतापूर्ण संबंध है एवं तेल व गैस के उत्खनन का समझौता भी दोनों के बीच हुआ है परंतु चीन को आपत्ति है कि भारत दक्षिण चीन सागर के विवादास्पद क्षेत्रों में दखल दे रहा है। भारत का मानना है कि यह भारत एवं वियतनाम के बीच का समझौता है और यदि चीन पाक अधिकृत कश्मीर में सड़क निर्माण के लिये पाकिस्तान को सहायता दे सकता है तो दक्षिण चीन सागर में भारत को चीनी सरोकार की परवाह करने की आवश्यकता नहीं है।
- भारत एक महाशक्ति है। अत: भारत के हितों का विस्तार समूचे विश्व में है। एक्ट ईस्ट नीति के अंतर्गत दक्षिणी-पूर्वी एशियाई देशों के साथ विशेष रूप से सिंगापुर, वियतनाम के साथ सैनिक संबंधों पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। भारत, जापान, दक्षिण कोरिया के बीच बढ़ते व्यापारिक-सामारिक संबंधों के कारण दक्षिणी चीन सागर का महत्त्व अत्यधिक बढ़ जाता है।
- दक्षिण चीन सागर विवाद चीन की आक्रामक नीतियों का परिणाम है, जिससे चीन के शांतिपूर्ण उभार के विचार पर भी प्रश्न खड़ा होता है। जिस तरीके से भारतीय सीमा विवाद के संदर्भ में चीन का दृष्टिकोण कठोर है, ठीक उसी प्रकार दक्षिण चीन सागर में भी वह अंतर्राष्ट्रीय मापदंडों की अवहेलना कर रहा है एवं चीनी राष्ट्रपति शी शिंगपिण की बढ़ती राजनीति के परिणामस्वरूप चीन का इन क्षेत्रों पर दावा और सुदृढ़ होगा।

भारत-चीन संबंध: विश्लेषण *(India-China relations: An analysis)*

भारत व चीन के संबंध में एक हद तक गंभीर समस्याएँ हैं, जो दोनों के मध्य अविश्वास का माहौल सृजित करती हैं। इनमें से एक अनिर्णीत सीमा विवाद है। शी जिनपिंग की यात्रा से पूर्व चीनी सैनिकों ने कश्मीर में नियंत्रण रेखा से 500 मीटर अंदर तक घुसपैठ की, लेकिन भारतीय पक्ष ने इस विषय को एक बड़ा मुद्दा नहीं बनाया। हालाँकि इस घटना की अनदेखी भारत द्वारा नहीं की जा सकती है।

सीमा विवाद के साथ तिब्बत समस्या भी लंबे समय से विवाद का बिंदु है। हालाँकि भारत ने तिब्बत पर चीन की संप्रभुता को स्वीकार कर लिया है लेकिन चीन ने उस समय केवल सिक्किम पर ही भारतीय संप्रभुता को स्वीकार किया तथा अरुणाचल प्रदेश के संदर्भ में अपना दावा वापस नहीं लिया है जिसे वह दक्षिणी तिब्बत के रूप में संदर्भित करता है। समस्याओं का एक और पहलू चीन की हिन्द महासागर में बढ़ती सक्रियता और भारत के पड़ोसी देशों पर वर्चस्व में वृद्धि से संबंधित है। इस चीनी रणनीति को 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' नाम दिया गया है, जबकि भारत में विशेषज्ञों का मानना है कि इस रणनीति का लक्ष्य भारत को हिन्द महासागर की ओर से घेरना है। भारत की यात्रा पर आने से पहले शी जिनपिंग ने दक्षिण एशिया में दो अन्य देशों श्रीलंका व मालदीव का दौरा किया, जो 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' के महत्त्वपूर्ण लिंक हैं। चीन ने इन दोनों देशों में समुद्री सिल्क रोड के विचार को सक्रिय तौर पर बढ़ावा दिया और इन दोनों देशों ने उसके विचार पर सहमति प्रकटकी।

व्यापार व आर्थिक संबंधों को विकसित करने के लिये दोनों देशों के मध्य मतभेदों को रातोंरात बदला नहीं जा सकता, किंतु चीन भारत के सबसे बड़े व्यापारिक साझीदारों में से एक है, इसलिये भारत व चीन को अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मतभेद दूर करने होंगे। भारत-चीन के मध्य 2001-02 में 38 बिलियन डॉलर का व्यापार था, जो वर्ष 2017 में बढ़कर 84 बिलियन डॉलर हो गया है किंतु इन आर्थिक आँकड़ों में व्यापार संतुलन चीन के पक्ष में अधिक है, जो कि एक चिंता का विषय है। भारतीय विदेश नीति के विशेषज्ञों का मानना है कि भले ही मित्रता न हो, किंतु दोनों देश लाभप्रद सहयोगी बन सकते हैं।

भारत व चीन वैश्विक नेतृत्व के लिये तकनीकी सहयोग के ज़रिये कुछ क्षेत्रों में मिलकर कार्य कर सकते हैं। इससे वे ज्ञान अर्थव्यवस्था के रूप में विकसित होंगे, जो उनकी आर्थिक संवृद्धि में सहायक होगा। चीन ने पहले ही सुझाव दिया था कि चीन के हार्डवेयर तथा भारत के सॉफ्टवेयर की विशेषज्ञता मिलकर दोनों देशों को परस्पर लाभ प्रदान कर सकती है। भारतीय प्रधानमंत्री ने चीन के साथ रिश्तों को 'आगे की ओर' अर्थात् INCH (इंडिया व चाइना) से MILES (मिलेनियम ऑफ इक्सेप्शनल सिनर्जी) के रूप में विशेषीकृत किया है, जिनका साझा लक्ष्य वर्ष 2050 तक 20 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था सृजित करना है, किंतु ऐसा लक्ष्य साकार होने के लिये शांति व विकास आवश्यक शर्तें हैं।

रणनीतिक रूप से दोनों देशों की नौसेनाओं के मध्य द्विपक्षीय अभ्यास व वार्ता आवश्यक है, जो हिन्द महासागर तथा दक्षिण चीन सागर में दोनों देशों के मध्य प्रतिस्पर्द्धा को कम कर परस्पर विश्वास बहाली का कार्य करेगा और अंततः हमें निस्संदेह नेहरू की चीन नीति से आगे बढ़ते हुए अक्साई चिन में सीमा रेखा का निर्धारण व मैकमोहन रेखा की पहचान के लिये समय-सारणी बनाकर वार्ताएँ आयोजित करनी चाहिये। सीमा पर तनाव की स्थिति दोनों देशों को उच्च लागत आधारभूत संरचना विकसित करने पर बाध्य करती है तथा शांतिपूर्ण अस्तित्व बनाए रखने के लिये एक बड़ी रुकावट के रूप में है।

आज तेज़ी से बदलती विश्व व्यवस्था में पूरी तरह से नई परिस्थितियों से निर्मित वैश्विक अर्थव्यवस्था, राजनीति व सुरक्षा का गठन किया जा रहा है। ऐसे में एशिया की दो प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के बीच संबंध इस प्रकार विकसित किये जाएँ, जो न केवल इस क्षेत्र की स्थिरता बल्कि आने वाले दशकों की वैश्विक राजनीति को निर्देशित कर सकें।

भारत एवं चीन एशिया की दो बड़ी महाशक्तियाँ हैं, दोनों पड़ोसी हैं, शंघाई सहयोग संगठन, ब्रिक्स विकास बैंक, पर्यावरण संरक्षण, व्यापार एवं निवेश के मुद्दों पर सहयोग बना हुआ है। वहीं गहरे अविश्वास के कारण दोनों के मध्य सीमा विवाद, चीन के द्वारा भारतीय क्षेत्रों पर अपना दावा एवं अतिक्रमण, चीन का पाकिस्तान के साथ सामरिक संबंध तथा भारत का चीन के साथ व्यापार घाटा, कुछ विवाद तथा चिंता के मुद्दे हैं। चीन के द्वारा भी तिब्बत एवं दलाई लामा के विषय में तथा भारत-अमेरिका एवं भारत-जापान संबंधों को लेकर असंतोष प्रकट किया जा रहा है। आर्थिक रूप से चीन का शक्तिशाली उभार भारत के लिये अवसर प्रतीत होता है, जबकि सामरिक रूप से यह एक गंभीर चुनौती है। अपने सामरिक हितों की रक्षा करते हुए भारत के साथ संबंध बेहतर करने का प्रयास करना चाहिये।

7.4 भारत तथा पड़ोसी देश *(India and Neighbouring Countries)*

भारत और नेपाल *(India and Nepal)*

सांस्कृतिक रूप में नेपाल भारत का विस्तार माना जाता है एवं नेपाल की अधिकांश जनसंख्या (80–85%) हिन्दू धर्मावलंबी है। नेपाल की 40% जनसंख्या मधेशी है, जिनके वैवाहिक संबंध भारतीयों के साथ हैं तथा मधेशी हिन्दी, मैथिली, भोजपुरी बोलते हैं। इसके अलावा दार्जिलिंग के गोरखा क्षेत्र में भारतीय मूल के नेपालियों का निवास है। नेपाल भारत एवं चीन के बीच अवस्थित एक बफर राज्य है, परंतु नेपाल की नज़दीकी भारत से ज़्यादा है, क्योंकि नेपाल का मैदानी क्षेत्र भारतीय भू-भाग से मिलता है, जबकि नेपाल एवं चीन के बीच हिमालय अवस्थित है। नेपाल का सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी भारत है। नेपाल के व्यापार का लगभग 70% भारत के साथ संचालित होता है। नेपाल में जाने वाले पर्यटकों की बड़ी संख्या भारत से है तथा लाखों नेपाली अपनी आजीविका के लिये कार्य करने हेतु भारत में रह रहे हैं। भारत-नेपाल के बीच जलविद्युत के उत्पादन में साझे सहयोग पर बल दिया जा रहा है, इसके लिये समझौता 1996 से ही हो चुका है, परंतु इसको आज तक क्रियान्वित नहीं किया गया।

भारत-नेपाल के बीच की 1950 की शांति एवं मित्रता संधि के द्वारा यह प्रावधान किया गया कि नेपाल में रहने वाले भारतीयों को एवं भारत में रहने वाले नेपालियों को नागरिकों का दर्जा दिया जाएगा। इसी संधि का प्रावधान है कि भारत-नेपाल के बीच मुक्त-आवागमन होगा।

नेपाल एक छोटा देश है, जो भारत की सुरक्षा के लिये कोई सीधा खतरा पैदा नहीं कर सकता, परंतु नेपाल में चीन के बढ़ते प्रभाव से भारत की सुरक्षा के लिये मनोवैज्ञानिक खतरा उत्पन्न होता है। पाकिस्तान के द्वारा भारत विरोध के लिये एवं भारत में आतंकवाद फैलाने के लिये नेपाल का प्रयोग 'लॉन्चिंग पैड' के रूप में किया जाता है। चीन इस समय नेपाल को आर्थिक सहायता देने वाला सबसे बड़ा देश बन गया है एवं चीन नेपाल की जलविद्युत परियोजना के विकास में भी दिलचस्पी ले रहा है। यद्यपि नेपाली भी मनोवैज्ञानिक रूप में भारत से भयभीत होते हैं। अभी हाल ही में भारत-नेपाल सीमा को मधेशी आंदोलन के द्वारा रोक दिया गया था और नेपाल का यह आरोप था कि भारत के द्वारा सीमा पर आवाजाही को प्रतिबंधित किया गया।

स्थिर एवं शांतिपूर्ण नेपाल भारत के दीर्घकालिक हित में है। दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक एवं भौगोलिक संबंध अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं, जिसका लाभ आर्थिक संबंधों में भी उठाया जाना चाहिये, जिससे दोनों देशों के बीच विश्वास बेहतर होगा। भारत के द्वारा नेपाल के साथ संबंध बेहतर बनाने के लिये निम्न उपाय किये जाने चाहिये-

- नेपाल में भारत के सुरक्षा एवं आर्थिक हित विद्यमान हैं। चीन के बगल में अवस्थित होने के कारण नेपाल का महत्त्व भारत के लिये अत्यधिक बढ़ जाता है। अत: 'पीपुल टू पीपुल कॉन्टैक्ट' को बढ़ावा देना।
- नेपाल की आधारभूत संरचना के विकास में ज़्यादा से ज़्यादा सहायता करना।
- आधारभूत संरचना को समयबद्ध रूप में पूर्ण करना।
- जलविद्युत क्षेत्र में सहयोग को शीघ्र क्रियान्वित करना।
- नेपाल के छात्रों को भारतीय विश्वविद्यालयों में सुविधा प्रदान करना।
- नेपाल के बुद्धिजीवियों और पत्रकारों के साथ संबंध प्रगाढ़ करके नेपाल में विद्यमान भारत-विरोधी प्रवृत्ति को कम करना।

भारत और बांग्लादेश *(India and Bangladesh)*

बांग्लादेश का निर्माण पंथनिरपेक्ष लोकतांत्रिक विचारधारा की विजय माना जाता है, परंतु वर्तमान में कट्टरवादी तत्त्वों के द्वारा पंथनिरपेक्ष विचारधारा का कड़ा विरोध किया जा रहा है। बांग्लादेश में एक ओर राष्ट्रवादी पंथनिरपेक्ष लोकतांत्रिक शक्तियाँ हैं तो दूसरी ओर धार्मिक कट्टरवादी ताकतें हैं, जिनका प्रभावी होना भारत की पंथनिरपेक्ष विचारधारा के लिये चुनौती है। यह पाकिस्तान का बांग्लादेश में प्रभाव बढ़ाने में भी सहायक होगा।

यह उल्लेखनीय है कि भारत के द्वारा बांग्लादेश से पारगमन मार्ग (ट्रांजिट रूट) की मांग की जा रही है। बांग्लादेश इसे प्रदान करने पर सैद्धांतिक रूप में सहमत भी हो चुका है, परंतु इसके बदले में 'तीस्ता' नदी के पानी के आधे हिस्से की मांग कर रहा है। पूर्वोत्तर राज्य में कार्य करने वाले उग्रवादी संगठन उल्फा (ULFA), NDFB, NACN अपनी गतिविधियों के लिये बांग्लादेश एवं म्याँमार में शरण लेते हैं। इसलिये बांग्लादेश के साथ बेहतर संबंधों से अवैध घुसपैठ तथा उग्रवाद की समस्या का समाधान संभव है। सीमा प्रबंध को बेहतर करना तथा समूची सीमा पर बाड़ लगाने के कार्य को पूर्ण करना आवश्यक है। बांग्लादेश से होने वाले अवैध घुसपैठ का एक बड़ा कारण गरीबी एवं बेरोज़गारी है। अत: बांग्लादेश के आर्थिक विकास में भारत को सक्रिय सहायता देने की आवश्यकता है। भारत एवं बांग्लादेश के बीच में जटिल भौगोलिक संबंध हैं। अत: स्थानीय लोगों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये सीमावर्ती क्षेत्रों में बाज़ार हाट का प्रबंध किया जाए। फिलहाल जितने अवैध घुसपैठी भारत में प्रवेश कर चुके हैं, उनको वापस बांग्लादेश भेजने के लिये बांग्लादेशी सरकार के साथ विचार-विमर्श किया जाए।

वर्तमान उदारीकरण के दौर में भारत के द्वारा पड़ोसियों के साथ निवेश एवं व्यापार पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। बांग्लादेश के साथ भारत के लगभग 7.5 बिलियन डॉलर का द्विपक्षीय व्यापार है, जिसमें बांग्लादेश को बड़ा व्यापारिक घाटा है। इसे दूर करने के लिये बांग्लादेश की वस्तुओं को भारत में शुल्क मुक्त रूप में लोन की सुविधा दी जा रही है। भारत की निजी कंपनियों का बांग्लादेश में निवेश हो रहा है, बांग्लादेश के आधारभूत संरचना के विकास के लिये भारत द्वारा 2 बिलियन डॉलर की आर्थिक सहायता दी गई है। भौगोलिक एवं सांस्कृतिक निकटता के कारण व्यापार की अत्यधिक संभावनाएँ हैं एवं पारगमन रास्ते की शुरुआत के बाद व्यापार में ज़्यादा बढ़ोतरी होगी।

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में जल विवाद एक नवीन विषय है, जो दक्षिण एशिया में प्रमुख मुद्दा बना हुआ है। गुजराल सिद्धांत के अनुसार छोटे पड़ोसी देशों को एकतरफा छूट प्रदान करनी चाहिये। इसलिये बांग्लादेश को तीस्ता नदी के जल विभाजन में आधा हिस्सा दिया जा सकता है, क्योंकि बांग्लादेश 'पारगमन मार्ग इसके बदले देने को तैयार है। नदी जल विभाजन का मुद्दा मूलतः राजनैतिक है, क्योंकि भारतीय संविधान में जल राज्यसूची का विषय है और प.बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी जल के मुद्दे पर कोई छूट देने को तैयार नहीं है। इसलिये भारत-बांग्लादेश के बीच अत्यधिक मित्रता पूर्ण एवं मधुर संबंधों में तीस्ता मुद्दा विवाद का कारण बना हुआ है।

रोहिंग्या विवाद

रोहिंग्या विवाद अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में सुरक्षा की नवीन गैर-परंपरागत चुनौती का एक उदाहरण है, जिससे ये प्रतीत होता है कि पड़ोस में शांति एवं स्थायित्व होना देश के विकास के लिये अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। रोहिंग्या शरणार्थी समस्या भारत की सुरक्षा के लिये एक जटिल चुनौती है। भारत म्याँमार पर दबाव नहीं बना सकता बल्कि समस्या के शांतिपूर्ण समाधान पर बल दे रहा है। भारत के द्वारा बांग्लादेश में आने वाले रोहिंग्याई शरणार्थियों के लिये खाद्यान्न एवं आर्थिक सहायता प्रदान की गई। भारत की विदेश नीति में मानव अधिकारों के आधार पर सदैव शरणार्थियों को रहने की अनुमति प्रदान की गई, परंतु बांग्लादेश से आए अवैध घुसपैठी पहले ही सुरक्षा के लिये चुनौती उत्पन्न कर रहे हैं। इस वजह से उन्हें शरण देने से इंकार कर दिया गया।

असम में नेशनल पॉपुलेशन रजिस्टर (भारत-बांग्लादेश संबंध)

संसद द्वारा निर्मित नागरिकता अधि. 1955 के अनुसार प्रत्येक राज्य एवं जनपद में जनसंख्या के विवरण के लिये जनसंख्या रजिस्टर होना चाहिये एवं भारत में यह पहले से ही निर्धारित किया जा चुका है कि 1971 के बाद भारत से आने वाले अवैध घुसपैठियों को वापस भेजा जाएगा। इन शरणार्थियों को वापस भेजना बांग्लादेश के साथ संबंधों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करेगा।

भारत और पाकिस्तान *(India and Pakistan)*

भारत एवं पाकिस्तान के बीच गहरा अविश्वास विद्यमान है। दोनों के दृष्टिकोण एक दूसरे के अत्यधिक प्रतिकूल हैं, क्योंकि पाकिस्तान का मानना है कि भारत पाकिस्तान का अस्तित्व नहीं देखना चाहता एवं वह पाकिस्तान को समाप्त कर देना चाहता है। वैश्विक आतंकवाद के मुद्दे पर प्रोपेगेंडा करके पाकिस्तान को विश्व से अलग-थलग करना चाहता है। भारत के अनुसार पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ एक प्रॉक्सीवार (छद्मयुद्ध) चला रखा है, वह सीमा पार आतंवाद के माध्यम से न केवल कश्मीर में हिंसा फैला रहा है बल्कि भारत की संप्रभुता के लिये सबसे बड़ा खतरा पैदा कर रहा है। इसी विरोधाभासी दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप पिछले 70 वर्षों में दोनों देशों के बीच संबंधों में कोई प्रगति नहीं हुई तथा कश्मीर सीमा विवाद, जल विवाद के मुद्दे यथावत हैं। इन प्रतिकूल संबंधों के बावजूद पाकिस्तान के साथ संबंधों को सकारात्मक बनाने के लिये निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं-

- खेल एवं सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देना।
- भारत एवं पाकिस्तान के बीच लोगों के आवागमन को बढ़ावा देना, छात्रों का आदान-प्रदान करना।
- व्यापारिक संबंधों को आगे बढ़ाना।
- भारत को सुरक्षा एवं सहयोग के मुद्दों को अलग-अलग रखना होगा, क्योंकि आतंकवाद एवं सुरक्षा के मुद्दे पर पाकिस्तान पर निरंतर दबाव बनाए रखा जाना चाहिए, जबकि दोनों के बीच वार्ता एवं शांति प्रयासों को सदैव खुला रखा जाना चाहिए, इसलिये भारत को पाकिस्तान के साथ संबंध बनाने में बहुआयामी दृष्टिकोण का प्रयोग करना चाहिये।

कश्मीर का मुद्दा

पाकिस्तान का दावा है कि कश्मीर मुस्लिम बहुल राज्य होने के कारण पाकिस्तान का भाग होना चाहिये। भौगोलिक रूप से कश्मीर पाकिस्तान के ज़्यादा निकट है। पाकिस्तान के अनुसार पाक में बहने वाली सभी नदियाँ कश्मीर से होकर बहती हैं।

भारत का दावा है कि कश्मीर का वैधानिक रूप में भारत में विलय किया गया, जिसका समर्थन कश्मीर संविधान सभा द्वारा किया गया। भारतीय राज्य का निर्माण किसी विशेष धर्मावलंबियों के लिये नहीं किया गया, अपितु पंथनिरपेक्ष लोकतांत्रिक देश में सभी को समान अधिकार दिये गए। जम्मू-कश्मीर में सर्वाधिक प्रभावी दल नेशनल कॉन्फ्रेंस ने मुस्लिम लीग की बजाय कॉन्ग्रेस का समर्थन किया था।

भारत के अनुसार, कश्मीर भारत का अभिन्न भाग है न कि विवादित क्षेत्र है। अत: भारत की नीति में शामिल है-

- सीमा पार आतंकवाद के विरुद्ध प्रभावी एवं कुशल सीमा प्रबंध किया जाना।
- कश्मीर में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सुदृढ़ करना।
- कश्मीर के विकास को बढ़ावा देना एवं मानव अधिकारों का हनन शून्य करना।

पाकिस्तान के द्वारा कश्मीर विरोध के आधार पर भारत विरोध को प्रभावी बनाया जाता है, जबकि भारत का मानना है कि दोनों देशों के बीच समस्या का मूल कारण सीमापार आतंकवाद है, कश्मीर नहीं।

सिंधु नदी जल संधि, 1960 *(Indus Water Treaty, 1960)*

भारत एवं पाकिस्तान के बीच नदियों के विभाजन के संबंध में 1960 में सिंधु नदी जल संधि संपन्न की गई जिसमें विश्व बैंक ने मध्यस्थता की। इस संधि के अनुसार सतलज, रावी, व्यास नदियाँ भारत को प्राप्त हुईं एवं सिंधु, झेलम, चिनाव पाकिस्तान को प्रदान की गईं। यह उल्लेखनीय है कि पाकिस्तान को प्राप्त नदियों का बहाव भी कश्मीर से होता है, इसलिये पाकिस्तान की नदियों पर भी भारत को पानी के सीमित प्रयोग (20%) का अधिकार दिया गया। संधि में संयुक्त नदी आयोग का भी प्रावधान है तथा यह उल्लेखित है कि इस पर विवाद की स्थिति में परस्पर विचार के द्वारा इसे हल किया जाएगा। अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थ की सहायता ली जा सकती है अथवा अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के द्वारा यह विवाद हल होगा। पाकिस्तान के द्वारा संधि पर विवाद खड़ा करके कश्मीर के अंतर्राष्ट्रीयकरण का प्रयास किया जाता है, भारत विरोधी नीति को प्रभावी बनाया जाता है, जिससे पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंक से विश्व जनमत का ध्यान हट सके।

भारत एवं पाकिस्तान के बीच जल विभाजन विवाद का मुख्य मुद्दा नहीं है अपितु दोनों के बीच विद्यमान गहरा अविश्वास है। पाकिस्तानी सेना के द्वारा अपनी आंतरिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिये भारत विरोधी नीति को बढ़ावा दिया जाता है। दोनों राज्यों के बीच विद्यमान गंभीर अविश्वास को देखते हुए 1991 के बाद 'ट्रैक-2 डिप्लोमेसी' की नई पहल की गई, जिसमें गैर-सरकारी प्रतिनिधियों के बीच वार्ता शामिल है। ट्रैक-2 की वार्ताओं में कश्मीर जैसे विवाद को शामिल किया जा सकता है तथा सभी विवादों पर समानांतर चर्चा संभव है। आलोचकों का मानना है कि भारत एवं पाकिस्तान के बीच संचालित ट्रैक-2 वार्त्ताओं को पुनर्संरचित करने की आवश्यकता है, क्योंकि फिलहाल इन वार्त्ताओं में शामिल ज़्यादातर प्रतिनिधि पहले सरकारी सेवाओं में रह चुके हैं। जबकि ट्रैक-2 में उन प्रतिनिधियों को प्राथमिकता देने की आवश्यकता है, जो सरकारी सेवाओं से जुड़े नहीं हैं, इसलिये उनकी वार्त्ता का दृष्टिकोण अनौपचारिक एवं लचीला होता है।

पाकिस्तान की नीति सदैव भारत विरोधी होती है, परंतु भारत एक बड़ा देश/महाशक्ति है। अत: उसकी नीति पाकिस्तान केंद्रित नहीं होनी चाहिये। भारत-पाकिस्तान के बीच वार्ता का विकल्प सदैव खुला रखना चाहिये। पाकिस्तान के प्रति भारत की नीति तदर्थ (अल्पकालिक) नहीं होनी चाहिये, दीर्घकालिक एवं बहुआयामी होनी चाहिये। जिसका अभिप्राय है कि वार्त्ता के साथ-साथ सुरक्षा एवं सीमा पार आतंकवाद के विषय पर पृथक् एवं कठोर रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। भारत के अनुसार सीमा पार आतंकवाद न केवल भारतीय सुरक्षा के लिये बड़ा खतरा है, अपितु विश्व की शांति एवं स्थिरता के लिये एक गंभीर चुनौती है। मुंबई आतंकी हमले के आरोपी मसूद अजहर को पाकिस्तान में प्रशासन एवं सेना का संरक्षण प्राप्त है। इसके अलावा पाक अधिकृत कश्मीर में लश्कर-ए-तैयबा, जैश-ए मोहम्मद के आतंकवादियों को पाक वित्तीय एवं सैनिक सहायता प्रदान कर रहा है जो भारत के विरुद्ध छद्म-युद्ध या अघोषित युद्ध चला रहे हैं। पाकिस्तान का तर्क है कि वह आतंकवाद से पीड़ित है, आतंकवाद फैलाने वाला देश नहीं है। कुलभूषण जाधव को पकड़कर पाकिस्तान यह भी सिद्ध करने का प्रयास कर रहा है कि भारत भी बलूचिस्तान में आतंकवाद को बढ़ावा दे रहा है, परंतु पाकिस्तान आतंकवाद के मुद्दे पर चीन के अलावा किसी अन्य देश का समर्थन प्राप्त नहीं कर पा रहा है। वर्तमान ट्रंप प्रशासन द्वारा यह स्पष्ट कहा

गया कि पाक अफगानिस्तान व अन्य देशों में आतंकवाद फैला रहा है एवं आतंकवादियों को सहायता भी दे रहा है। पाकिस्तान के परंपरागत मित्रों में सउदी अरब एवं UAE ने पाकिस्तानी नीतियों का समर्थन नहीं किया एवं भारत द्वारा मसूद अजहर, हाफिज़ सईद पर प्रतिबंध लगाने की मांग सुरक्षा परिषद में उठाई गई, जिससे यह सिद्ध किया जा सके कि विश्व में आतंकवाद बढ़ने के पीछे पाकिस्तान की बड़ी भूमिका है।

बलूचिस्तान समस्या

बलूचिस्तान समस्या पाकिस्तान के धर्म आधारित राष्ट्र निर्माण की विसंगति को प्रदर्शित करता है, जिसके नाम पर पाकिस्तानी सेना सरकार का सबसे शक्तिशाली अंग बन गई। इसी कारण कारण क्षेत्रीय असंतोष सदैव उत्पन्न हुए, जिसमें बलूचिस्तान प्रमुख है। पाकिस्तान का मानना है कि बलूचिस्तान समस्या के पीछे भारत का समर्थन है, जबकि भारत का तर्क है कि पाक में लोकतंत्र के अभाव, सेना के शक्तिशाली होने के परिणामस्वरूप बलूची लोग शासन के खिलाफ अपनी आवाज उठा रहे हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि बलूची समुदाय के लोग अफगानिस्तान व ईरान में भी रहते हैं और भारत बलूचिस्तान के अलगाव का सीधा समर्थन नहीं कर सकता क्योंकि ईरान एवं अफगानिस्तान के साथ भारत के संबंध मित्रतापूर्ण हैं।

भारत और भूटान *(India and Bhutan)*

भूटान दक्षिण एशिया में भारत का एकमात्र पड़ोसी देश है, जिसका कूटनीतिक संबंध चीन के साथ नहीं है। भूटान को सबसे बड़ी आर्थिक सहायता भारत देता है। भूटान की सुरक्षा का दायित्व भारत पर है। भूटान एक संप्रभु देश है, परंतु विदेश नीति एवं सुरक्षा के संबंधों में भारत से परामर्श करता है। भारत भूटान संबंध इस बात का प्रमाण है कि भारत छोटे पड़ोसी देशों के साथ 'बिग ब्रदर्स' की नीति नहीं अपनाता। भूटान को भारत से जलविद्युत क्षेत्र में सहयोग के कारण अत्यधिक आर्थिक लाभ हुआ है, जो भूटान की आय का सबसे बड़ा स्रोत है। भूटान भारत एवं चीन के बीच स्थित एक बफर राज्य है तथा भूटान भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र से सटा हुआ राज्य है। भारत, चीन की भाँति भूटान और चीन के बीच भी सीमा विवाद बना हुआ है, जो डोकलाम क्षेत्र में स्थित है एवं भारतीय सेना ही भूटान की रक्षा करती है। इसलिये चीन एवं भूटान के बीच का सीमा विवाद भारत चीन के बीच का सीमा विवाद बन जाता है। वर्तमान में नेपाल में माओवादियों के प्रभाव के कारण भूटान का महत्त्व और बढ़ जाता है, क्योंकि माओवादी अपना प्रभाव भूटान में स्थापित करना चाहते हैं, जो भविष्य में भारतीय हितों के लिये बड़ी चुनौती सिद्ध हो सकता है। वर्तमान भूटान लोकतांत्रिक हो चुका है। भारत भूटान संबंध मूलतः जलविद्युत सहयोग पर आधारित हैं, जिसे व्यापक बनाने की आवश्यकता है, जिसमें शामिल हैं–

- भूटानी छात्रों को भारत में अध्ययन के लिये विशेष सुविधा प्रदान करना।
- भारत-भूटान सांस्कृतिक संबंधों को सुदृढ़ करना।
- भूटान की आधारभूत संरचना के विकास में सहयोग करना।
- 'पीपुल टू पीपुल कॉन्टैक्ट' (लोगों के मध्य जुड़ाव) को सुदृढ़ करना।

भारत-भूटान संबंध इस मान्यता को प्रमाणित नहीं करते कि समय के साथ संबंध परिवर्तित हो जाता है, अपितु दोनों के बीच के संबंध सदाबहार एवं मित्रतापूर्ण है।

भारत और अफगानिस्तान *(India and Afghanistan)*

अफगानिस्तान की अवस्थिति एशिया में अत्यधिक केंद्रीय एवं महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि अफगानिस्तान की सीमा चीन (पूर्वी एशिया) से मिलती है। इसके अलावा अफगानिस्तान की सीमा पाकिस्तान, ईरान (पश्चिम एशिया), तुर्कमेनिस्तान, उज्बेकिस्तान, तजाकिस्तान (मध्य एशिया) के साथ मिलती है। अफगानिस्तान एक भूमि आबद्ध देश है तथा पाकिस्तान, अफगानिस्तान में प्रवेश के लिये भारत को पारगमन मार्ग उपलब्ध नहीं करा रहा है, इसलिये अफगानिस्तान में समुद्र मार्ग से प्रवेश के लिये भारत चाबहार पत्तन (ईरान) का विकास कर रहा है, जिससे होकर अफगानिस्तान में प्रवेश किया जा सके। यह पाकिस्तान के ग्वादरपत्तन से 72 किमी. दूर है। फारस की खाड़ी एवं हॉरमुज संधि के निकट होने के कारण इस मार्ग पर भारत की ऊर्जा एवं तेल की आपूर्ति निर्भर है। चाबहार के द्वारा मध्य एशियाई देशों में भी भारत की कनेक्टिविटी बेहतर होगी।

अफगानिस्तान, भारत का एकमात्र पड़ोसी देश है, जो पाकिस्तान को अपनी सुरक्षा के लिये खतरा मानता है। भारत अफगानिस्तान के साथ द्विपक्षीय राष्ट्रीय हितों के आधार पर संबंध प्रगाढ़ कर रहा है, जबकि पाकिस्तान अफगानिस्तान में भारत की उपस्थिति का प्रबल विरोधी है। पाकिस्तान भारत विरोध के द्वारा अफगानिस्तान में भारत के प्रवेश के लिये 'पारगमन मार्ग' भी नहीं उपलब्ध करा रहा है।

अफगानिस्तान में भारत के द्वारा आधारभूत संरचना के विकास के लिये प्रभावी योगदान दिया जा रहा है। भारत के द्वारा जरांग-डेलाराम राजमार्ग, हेरात एवं मजारे-शरीफ के बीच राजमार्ग तथा काबुल में 'सलमा बांध' का निर्माण किया जा रहा है। अफगानिस्तान के इस विकास में भारत लगभग 2 बिलियन डालर की आर्थिक सहायता दे चुका है तथा अफगानिस्तान को आर्थिक सहायता देने वाला विश्व का पाँचवा बड़ा देश है। आधारभूत संरचना के विकास के अलावा भारत के द्वारा अफगानिस्तान में क्षमता निर्माण कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है, जिसके अंतर्गत अफगानियों को भारत के द्वारा अनेक प्रकार के प्रशिक्षण दिये जा रहे हैं, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, कंप्यूटर, कृषि तथा सॉफ्टवेयर का विकास शामिल है। अफगानी छात्रों के भारत में अध्ययन के लिये छात्रवृत्ति प्रदान की जा रही है और सबसे महत्त्वपूर्ण अफगानी पुलिस एवं सेना को भारत प्रशिक्षण दे रहा है। यह उल्लेखनीय है कि भारत अफगानिस्तान के संबंध राष्ट्रीय हितों पर आधारित है, परंतु अफगानिस्तान के विकास में भारत की सकारात्मक भूमिका है। एक महाशक्ति होने के कारण भारत के हितों का विस्तार समूचे विश्व में है, जिसमें अफगानिस्तान भी शामिल है। अफगानिस्तान में शांति एवं स्थायित्व कश्मीर में आतंकवाद नियंत्रित करने में सहायक होता है। अफगानिस्तान के जरिये मध्य एशियाई देशों में भारत की पहुँच आसान होगी एवं इस क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली कट्टरवादी विचारधारा को भी नियंत्रित किया जा सकेगा। प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से अफगानिस्तान का अत्यधिक महत्त्व है तथा अफगानिस्तान के साथ व्यापार की भी अनेक संभावनाएँ हैं। इसलिये यह कहा जाता है कि अफगानिस्तान में भारत की उपस्थिति मध्य एशियाई देशों में भारत के बने रहने के लिये महत्त्वपूर्ण है और इससे भी बढ़कर यह भारत के महाशक्ति के दर्जे को सिद्ध कर सकता है।

अमेरिका की नई अफगान नीति

परंपरागत रूप में आतंक के विरुद्ध युद्ध में अमेरिका के द्वारा पाकिस्तान का प्रयोग प्रमुख सहयोगी देश के रूप में किया गया। जबकि वर्तमान में ट्रंप प्रशासन के द्वारा यह स्वीकार किया गया है पाकिस्तान अफगानिस्तान में आतंकवाद को बढ़ावा दे रहा है और पहली बार अमेरिकी प्रशासन के द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि अफगानिस्तान में शांति बनाए रखने में भारत की भूमिका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होनी चाहिये।

भारत तालिबानियों के साथ वार्ता के पक्ष नहीं है, क्योंकि तालिबानी शासक मूलतः पाकिस्तानी समर्थित शासक रहे हैं, जो अफगानिस्तान में भारत की भूमिका के विरोधी हैं। अफगानिस्तान में आधारभूत संरचना के विकास तथा क्षमता निर्माण के लिये भारत की सहायता को बनाए रखना, परंतु सेना भेजने के विकल्प पर विचार न करना अच्छा है। अफगनिस्तान की स्थिरता के लिये अमेरिका, रूस, ईरान जैसे देशों के साथ परस्पर विचार के आधार पर संबंध निर्माण किया जाना चाहिये। अफगानिस्तान भारत एवं पाकिस्तान के बीच सहयोग का एक मंच सिद्ध हो सकता है। इसके परिणामस्वरूप आतंकवाद तथा विघटनवाद पर भी कारगर नियंत्रण संभव है।

भारत और श्रीलंका *(India and Sri Lanka)*

हिन्द महासागर भारतीय सुरक्षा के लिये अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। श्रीलंका हिन्द महासागर में महत्त्वपूर्ण स्थिति रखता है। श्रीलंका में चीन के द्वारा हंबनटोटा पत्तन का विकास किया जा रहा है, मताला एयरपोर्ट बनाया गया है तथा कोलंबो पोर्ट सिटी प्रोजेक्ट का विकास किया जा रहा है। इसलिये वर्तमान में श्रीलंका को आर्थिक एवं सैनिक सहायता देने वाला सबसे बड़ा देश चीन है तथा श्रीलंका का सबसे बड़ा द्विपक्षीय व्यापारिक भागीदार भी बनने के लिये चीन तैयार है। चीन के हिन्द महासागर एवं दक्षिण एशिया में बढ़ते इस प्रभाव से भारतीय सुरक्षा के लिये चुनौती उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इसलिये पड़ोसी के रूप में श्रीलंका का भारत के लिये अत्यधिक महत्त्व है। दक्षिण एशिया में भारत-श्रीलंका संबंध आर्थिक संबंधों का एक मॉडल है, क्योंकि दोनों के बीच मुक्त व्यापार का समझौता संपन्न हुआ है। जाफना क्षेत्र में भारत के द्वारा पुनर्विकास

में आर्थिक सहायता दी जा रही है। इसके अलावा श्रीलंका में अनेक भारतीय निजी कंपनियों का निवेश है। भारत श्रीलंकाई सैनिकों को प्रशिक्षण देने वाला सबसे बड़ा देश है। हिन्द महासागर की सुरक्षा के मुद्दे पर भी दोनों के बीच सहयोग किया जा रहा है एवं भारत के द्वारा श्रीलंका में रडार लगाए गए हैं तथा गैर-युद्धक सैनिक सामग्री भी प्रदान की गई है।

जबकि यह उल्लेखनीय है कि चीन ने श्रीलंका के साथ सामरिक सहयोग का समझौता किया है। श्रीलंका भारत से मनोवैज्ञानिक रूप से भयभीत रहता है, क्योंकि श्रीलंका को यह आशंका है कि तमिलों को भारत समर्थन देता है। अतः दोनों देशों के बीच में मित्रतापूर्ण संबंधों के साथ-साथ अविश्वास भी बना हुआ है। तमिलों के अनुसार, आर्थिक विकास सांस्कृतिक स्वायत्तता का विकल्प नहीं है। श्रीलंका सरकार का तर्क है कि तमिल क्षेत्र में आधारभूत संरचना का विकास पुनर्वास समस्या समाधान में सहायक है। श्रीलंका के साथ भारत के आर्थिक एवं सैनिक संबंध तीव्र गति से बढ़ रहे हैं, जबकि सांस्कृतिक एवं भौगोलिक निकटता पहले से ही विद्यमान है। वर्तमान सिरीसेना सरकार एवं भारतीय सरकार के बीच अत्यधिक मधुर एवं मित्रतापूर्ण संबंध कायम हैं तथा भारत भी तमिल क्षेत्रों में विकास एवं पुनर्वास के लिये श्रीलंका को आर्थिक सहायता प्रदान कर रहा है।

भारत और मालदीव *(India And Maldives)*

द. एशियाई देशों में राजनीतिक अस्थायित्व, नृजातीय संघर्ष इस क्षेत्र में विद्यमान समस्या के मूल कारण हैं। वर्ष 2008 में मालदीव में राजतांत्रिक शासन का लोकतांत्रिक शासन की ओर संक्रमण हुआ, उसके बाद से ही शासन में अस्थायित्व बना हुआ है। वर्तमान राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन की घरेलू राजनीतिक स्थिति कमज़ोर हो रही है, परिणामस्वरूप उन्होंने संवैधानिक व्यवस्था का भी उल्लंघन किया तथा राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा को बढ़ा दिया, क्योंकि उन्हें चीन से समर्थन प्राप्त हो रहा है। वर्तमान में मालदीव में निवेश करने वाला सबसे बड़ा देश चीन है। वह 'फ्रेंडशिप ब्रिज' का निर्माण कर रहा है। चीन मालदीव के बीच मुक्त व्यापार का समझौता भी हो चुका है एवं हिन्द महासागर में समुद्री संचार मार्ग पर अवस्थित मालदीव में चीन अपनी सामरिक उपस्थिति बढ़ाने का प्रयास कर रहा है।

मालदीव के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने की नीति से भारत परहेज़ करता है। यद्यपि यह उल्लेखनीय है कि अमेरिका एवं भारत दोनों हिन्द महासागर में साझी रणनीति का प्रयोग कर रहे हैं। मालदीव में चीन के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिये उसे ज़्यादा से ज़्यादा आर्थिक सहायता प्रदान करनी होगी और यह सत्य है कि मुहम्मद नशीद का झुकाव भारत के प्रति रहा है, परंतु भारत को मालदीव के राजनीतिक संघर्ष में शमिल होने की आवश्यकता नहीं है। भारत के द्वारा मालदीव में 'रडार' लगा दिये गए हैं, परंतु भविष्य में मालदीव में चीन द्वारा नौसैनिक अड्डे बनाने की योजना भारतीय सुरक्षा के लिये बड़ी चुनौती है। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत OBOR (One Belt One Road) का पार्ट नहीं है, जबकि मालदीव इसमें शामिल हो चुका है।

मालदीव में इस्लाम को राज्य का आधिकारिक धर्म माना गया है एवं मालदीव में इस्लामिक कट्टरवाद में तेज़ी से वृद्धि हुई है। मालदीव के नागरिक सीरिया में ISIS की ओर से लड़ने गए। यह भी उल्लेखनीय है कि मालदीव में भारतीय मूल के लोगों की बड़ी संख्या है जो इस कट्टरवादी विचारधारा से प्रभावित होंगे। लक्षद्वीप मालदीव के निकट है इसलिये लक्षद्वीप में मालदीव की घटनाओं का सीधा प्रभाव पड़ेगा। मालदीव भारत का छोटा समुद्री पड़ोसी देश है, जिसमें विद्यमान अस्थिरता सीधे भारत को प्रभावित करती है, इसलिये भारत के द्वारा अमेरिका, फ्राँस जैसे देशों के साथ सहयोग सुदृढ़ करके हिन्द महासागर में अपने प्रभाव को संरक्षित किया जा सकता है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- तीस्ता नदी 414 किलोमीटर लंबी है तथा भारत में यह पश्चिम बंगाल एवं सिक्किम से होकर गुज़रती है। इसकी कुछ सहायक नदियाँ रानी खोला, रांग्पो, टिकू टू तथा रंगीत हैं।
- भारत और बांग्लादेश के मध्य वर्तमान में 4 बाजार हाट संचालित हो रहे हैं जिनमें कालीचर एवं बलाट मेघालय में तथा श्रीनगर एवं कमलासागर त्रिपुरा में अवस्थित हैं।

- भारत और पाकिस्तान के बीच सिंधु जल समझौता भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू तथा पाकिस्तान के तत्कालीन राष्ट्रपति अयूब खान के द्वारा हस्ताक्षरित है। यह समझौता 19 सितंबर, 1960 को कराची में संपन्न हुआ।
- मालदीव हिन्द महासागर में 1192 प्रवाल द्वीपों का समूह है, जो 90,000 वर्ग किलोमीटर में विस्तृत है।
- रोहिंग्या म्याँमार में रखाइन प्रांत में निवास करने वाला एक मुस्लिम समुदाय है, जिसे म्याँमार सरकार ने अपना नागरिक मानने से इनकार कर दिया है।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. चाबहार बंदरगाह भारत के लिये क्यों महत्त्वपूर्ण है?
2. भारत और अमेरिका के बीच संबंधों में मतभेद के बिंदु क्या हैं?
3. 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' की नीति क्या है?
4. चीन का शक्तिशाली उभार भारत के लिये चिंता का विषय क्यों है?
5. भारत-भूटान संबंध के मुख्य बिंदु क्या हैं?

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दीजिये)

1. दक्षिण चीन सागर में चीन की गतिविधियों के प्रति भारत की प्रतिक्रिया की विवेचना कीजिये।
   RAS (Mains) 2016
2. भारत के लिये श्रीलंका का क्या महत्त्व है?
3. बांग्लादेश के साथ व्यापार संतुलन बनाए रखने के लिये भारत के द्वारा अपनाए जाने वाले उपाय कौन से हैं?
4. दक्षिण चीन सागर विवाद क्या है? स्पष्ट करें।
5. भारत-रूस संबंधों में संभावनाएँ क्या-क्या हैं? विवेचना करें।
6. भारत एवं पाकिस्तान संबंध को सुधारने के लिये क्या उपाय किये जाने चाहिये?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. भारत और चीन संबंधों में उपस्थित चुनौतियों एवं संभावनाओं का वर्णन करें।
2. मालदीव हिन्द महासागर में भारत के हितों के लिये किस प्रकार महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है? स्पष्ट करें।
3. भारत की अफगानिस्तान के विकास में भूमिका का वर्णन करें।
4. 'भारत और रूस परंपरागत एवं घनिष्ठ मित्र हैं।' इस कथन के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करें।

अध्याय
8

एशिया में भू–राजनीतिक एवं रणनीतिक विकास (Geo-Political and Strategic Development in Asia)

एशिया विश्व का सबसे बड़ा महाद्वीप होने के साथ सर्वाधिक जनसंख्या वाला महाद्वीप भी है। एशिया में क्षेत्रीय स्तर पर सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक–आर्थिक एवं धार्मिक रूप से व्यापक विविधता विद्यमान है। कभी–कभी विविधता ना सिर्फ तनाव का कारण बनती है बल्कि कई विवादों एवं अशांति को भी जन्म देती है। एशिया में पश्चिम एशिया सर्वाधिक अशांत क्षेत्र है। वहीं दक्षिण एशिया के विकासशील देश अपने विकास कार्यक्रमों को तीव्र गति से संचालित कर रहे है। दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों ने आर्थिक एवं सामाजिक विकास के नए प्रतिमान हासिल किए हैं। ऐसे में इन क्षेत्रों के साथ भारत के संबंधों का रणनीतिक एवं सामरिक पक्ष भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है, जो भारत के निरंतर विकास एवं स्थायी शांति हेतु आवश्यक है।

8.1 दक्षिण एशिया एवं भारत *(South Asia and India)*

जहाँ तक दक्षिण एशिया का प्रश्न है तो इसे एक विडंबना ही कहा जाएगा कि दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय एकीकरण के लिये किसी योजना का सूत्रपात करने की ज़रूरत पड़े। अंग्रेज़ों द्वारा उपनिवेश बनाए जाने के पहले भारत की अपनी अलग पहचान थी और ईसा के जन्म से तीन शताब्दी पहले ही इस भू–भाग में मौर्य साम्राज्य की स्थापना हो चुकी थी, जिसका विस्तार उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण में मैसूर तक और पश्चिम में पुरुषपुर (पेशावर) से लेकर पूरब में बंगाल की खाड़ी तक था। सल्तनत व मुगल काल में भी समूचे भारतीय उपमहाद्वीप को ही सुल्तान या बादशाह एक ऐसा क्षेत्र समझता था जिस पर आधिपत्य स्थापित किये बिना उसकी संप्रभुता को निरापद या निर्विवाद नहीं समझा जा सकता। भारत की अपनी अलग पहचान है जो एक स्वायत्त–संपन्न–सबल राजनीतिक इकाई के रूप में ही नहीं बल्कि एक प्रभावशाली सांस्कृतिक स्रोत के रूप में भी हज़ारों वर्ष पुरानी व सुप्रतिष्ठित है।

धर्म, भाषा, वेश–भूषा, स्थापत्य कला, ललित कला तथा चिंतन पर भी अफगानिस्तान से लेकर इंडोनेशिया तक भारतीय छाप आज भी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। दुर्भाग्य से विदेशी साम्राज्यवादियों ने न केवल भारत की भौगोलिक एकता को धूर्ततापूर्वक खंडित किया वरन् उसकी सांस्कृतिक बहुलता को भी इन देशवासियों के बीच फूट डालने के उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया। आज का दक्षिण एशिया स्वतंत्रता तक एक ही था– इसके विभिन्न हिस्से आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में परस्पर पूरक थे। नहरों का जाल हो या रेल की पटरियों का तंत्र, यह सब भारतीय उपमहाद्वीप की अविभाजित पहचान को महत्त्वपूर्ण मानकर ही बनाए गए थे।

श्रीलंका से बर्मा (वर्तमान म्याँमार) तक के क्षेत्र ब्रिटिश भारतीय सरकार के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े थे। स्वयं अंग्रेज़ों ने बड़े पैमाने पर भारतीय मजदूरों, कारीगरों को ले जाकर इन दोनों जगहों पर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये बसाया था और इनके पीछे–पीछे भारी संख्या में डॉक्टर, वकील और व्यापारी भी वहाँ पहुँच गए। इन प्रवासी भारतीयों के माध्यम से भारतीय भू–भाग का आत्मिक और घनिष्ठ आर्थिक संबंध इन दोनों देशों के साथ बना रहा है। नेपाल के साथ यह नाता तो और भी नज़दीकी का है। श्रीलंका के संदर्भ में भारत के पूर्व प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने तो यहाँ तक कहा था कि उस देश के निवासियों के साथ हमारा हाड़–माँस का रिश्ता है।

ब्रिटिश सेनाओं ने 1816 में नेपाली सेनाओं को निर्णायक रूप से पराजित किया था और **सुगौली की संधि (Treaty of Sugauli)** के बाद यह स्पष्ट हो गया था कि भारतीय महाद्वीप में (नेपाल समेत) अंग्रेज़ ही संप्रभु शासक समझे जा सकते हैं। सिक्किम और भूटान ब्रिटिश औपनिवेशिक शासनकाल में भारत सरकार के संरक्षित राज्य थे (अंतर्राष्ट्रीय विधिक मान्यता के अनुसार ऐसे संरक्षित राज्यों को पूर्णतः स्वाधीन या संप्रभु नहीं कहा जा सकता)।

एक लंबे स्वाधीनता संघर्ष के बाद भारत 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र तो हो गया लेकिन दुर्भाग्य से देश की आज़ादी के साथ ही देश का विभाजन भी कर दिया गया। अंग्रेज़ों ने जब सत्ता का हस्तांतरण किया तो मुस्लिम–बहुल आबादी वाले क्षेत्रों को जोड़कर पाकिस्तान का निर्माण किया गया। पाकिस्तान के पूर्वी और पश्चिमी राज्यों के बीच लगभग डेढ़ हज़ार

किमी. का फासला था। विभाजन ने न केवल इस भू-भाग की ऐतिहासिक एकता को नष्ट किया बल्कि भविष्य में आर्थिक या राजनीतिक सहयोग को भी लगभग असंभव बना दिया।

भारत और पाकिस्तान के बीच दरार शीतयुद्ध के कारण और भी गहरी होती गई। भू-राजनीतिक दृष्टि से पाकिस्तान का सामरिक महत्त्व अमेरिका के लिये काफी संवेदनशील था। यही कारण था कि सेंटो (CENTO) और सीएटो (SEATO) संगठनों में उसे शामिल किया गया। दूसरी ओर जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी स्वाधीनता को बरकरार रखने के लिये कटिबद्ध था। भारत ने दो महाशक्तियों के बीच शक्ति-संघर्ष में गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई थी। तत्कालीन अमेरिकी विदेश मंत्री का मानना था कि जो राष्ट्र हमारे साथ नहीं, वह हमारे विरुद्ध है। परिणामत: अमेरिका पाकिस्तान को अपना मित्र और भारत को अपना शत्रु समझने लगा।

ऐसा नहीं कहा जा सकता कि पाकिस्तान सदैव अमेरिका द्वारा लाभान्वित हुआ हो। अमेरिका द्वारा आँख मूँदकर बेहद अदूरदर्शी तरीके से पाकिस्तान को दी गई सैनिक सहायता भविष्य में पाकिस्तान के लिये भी आत्मघाती सिद्ध हुई। पाकिस्तान की फौज अपने को सर्वशक्तिमान और निरंकुश समझने लगी। एक तख्ता-पलट के बाद पचास के दशक के प्रारंभिक वर्षों में ही पाकिस्तान में जनतंत्र का अंत हो गया और तब से अब तक छोटे-छोटे अपवादस्वरूप अंतरालों को छोड़ बहुधा फौजी तानाशाही ही देखने को मिली है। परजीवी अर्थव्यवस्था के कारण पाकिस्तान के शासक वर्ग को कभी भी यह आवश्यकता महसूस नहीं हुई कि वह पड़ोसी भारत के साथ आर्थिक सहकार की किसी योजना पर विचार करे। यदि आर्थिक विश्लेषण किया जाए तो यही सिद्ध होता है कि पाकिस्तान अपनी ज़रूरत की चीज़ें भारत से आयात करे और भारत में खरीदी जाने वाली वस्तुओं का बेरोक-टोक निर्यात करे, क्योंकि यह दोनों ही राज्यों के लिये लाभप्रद प्रक्रिया है। पाकिस्तान दूर-दराज़ के देशों कोरिया, जापान, ब्रिटेन एवं फ्राँस के साथ आर्थिक लेन-देन को खर्चीला होने के बावजूद सहर्ष स्वीकार करता रहा है, लेकिन भारत के साथ सहयोग को वह अपमानजनक, आत्मसमर्पण या अपनी विवशता ही मानता है।

दक्षिण एशिया एवं सार्क *(South Asia and SAARC)*

सार्क की स्थापना की पहल बांग्लादेश के तत्कालीन राष्ट्रपति ज़िया-उर-रहमान ने की थी। बांग्लादेशी राष्ट्रपति ने 1977-80 की अवधि में दक्षिण एशिया के देशों और लोगों से आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग के लिये सार्क का प्रस्ताव किया था। नवंबर 1980 में बांग्लादेश द्वारा एक कार्य लेख (Working Paper) तैयार किया गया। इसका शीर्षक था- 'दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग' (Regional Co-operation in South Asia)। इसे संबंधित देशों के पास विचारार्थ भेजा गया। इस लेख में क्षेत्रीय सहयोग के विशाल संसाधनों तथा संभावनाओं की ओर संकेत किया गया और इस सहयोग से प्राप्त होने वाले संभावित लाभों की चर्चा की गई। इस लेख पर दक्षिण एशियाई देशों की सरकारों ने गंभीर चिंतन किया और यह तय हुआ कि सार्क सक्रिय रूप से इस बात के लिये प्रयत्नशील रहेगा कि सभी राज्यों की संप्रभुता, समानता एवं प्रादेशिक अखंडता के आधार पर सुरक्षा तथा आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप की रणनीति पर चलते हुए क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ावा दिया जाए। इस संदर्भ में यह अपेक्षा की गई कि क्षेत्रीय सहयोग, विशेषकर आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में, विस्तृत करने पर बल दिया जाए। आरंभ में क्षेत्रीय सहयोग के जिन ग्यारह मुद्दों पर आम सहमति बनी वे निम्नवत् हैं-

1. दूरसंचार (Telecommunication)
2. मौसम विज्ञान (Meteorology)
3. परिवहन (Transportation)
4. पर्यटन (Tourism)
5. जहाज़रानी (Shipping)
6. कृषि अनुसंधान (Agricultural Research)
7. संयुक्त परियोजनाएँ (Joint Projects)
8. बाज़ार प्रोत्साहन (Market Incentives)
9. वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग
   (Scientific and Technological Co-operation)
10. शैक्षिक सहयोग (Educational Co-operation)
11. सांस्कृतिक सहयोग (Cultural Co-operation)

आरंभ में दक्षिण एशिया के दोनों प्रमुख देश, भारत तथा पाकिस्तान, ऐसे किसी संगठन के प्रति अधिक उत्साहित नहीं थे। वास्तव में इस संबंध में पाकिस्तान दुविधा की स्थिति में था परंतु ज़िया-उर-रहमान के सुझाव को श्रीलंका, नेपाल, भूटान एवं मालदीव ने सहर्ष स्वीकार किया। पाकिस्तान का मानना था कि जिस संगठन में भारत का वर्चस्व होगा वह पाकिस्तान के हित में हो ही नहीं सकता। उसका मानना था कि भारत स्वाभाविक रूप से अपने क्षेत्रफल, सैन्य बल, अर्थव्यवस्था, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आदि कारणों से किसी भी क्षेत्रीय व्यवस्था में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेगा। उल्लेखनीय है कि भारत ऐसी किसी धारणा का समर्थन नहीं करना चाहता था, जिससे उसके 'बड़े भाई की भूमिका' लांछित होती हो।

दूसरी ओर भारत को स्वयं भी यह शंका थी कि क्षेत्रीय सहयोग के सिद्धांत को स्वीकार करने से उसकी विश्वसनीय द्विपक्षवाद की नीति का महत्त्व कम हो सकता था। वास्तव में द्विपक्षवाद क्षेत्रीय सहयोग के सिद्धांत से मेल ही नहीं खाता है। परंतु शीघ्र ही दक्षिण एशियाई क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सहयोग की इच्छा के बलवती होने से भारत और पाकिस्तान दोनों का प्रारंभिक संकोच समाप्त हो गया।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) स्थापित करने का प्रारंभिक कार्य जुलाई 1984 में हुई विदेश मंत्रियों की माले बैठक और थिंपू की मई 1985 की बैठक में पूरा कर लिया गया। यह निश्चित किया गया कि सात दक्षिण एशियाई देशों का शिखर सम्मेलन ढाका में 7-8 दिसंबर, 1985 को आयोजित किया जाएगा। वर्ष 1985 में बांग्लादेश की राजधानी ढाका में दक्षिण एशिया के सात देशों भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, भूटान, बांग्लादेश, मालदीव व नेपाल ने भाग लिया। इसी सम्मेलन में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संगठन की स्थापना की गई। बांग्लादेश के राष्ट्रपति एच.एम. इरशाद की अध्यक्षता में ढाका शिखर सम्मेलन आयोजित हुआ।

सम्मेलन में निश्चित किये जाने के साथ-ही-साथ चार्टर में भी यह प्रावधान किया गया कि सार्क के मंच पर द्विपक्षीय मामले या विवाद विचार के लिये नहीं उठाए जाएंगे। यह भी निर्णय लिया गया कि सार्क का एक स्थायी सचिवालय स्थापित किया जाएगा। इसकी विस्तृत रूपरेखा तैयार करने का कार्य विदेश मंत्रियों को सौंपा गया। सचिवालय अस्थायी रूप से ढाका में स्थापित किया गया। आगे चलकर विदेश मंत्रियों ने स्थायी सचिवालय स्थापित किया जो वर्तमान में काठमांडू में कार्यरत है।

दक्षिण एशिया में सबसे बड़ा देश होने के कारण भारत की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। भारत इस क्षेत्र में शांति एवं स्थायित्व बनाए रखने हेतु प्रतिबद्ध है। इस क्षेत्र के विकास के लिये भारत के द्वारा निरन्तर प्रयास किये जाते रहे हैं। भारत ने दक्षिण एशिया विश्वविद्यालय, दक्षिण एशियाई विकास कोष, दक्षिण एशिया-उपग्रह, दक्षिण एशिया मुक्त व्यापार क्षेत्र एवं सार्क स्टार्ट-अप एक्सचेंज प्रोग्राम को समर्थन एवं प्रोत्साहन देकर अपनी भूमिका को और सुदृढ़ करने की कोशिश की है। इसके साथ-ही-साथ नीली अर्थव्यवस्था के विकास, समुद्री संचार मार्गों की सुरक्षा इत्यादि विषयों पर भी दक्षिण एशियाई देशों के सहयोग के साथ समग्र क्षेत्रीय विकास पर ज़ोर दिया जा रहा है। पाकिस्तान की असहयोग की प्रवृत्ति ने कुछ सीमा तक इन विकास योजनाओं में बाधा अवश्य उत्पन्न की है, किन्तु अन्य सभी दक्षिण एशियाई देशों ने साथ मिलकर कार्य करने की प्रतिबद्धता जाहिर की है।

8.2 दक्षिण-पूर्व एशिया एवं भारत *(South East Asia and India)*

विश्व राजनीति में 1991 कई मायने में अलग था। शीतयुद्ध अभी समाप्त हुआ था। बर्लिन की दीवार के गिरने और सोवियत संघ के विघटन को विश्व में विचारधारा आधारित संघर्ष का अंत माना गया। विश्व में अमेरिका एकमात्र महाशक्ति बचा था। चीन तेज़ी के साथ विकास कर रहा था। अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में आए इन बदलावों के अनुसार देश अपने-आपको ढालने लगे। इसी समय दक्षिण-एशियाई देश भी संरचनात्मक परिवर्तन के दौर से गुज़र रहे थे। वे बाहरी शक्तियों से जुड़ के लिये सक्रिय एवं बाह्योन्मुखी नीति (Active and Outward Looking Policy) अपना रहे थे। इन परिवर्तित परिस्थितियो क सामना करते हुए 1991 में भारतीय प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने बुलंद एवं स्पष्ट निर्णय लिया जिसे कूटनीति में 'पू की ओर देखो' नीति कहा गया। यह भारतीय विदेश नीति के लिये एक महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम माना जाता है। यद्यपि पूर्व क ओर देखो नीति के अंतर्गत व्यापक रूप से एशिया प्रशांत क्षेत्र को शामिल किया जाता है लेकिन शुरुआती रूप से भारत इस नीति के अंतर्गत दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों को ही शामिल किया था। आसियान का गठन 1967 में किया गया थ इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपींस, सिंगापुर, थाईलैंड, ब्रुनेई, वियतनाम, लाओस, म्याँमार तथा कंबोडिया इसके सदस्य शीतयुद्ध के दौरान आसियान द्वारा भारत को खतरे के रूप में देखा जाता था क्योंकि भारत सोवियत संघ के साथ गहराई जुड़ा था तथा एक क्षेत्रीय नौसैन्य शक्ति (Regional Naval Power) बनने के लिये अपनी सैन्य क्षमता का विस्तार करने प्रयास कर रहा था।

इस राजनीतिक परिदृश्य में पूरा एशिया प्रशांत क्षेत्र एक गतिशील आर्थिक क्षेत्र के रूप में उभरा। भारत इस क्षेत्र लाभ उठाने तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में अपने हितों को सुरक्षित करने के लिये प्रतिबद्ध था। आंतरिक कारकों ने भी भ

को नीति संबंधी अलगाव खत्म करने को विवश किया था। 1990 के दशक में भारत स्वयं आर्थिक सुधार कार्यक्रम चला रहा था। इसका प्रमुख कारण भुगतान संतुलन संकट (Balance of Payment Crisis) था, जिसने भारत को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से 1.8 बिलियन डॉलर का ऋण लेने पर विवश किया था। भारत की इस आर्थिक दुर्दशा का प्रमुख कारण वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण में असफलता माना गया। भारत ने तुरंत व्यापक सुधार कार्यक्रम आरंभ किया। ठीक इसी समय दक्षिण-पूर्व एशिया के देश भी अपनी अर्थव्यवस्था को मज़बूत बनाने के लिये नए भागीदारों की खोज कर रहे थे। उनका इरादा आसियान संरचना के अंतर्गत आर्थिक एकीकरण को ठोस रूप देना था। इसके अलावा दो अन्य कारण भी थे जिनके कारण भारत-आसियान के बीच संबंधों को बढ़ावा मिला। पहला, आर्थिक मजबूरियों के कारण भारत द्वारा नौसैन्य शक्ति के आधुनिकीकरण में कटौती करना तथा दूसरा, संयुक्त राष्ट्र संघ के नेतृत्व में कंबोडिया में शांति स्थापना का प्रयास करना।

भारत-आसियान के बीच संबंध स्थापित होने से पहले मलेशिया एवं थाईलैंड ने भारत की नौसैन्य आधुनिकीकरण के प्रति चिंता ज़ाहिर की थी। स्वयं थाईलैंड का सैन्य आधुनिकीकरण कुछ हद तक भारत के डर पर आधारित था। लेकिन घटनाक्रमों ने स्थिति में बदलाव लाने का कार्य किया। 1993 में भारत के प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने भारत एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच विश्वास का वातावरण बनाने के उद्देश्य से थाईलैंड की आधिकारिक यात्रा की। भारत के दृष्टिकोण से पूर्व की ओर देखो नीति ने न केवल दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ आर्थिक एकीकरण का मौका उपलब्ध कराया बल्कि भारत की एक सैन्य शक्ति के रूप में पहचान एवं इससे संबंधित दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में व्याप्त भय को भी कम किया।

हालाँकि, भारत ने पूर्व की ओर देखो नीति का सृजन असंगठित रूप से किया था लेकिन दक्षिण-पूर्व एशिया में अपने हितों की प्राप्ति के लिये भारत इसका निरंतर पालन कर रहा है। भारत यह मानकर चल रहा है कि आने वाले दिनों में आर्थिक एवं अन्य हितों की प्राप्ति दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ एकीकरण के माध्यम से ही की जा सकती है। ज़्यादातर विश्लेषक यह मानते हैं कि यह क्षेत्र विश्व अर्थव्यवस्था का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बना रहेगा। इस कारण अधिकतम लाभ प्राप्ति के लिये भारत दक्षिण-पूर्व एशिया में अपने नेटवर्क का अधिकतम विकास करना चाहता है। आगे चलकर पूर्व की ओर देखो नीति बहुआयामी एवं बहुस्तरीय बन गई। भारत ने दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ सामरिक संपर्क विकसित करने का प्रयास किया। इसके अंतर्गत भारत ने आसियान के अलग-अलग देशों के साथ राजनीतिक संपर्क विकसित करना शुरू किया। भारत एशिया-प्रशांत क्षेत्र में आसियान के साथ राजनीतिक एवं सुरक्षा संबंध मज़बूत करना चाहता है। आगे चलकर दोनों पक्षों की ओर से राजनीतिक यात्रा, संयुक्त सैन्य अभ्यास तथा अन्य गैर-परंपरागत सुरक्षा सहयोग किये जाने लगे। वास्तव में नातेदारी संबंधों तथा सांस्कृतिक संबंधों के कारण इस क्षेत्र से जुड़ने में भारत को आसानी हुई। ज़्यादातर दक्षिण-पूर्व एशियाई देश कभी-न-कभी कुछ हद तक भारतीय सभ्यता के प्रभाव में रह चुके हैं। व्यापार के अलावा भारत बौद्ध एवं हिन्दू धर्म, संस्कृत भाषा, साहित्य, कला, स्थापत्य, राजनीतिक एवं सामाजिक संरचना के अलावा खानपान के माध्यम से भी इस क्षेत्र से जुड़ा था। हालाँकि, राज्य स्तर पर राजनीतिक नेतृत्व को एक-दूसरे के साथ जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है और दोनों क्षेत्रों के लोगों के बीच संबंधों को बढ़ावा देने के लिये सांस्कृतिक संबंधों को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। मनोवैज्ञानिक रूप से सांस्कृतिक संबंध इस बात का अहसास दिलाते हैं कि भले ही शीतयुद्ध के दौरान दोनों क्षेत्रों के बीच संपर्क स्थगित रहा हो लेकिन भारत एवं दक्षिण-पूर्व एशिया कभी भी एक-दूसरे से बहुत दूर नहीं रहे हैं।

दक्षिण-पूर्वी एशिया में भारत की पूर्व की ओर देखो नीति
(India's Look East Policy in South East Asia)

निश्चित तौर पर पूर्व की ओर देखो नीति ने संतोषजनक रूप से अपने उद्देश्य की प्राप्ति की है। आज भी भारत और दक्षिण-पूर्व एशियाई देश अपने संबंधों को प्रगाढ़ बनाने का प्रयास कर रहे हैं। भारत अब आसियान का सामरिक भागीदार बन गया है। भारत एवं आसियान आर्थिक एवं सुरक्षा संबंधी मुद्दों पर बातचीत कर रहे हैं। यह बातचीत पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन (East Asia Summit – EAS) के मंच पर होती है, जिसके दोनों सदस्य हैं। लेकिन भारत ने अब तक इस क्षेत्र में वैसी भूमिका का निर्वहन नहीं किया है जो उसकी क्षेत्रीय शक्ति के रूप में पहचान से मेल खाती हो। हालाँकि, भारत इस क्षेत्र के सुरक्षा परिदृश्य में रुचि लेने लगा है लेकिन उसके पड़ोसी पाकिस्तान के साथ दशकों पुरानी रंजिश तथा दक्षिण-एशिया

क्षेत्र में आतंकवाद जैसी समस्या के कारण उसका ध्यान एवं प्रयास बदल या विचलित हो जाता है। भारत का दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के साथ कोई प्रत्यक्ष संघर्ष नहीं है जैसा कि चीन के मामले में है।

पूर्व की ओर देखो नीति के कार्यान्वयन के बाद मित्रता का भाव प्रदर्शित करते हुए आसियान ने भारत को 1992 में क्षेत्रीय वार्ता भागीदार (Sectoral Dialogue Partner) का दर्जा दिया था। इससे भारत आसियान के साथ बाज़ार, निवेश, पर्यटन, विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में सहयोग करने के लिये प्रोत्साहित हुआ। वर्ष 1995 के आसियान के बैंकाक शिखर सम्मेलन के दौरान आसियान ने भारत को पूर्ण वार्ता भागीदार (Full Dialogue Partner) बनने के लिये आमंत्रित किया। एक साल बाद भारत को आसियान क्षेत्रीय मंच (ASEAN Regional Forum) में शामिल कर लिया। 2002 से भारत एवं आसियान वार्षिक शिखर सम्मेलन (Annual Summit) का आयोजन करने लगे। वार्षिक शिखर सम्मेलन ने दोनों पक्षों के बीच संबंध सुदृढ़ करने में आधार स्तंभ का कार्य किया। दोनों के बीच आर्थिक संबंध तेज़ी से बढ़े, लेकिन तीव्र आर्थिक वृद्धि का तात्पर्य यह नहीं था कि द्विपक्षीय संबंधों में कोई समस्या न हो। उदाहरण के लिये भारत में आर्थिक उदारीकरण के मार्ग में राजनीतिक बाधाएँ खड़ी हुईं। परिणामस्वरूप भारत-आसियान व्यापार संबंध प्रभावित हुए।

लेकिन नई सहस्राब्दी भारत-आसियान संबंधों के लिये महत्त्वपूर्ण साबित हुई। इसी समय क्षेत्रीय शक्ति संतुलन में भी बदलाव आया। चीन आर्थिक एवं सैन्य शक्ति के रूप में निरंतर आगे बढ़ रहा है। इसी समय अमेरिका का ध्यान 9/11 की घटना के संदर्भ में इस क्षेत्र से हटने लगा। जार्ज बुश प्रशासन ने अपनी ऊर्जा का प्रयोग आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई में किया। जिससे आसियान-अमेरिका संबंधों में परिवर्तन आया। इस क्षेत्र में अमेरिका की घटती उपस्थिति के दौरान चीन ने आसियान के साथ अपने संबंध सुदृढ़ करना शुरू किया, लेकिन चीन के बढ़ते प्रभुत्व के कारण आसियान के सदस्य देशों को इस बात का डर भी हुआ कि कहीं चीन क्षेत्रीय शक्ति संतुलन पर हावी न हो जाए। इसी को ध्यान में रखते हुए आसियान अपने पश्चिम स्थित भारत की ओर मुड़ा। इसने भारत से क्षेत्रीय एकीकरण में सक्रियता से शामिल होने का आग्रह किया ताकि बहुध्रुवीय व्यवस्था को बनाए रखा जा सके। अपवादस्वरूप मलेशिया को छोड़कर लगभग सभी दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों ने पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन में भारत की भागीदारी का समर्थन किया। दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों ने चीन के बढ़ते प्रभुत्व को रोकने में भारत को उपयोगी पाया। हालाँकि, चीन एवं भारत इस बात को लेकर सतर्क थे कि उनके कारण इस क्षेत्र में प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा नहीं मिलना चाहिये। वास्तव में दोनों देशों के नेताओं ने एक-दूसरे के संदर्भ में प्रतिस्पर्द्धा, प्रतिद्वंद्विता या शत्रुता जैसे शब्दों के प्रयोग से परहेज ही किया। भारतीय नीति-निर्माता दक्षिण-पूर्व एशिया में अपनी सीमाओं से वाकिफ थे।

1990 के दशक एवं नई सहस्राब्दी में भारतीय नीति-निर्माताओं ने विश्वास बहाली एवं उस पुरानी सोच को बदलने का कार्य किया जिसके अंतर्गत भारत को एक खतरा समझा जाता था। भारत ने यह स्पष्ट कर दिया कि दक्षिण-पूर्व एशिया में वह प्रभुत्व स्थापित नहीं करना चाहता है तथा आसियान की उस भावना की कद्र करता है जिसके अंतर्गत वह भारत के साथ दीर्घकालिक संबंध स्थापित करना चाहता है।

इस संगठन के साथ अपने संबंधों को गंभीरता से लेते हुए भारत ने 2003 में मित्रता एवं सहयोग संधि (Treaty of Amity and Cooperation-TAC) की तथा 2005 में पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन का सदस्य बना। मई 2009 में भारत-आसियान के बीच मुक्त व्यापार समझौता हुआ जो 2010 से प्रभावी हुआ। भारत एवं आसियान दोनों विश्व अर्थव्यवस्था के महत्त्वपूर्ण बाज़ार हैं। भारत-आसियान मुक्त व्यापार समझौता होते समय 1.8 बिलियन लोगों का संयुक्त बाज़ार तथा 2.75 ट्रिलियन डॉलर का संयुक्त जीडीपी था। 1993 में भारत-आसियान द्विपक्षीय व्यापार 2.9 बिलियन डॉलर का था जो 2012 में 80 बिलियन डॉलर हो गया। भारत के कुल वैश्विक व्यापार का 10 प्रतिशत आसियान देशों के साथ होता है तथा यह यूरोपीय संघ, अमेरिका एवं चीन के बाद भारत का चौथा सबसे बड़ा व्यापार भागीदार बन गया है। आसियान देशों के लिये भारत से निर्यात में ऑयल, रत्न और आभूषण, माँस, सूती धागा, मशीनरी, चावल, औषधि और रसायन आदि शामिल हैं। आसियान से हमारे आयात में मुख्यत: कृत्रिम रेजिन, प्लास्टिक सामग्री, प्राकृतिक रबड़, काष्ठ और काष्ठ उत्पाद, इलेक्ट्रॉनिक सामग्री, कार्बनिक रसायन, खाद्य तेल और उर्वरक आदि शामिल हैं। उससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत आसियान के साथ आर्थिक अंत:क्रिया को अपने उत्तर-पूर्वी राज्यों के विकास के एक अवसर के रूप में देखता है। दूसरी ओर आसियान की सोच है कि कंबोडिया, लाओस, म्याँमार एवं वियतनाम जैसे देशों के साथ भारत के व्यापार से इन देशों को मदद मिलेगी तथा उनका विकास होगा जिससे कि आसियान के अंदर व्यापार एवं एकता को बढ़ावा मिलेगा। हालाँकि, भारत-आसियान मुक्त व्यापार

समझौता होते समय कुछ परेशानियाँ सामने आई थीं। भारत में संरचनात्मक आर्थिक सुधार के अभाव में आर्थिक सहयोग प्रभावित हो सकता है। भारत के व्यावसायिक समूह को इस बात का भी डर है कि दक्षिण-पूर्व एशिया से आने वाली सस्ती सामग्री के कारण भारत के घरेलू उद्योग जैसे- चाय, मसाले, नारियल तेल तथा रबड़ उद्योग प्रभावित हो सकते हैं।

भारत आसियान द्वारा शुरू की गई अखिल भारत-प्रशांत आर्थिक सहयोग (Pan-Indo-Pacific Economic Co-operation) प्रक्रिया में शामिल है। इसमें आसियान के दस सदस्यों के अलावा छह वार्ता भागीदार ऑस्ट्रेलिया, चीन, भारत, जापान, दक्षिण-कोरिया एवं न्यूज़ीलैंड शामिल हैं। इसे आधिकारिक रूप से क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक सहभागिता (Regional Comprehensive Economic Partnership) कहा जाएगा। क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक सहभागिता से भारत को एक व्यापक आर्थिक क्षेत्र से जुड़ने का मौका मिलेगा। भारत ऐसी ही व्यापक आर्थिक एकीकरण प्रक्रिया की तलाश में है। भारत की ऐसी तलाश 1990 के दशक में एशिया-प्रशांत आर्थिक सहभागिता (Asia-Pacific Economic Cooperation) की सदस्यता का अनुरोध अस्वीकार किये जाने के बाद से ही जारी है।

ऐसा नहीं है कि भारत और आसियान केवल आर्थिक क्षेत्र में ही सहयोग कर रहे हैं बल्कि वे सुरक्षा से जुड़े क्षेत्रों जैसे आतंकवाद, समुद्री डकैती, नशीले पदार्थों की बिक्री रोकने तथा समुद्री मार्गों की सुरक्षा के लिये भी प्रयासरत हैं। ये कुछ ऐसी समस्याएँ हैं जिनका भारत या आसियान अकेले समाधान नहीं कर सकते। 2003 में भारत एवं आसियान ने आसूचना भागीदारी के साथ अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद को रोकने संबंधी संयुक्त घोषणा-पत्र को अंतिम रूप दिया। भारत एवं आसियान दोनों आतंकवादी कार्रवाइयों से पीड़ित हैं। यदि भारत के कई शहरों में आतंकवादी हमले हुए हैं तो आसियान के अंतर्गत बाली (2002) तथा जकार्ता (2009) में भी ऐसे हमले हुए हैं।

प्राकृतिक आपदा एवं महामारी जैसे गैर-परंपरागत क्षेत्रों में भी भारत-आसियान के बीच सहयोग हो रहा है। उदाहरण के लिये दोनों पक्षों ने 2007 में जलवायु परिवर्तन तथा हरित कोश संबंधी भारत-आसियान नेटवर्क (India-Asean Network on Climate Change and the Green Fund) की स्थापना की थी, जिससे कि प्राकृतिक आपदा के समय एक-दूसरे की मदद कर सकें। आज आसियान के सदस्य देश भारत से मज़बूत संबंध बनाने के पक्षधर हैं जबकि एक समय भारत आसियान के सदस्य देशों से संबंध सुदृढ़ बनाने का इच्छुक था। दक्षिण-पूर्व एशिया के कुछ देश अन्य देशों के मुकाबले भारत जैसी उभरती शक्ति के साथ संबंध सुदृढ़ करने को ज़्यादा उत्सुक थे। उदाहरण के लिये भारत की पूर्व की ओर देखो नीति के प्रत्युत्तर में थाईलैंड ने 1996 में स्वयं 'पश्चिम की ओर देखो नीति' की घोषणा की थी। वह मुख्यतया इस उपमहाद्वीप के भारत जैसे आर्थिक रूप से सशक्त देशों के साथ जुड़ना चाहता था। इसका नतीजा आगे चलकर इस क्षेत्र के देशों को एक-दूसरे से जुड़ने में मददगार बिम्सटेक (Bay of Bengal Initiative for Multi Sectoral Technical and Economic Cooperation-BIMSTEC) तथा मेकांग-गंगा सहयोग (Mekong-Ganga Cooperation-MGC) जैसे क्षेत्रीय तंत्र के उदय के रूप में हुआ। थाईलैंड की पश्चिम की ओर देखो नीति की सफलता तब स्पष्ट देखी गई जब 2003 में भारत एवं थाईलैंड के बीच मुक्त व्यापार समझौता हुआ। यह आसियान के किसी सदस्य देश के साथ भारत का पहला मुक्त व्यापार समझौता था। थाईलैंड के तत्कालीन प्रधानमंत्री थकसिन शिनावात्रा (Thaksin Shinawatra) ने भारत के साथ सहयोग को विस्तार दिया, जिसमें आतंकवाद एवं नशीले पदार्थों की तस्करी तथा संयुक्त समुद्री गश्ती जैसे विषय शामिल किये गए। आसियान के अन्य सदस्य देश भी थाईलैंड का अनुसरण करने लगे। उदाहरण के लिये सिंगापुर ने 2005 में भारत के साथ व्यापक आर्थिक सहभागिता समझौता की आधारशिला रखी। इसके अलावा भारत-सिंगापुर सूचना तकनीकी, बैंकिंग, औषध, जैव-तकनीकी तथा दूरसंचार क्षेत्र में सहयोग कर रहे हैं। इसके अलावा दोनों देशों के रक्षा बलों एवं नौसेनाओं के बीच वार्षिक संयुक्त अभ्यास किया जा रहा है। भारत-सिंगापुर के बीच वार्षिक नौ सैन्य प्रशिक्षण भी किया जाता है जिसे सिम्बेक्स (Simbex) कहा जाता है। इसी तरह भारत-फिलीपींस द्विपक्षीय संबंध भी सुधरते जा रहे हैं। पिछले एक दशक (2003-2012) में भारत-फिलीपींस व्यापार में तीन गुणा बढ़ोतरी हुई है। भारत-फिलीपींस के बीच कई समझौते भी किये गए हैं जिनमें दोहरे कराधान का परिहार एवं राजकोषीय अपवंचन रोकने (Avoidance of Double Taxation and Prevention of Fiscal Evasion) तथा निवेश संरक्षण एवं उन्नयन संबंधित समझौता शामिल हैं। इस क्षेत्र में सहयोग को बढ़ावा देने के लिये व्यापार एवं आर्थिक संबंधों से संबंधित भारत-फिलीपींस संयुक्त कार्यकारी आयोग की नियमित बैठक होती है। इसके अलावा दोनों देशों के बीच वार्षिक विदेश नीति एवं सुरक्षा संबंधी वार्ता का आयोजन किया जाता है।

इसी तरह इंडोनेशिया के साथ ऐतिहासिक संबंध वर्तमान द्विपक्षीय संबंधों को आगे बढ़ाने में मददगार साबित हुआ है। जब भारत गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन कर रहा था उस समय भारत ने डच उपनिवेशी शासन के विरुद्ध सुकर्णो के नेतृत्व में चले सशस्त्र संघर्ष का समर्थन किया था। जब इंडोनेशिया स्वतंत्र हुआ तो भारत ने उसके रक्षा बलों को सैन्य प्रशिक्षण दिया। लगभग आधी शताब्दी के बाद भारत-इंडोनेशिया के बीच एक बार फिर संबंधों में सुधार देखा जा रहा है। दोनों देशों ने 2005 में सामरिक सहभागिता पर हस्ताक्षर किये हैं। भारत एवं इंडोनेशिया आज सामरिक महत्त्व के मुद्दों जैसे समुद्री सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा तथा आतंकवाद रोकने जैसे क्षेत्रों में मिलकर कार्य कर रहे हैं। आर्थिक रूप से इंडोनेशिया, आसियान के अंतर्गत भारत का दूसरा सबसे बड़ा निर्यात बाज़ार है जबकि पहला सिंगापुर है।

भारत आसियान के अन्य सदस्य देशों के साथ भी संबंध सुधारने का प्रयास कर रहा है। भारत एवं ब्रुनेई ने आर्थिक अंतर्क्रिया को बढ़ावा देने के लिये एक संयुक्त व्यापार समिति का गठन किया है। इसी तरह भारत ने लाओस के साथ कृषि क्षेत्र में सहयोग करने के लिये 2004 में एक समझौता किया था। इसी तरह भारत ने कंबोडिया के साथ व्यापारिक, आर्थिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग के लिये एक संयुक्त आयोग का गठन किया है। अक्टूबर 2010 में भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह मलेशिया और वियतनाम की यात्रा पर गए थे। उनकी इस यात्रा के दौरान भारत-मलेशिया मुक्त व्यापार समझौता के अंतिम प्रारूप को स्वीकृति दी गई थी, जो 1 जुलाई, 2011 से प्रभावी हुआ। इससे भारत एवं मलेशिया दोनों की चीन एवं अमेरिका जैसे देशों पर आर्थिक निर्भरता में कमी आई है। इसी तरह वियतनाम में दोनों देशों के नेताओं ने व्यापार, निवेश एवं कृषि उत्पादों से संबंधित संयुक्त आयोग का गठन किया था। लेकिन भारत-वियतनाम के बीच रक्षा संबंधों को मज़बूती देना सबसे महत्त्वपूर्ण कदम था।

भारतीय विदेश मंत्री ने अगस्त 2014 में वियतनाम यात्रा के दौरान वियतनाम के साथ तेल, रक्षा तथा व्यापार क्षेत्र में संबंधों को मज़बूत बनाने की भारत की इच्छा से अवगत कराया। वियतनाम का मानना है कि 21वीं सदी में मज़बूत आसियान-भारत रणनीति सहयोग के निर्माण का समय है। भारत की रणनीतिक भागीदारी को इस बात से बल मिलता है कि उसकी पूर्व की ओर देखो नीति और आसियान देशों की अपने क्षेत्र से बाहर की ओर देखने की नीति मेल खाती है। भारत-आसियान थिंक टैंक के तीसरे दौर की वार्ता के दौरान वियतनाम के नेतृत्व ने स्पष्ट किया कि वियतनाम सहित सभी आसियान देश चाहते हैं कि दक्षिण चीन सागर में स्वतंत्र नौवहन सहित सभी प्रोटोकॉल संधियों का पालन हो और भारत इसमें अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करे।

भारत-आसियान संबंधों को बढ़ावा देने के क्रम में भारत एवं आसियान नवंबर 2012 में एक नए भारत-म्याँमार-लाओस-वियतनाम-कंबोडिया राजमार्ग के निर्माण एवं भारत-म्याँमार-थाईलैंड त्रिपक्षीय राजमार्ग का विस्तार लाओस एवं कंबोडिया तक करने पर सहमत हुए हैं। आसियान की ओर से इस बात को समझा जा रहा है कि 21वीं शताब्दी के दूसरे दशक में भारत के ऊपर ज़्यादा ज़िम्मेदारियाँ हैं तथा दक्षिण-एशिया मामलों में उसे बड़ी भूमिका निभानी है। फिलीपींस एवं वियतनाम जैसे देश दक्षिण चीन सागर जैसे विवादों में भारत की प्रत्यक्ष भागीदारी की अपील कर रहे हैं, वहीं कंबोडिया ने भारत से वित्तीय मदद की अपील की है।

अगस्त 2014 में म्याँमार की राजधानी न्यापीता में पूर्वी-एशियाई देशों के विदेश मंत्रिस्तरीय सम्मेलन तथा आसियान के क्षेत्रीय फोरम की बैठक हुई। इस सम्मेलन में आसियान ने भारत के साथ अपने संबंधों को बेहद महत्त्वपूर्ण बताते हुए उसके साथ कृषि, ऊर्जा, सड़क एवं समुद्री संपर्क और सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने की इच्छा व्यक्त की। आसियान विदेश मंत्रियों के सम्मेलन के बाद जारी संयुक्त वक्तव्य में भारत-आसियान शांति, प्रगति व साझी समृद्धि व भागीदारी की 2010-2015 कार्ययोजना के कार्यान्वयन पर संतोष जताया गया। संयुक्त वक्तव्य में आसियान समुदाय की खाद्य एवं ऊर्जा सुरक्षा की दीर्घकालिक आवश्यकताओं को पूरा करने के उद्देश्य से कृषि एवं ऊर्जा क्षेत्र में भारत-आसियान सहयोग को और मज़बूत बनाने पर बल दिया गया।

आसियान ने क्षेत्रीय यातायात संपर्क के मास्टर प्लान के क्रियान्वयन में भारत के सहयोग की सराहना करते हुए कहा कि क्षेत्रीय अखण्डता एवं संपर्क को बढ़ाने के लिये यह सहयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है। आसियान देशों ने भारत-म्याँमार-थाईलैंड त्रिपक्षीय अंतर्राष्ट्रीय राजमार्ग को कंबोडिया और लाओस तक बढ़ाने, वियतनाम तक नया राजमार्ग बनाने तथा आसियान-भारत हवाई यातायात समझौते के कार्यान्वयन में तेज़ी लाने के लिये भारत के सहयोग की अपेक्षा जताई।

नवंबर 2014 में म्याँमार की राजधानी न्यापीता में भारत-आसियान और पूर्वी-एशिया शिखर बैठक का आयोजन हुआ। भारत ने 2016 में शुरू होने वाली आसियान-भारत पंचवर्षीय योजना में लोगों से लोगों के बीच संपर्क बढ़ाने पर जोर दिया। भारत-म्याँमार और थाईलैंड को जोड़ने वाला 3200 किमी. का राजमार्ग विकसित करने की महत्त्वाकांक्षी योजना निर्माणाधीन है, इसे 2017 तक पूर्ण करने पर जोर दिया गया है।

यदि आसियान के सभी सदस्य देशों के साथ संबंधों का विश्लेषण किया जाए तो यह निष्कर्ष निकलता है कि भारत का म्याँमार के साथ संबंध विवादित रहा है। इसके बावजूद पूर्व की ओर देखो नीति के अंतर्गत म्याँमार के साथ संबंध सुधारने के मामले में प्रगतिशील सोच बनी हुई है। यह माना जाता है कि भारत द्वारा पूर्व की ओर देखो नीति अपनाने के पीछे उसकी एक बड़ी थी- सोच म्याँमार से लगी भारतीय सीमाओं की सुरक्षा तथा म्याँमार में ऊर्जा संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित करना। इसके अलावा दक्षिण-पूर्व एशिया तक सड़क मार्ग एवं संचार संपर्क सुनिश्चित करना तथा भारतीय उपमहाद्वीप में चीन का प्रभाव रोकना भी भारतीय सोच में शामिल था। म्याँमार के सैन्य शासकों के साथ भारत का संबंध उतना अच्छा तो नहीं था लेकिन जैसे-जैसे म्याँमार राजनीतिक सुधार एवं लोकतंत्र के रास्ते पर चल रहा है वैसे-वैसे भारत-म्याँमार संबंध सुदृढ़ होने की आशा है।

दक्षिण-पूर्वी एशिया पर भारत-चीन संबंधों का प्रभाव *(Effects of India-China Relations on South East ASIA)*

जब यह मुद्दा उठा था कि क्या दक्षिण-पूर्व एशिया में भारत और चीन प्रतिस्पर्द्धा कर रहे हैं? तब इस प्रश्न का जवाब तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने यह कहकर दिया था कि भारत एवं चीन के मिलकर कार्य करने की व्यापक संभावनाएँ हैं। प्रधानमंत्री का मानना था कि भारत एवं चीन के विकास एवं महत्त्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने के लिये विश्व में पर्याप्त जगह है। लेकिन राजनीतिक विश्लेपकों का यह मानना है कि यह एक कूटनीतिक भाषा है और यथार्थ में भारत एवं चीन दोनों दक्षिण-पूर्व एशिया में शक्ति राजनीति कर रहे हैं। पिछले कुछ दशकों में क्षेत्रीय वातावरण में बदलाव आया है और इन्हीं बदलावों के साथ दक्षिण-पूर्व एशियाई देश सामंजस्य बैठाने तथा अपनी स्वायत्तता बनाए रखने का प्रयास कर रहे हैं। उदाहरण के लिये पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन (East Asia Summit) के अंतर्गत चीन ने आसियान क्षेत्र के सभी प्रमुख पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारने तथा उनके साथ विवादों का समाधान करने का प्रयास किया है। भारत में कुछ ऐसे भी नीति-निर्माता हैं जो यह सोचते हैं कि भारत चीन के साथ मिलकर कार्य कर सकता है जिससे कि दक्षिण-पूर्व एशिया में स्वस्थ संबंध बनाए रखे जा सकें। दूसरी ओर कुछ भारतीय नीति-निर्माता चीन को अभी भी एक खतरे के रूप में देखते हैं। वैसे भी लम्बे समय से चीन दक्षिण-पूर्व एशिया को अपना प्रभाव क्षेत्र मानता रहा है। अभी भी वह इस क्षेत्र के देशों के साथ नज़दीकी संबंध बनाए रखते हुए अपने प्रभाव क्षेत्र को बनाए रखने का प्रयास कर रहा है। जैसे-जैसे चीन की आर्थिक क्षमता बढ़ रही है, वैसे-वैसे उसकी सैन्य क्षमता का भी विस्तार हो रहा है। दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों का चीन के साथ क्षेत्रीय विवाद (Territorial Disputes) भी है। इन कारणों से दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में चीन को लेकर संदेह भी व्याप्त है। चीन इस संदेह को कम करने के लिये निरंतर प्रयास कर रहा है। वह शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धांत को आगे बढ़ाने तथा आसियान के एकीकरण के प्रयासों में शामिल होने का प्रयास कर रहा है। चीन ने 2002 के नोमपेन्ह के छठे चीन-आसियान शिखर सम्मेलन के दौरान दक्षिण चीन सागर में शांति एवं स्थिरता बनाए रखने के लिये एक आचार संहिता (Code of Conduct) पर भी हस्ताक्षर किये थे। चीन इसके साथ ही आसियान के सदस्य देशों के साथ भी संबंध सुधारने का प्रयास कर रहा है। एक क्षेत्रीय एवं वैश्विक शक्ति के रूप में चीन के बढ़ते प्रभाव को ध्यान में रखकर आसियान के लगभग सभी सदस्य देशों ने भारत के साथ सामरिक भागीदारी हेतु समझौता किया है।

दिसंबर 2012 में भारत ने दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ सामरिक भागीदारी की घोषणा की थी, लेकिन चीन ने इसके बहुत पहले ही भारत को एक प्रतिस्पर्द्धी तथा उसके प्रभाव क्षेत्र के लिये एक संभावित खतरे के रूप में देखना शुरू कर दिया था। उदाहरणस्वरूप अक्टूबर 2010 में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की मलेशिया, वियतनाम तथा जापान यात्रा को चीन के कुछ समाचार पत्रों ने तिरस्कार की दृष्टि से देखा था तथा भारत की पूर्व की ओर देखो नीति को भी गुटनिरपेक्ष नीति की तरह असफल बताया था। इस यात्रा को दक्षिण-पूर्व एशिया में चीन के प्रभाव को संतुलित करने वाला भी बताया गया था। लेकिन चीन के पूर्व प्रधानमंत्री वेन जिआवाओ ने स्वयं माना था कि दक्षिण-पूर्व एशिया में अपने

हितों को सुरक्षित करने के संदर्भ में भारत एवं चीन प्रतिस्पर्द्धा एवं सहयोग के दौर से गुज़र रहे हैं। दोनों देशों को अपनी अतिरिक्त व्यापारिक वस्तुओं को खपाने एवं नए निवेश के लिये दक्षिण-पूर्व एशिया के बाज़ारों की आवश्यकता है। दोनों ही दक्षिण-पूर्व एशिया में नए तेल संसाधनों एवं समुद्री मार्गों तक पहुँचना चाहते हैं। वास्तव में भारत चीन के बीच तीव्र प्रतिस्पर्द्धा थोड़ा आश्चर्यजनक तो है लेकिन इससे दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों को लाभ ही होगा। इससे इस क्षेत्र में शक्ति संतुलन को भी मज़बूती मिल सकती है। चीन की एक अन्य चिंता दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र में उसके प्रभाव को कम करने के लिये भारत एवं अमेरिका का एक साथ मिलकर काम करना भी है। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की नवंबर 2010 की भारत यात्रा को चीन द्वारा एशियाई मामलों में भारत-अमेरिका द्वारा समन्वय बैठाने के प्रयास के रूप में देखा गया था। लेकिन भारत अमेरिका के साथ नज़दीकी संबंध बनाते हुए भी अपनी स्वतंत्र विदेश नीति बनाए रखना चाहता है। यद्यपि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि दक्षिण-पूर्व एशिया में सर्वोच्चता बनाए रखने की अमेरिका की अपनी सामरिक योजना है। इसे अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की नवंबर 2009 की चीन यात्रा के दौरान स्पष्ट तौर पर देखा गया था। उनकी इस चीन यात्रा के दौरान संयुक्त बयान जारी किया गया था जिसमें चीन से दक्षिण-एशिया मामलों में अपनी भूमिका बढ़ाने की अपेक्षा की गई थी। वास्तव में दक्षिण-पूर्व एशिया के मामलों में चीन-भारत का संबंध हमेशा प्रतिस्पर्द्धी नहीं है लेकिन ऐसा हो सकता है कि कुछ मामलों में प्रतिस्पर्द्धा तथा कुछ मामलों में सहयोग हो, जैसे प्राकृतिक आपदा एवं महामारी से बचाव एवं पुनर्वास तथा आतंकवाद के बढ़ते खतरे को कम करने जैसे मामलों में भारत-चीन सहयोग कर सकते हैं।

वर्तमान वैश्विक राजनीति में आसियान केवल आर्थिक एकीकरण ही नहीं चाहता बल्कि एक वैश्विक शक्ति केंद्र के रूप में भी कार्य करना चाहता है। भारत की पूर्व की ओर देखो नीति अभी तक अपेक्षित परिणाम नहीं दे पाई है। चीन यह नहीं चाहता कि इस क्षेत्र में भारत की मज़बूत उपस्थिति हो। चीन भारत एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के सांस्कृतिक संपर्कों से पूर्णतः वाकिफ है जो दोनों पक्षों को एक-दूसरे के काफी नज़दीक ला सकते हैं। चीन इस बात से भी वाकिफ है कि भारत एकमात्र देश है जो एशिया में उसके उभार एवं प्रभुत्व को चुनौती दे सकता है। इस कारण चीन भारत को ज़बरदस्त दबाव में रखना चाहता है। पिछले कुछ वर्षों से भारत की आर्थिक संवृद्धि एवं राजनीतिक स्थिरता देखकर चीन चकित है और वह भारत को गंभीरता से लेने पर बाध्य हुआ है।

8.3 पश्चिम एशिया एवं भारत *(West Asia and India)*

पश्चिम एशिया अथवा मध्य-पूर्व को प्रायः भू-राजनीतिक गतिविधियों के केन्द्र के रूप में देखा गया है, जिससे पिछले कुछ दशकों में चरमपंथ और आतंकवाद इस कदर जुड़ गया कि अब इसे एक अशांत और हिंसक क्षेत्र के रूप में देखा जा रहा है। कुछ विश्लेषकों के अनुसार, यह अशांति सामान्य तौर पर तो वाशिंगटन की जटिल रणनीति का नतीजा हो सकती है लेकिन वास्तविकता में इसमें बहुत से कारकों का योगदान है, जिनमें नृजातीयता, धार्मिक उन्माद, वहाँ के शासक वर्ग की महत्त्वाकांक्षाएँ इत्यादि को शामिल किया जा सकता है। चूँकि मध्य-पूर्व में विद्यमान तनावों की जड़ें इतिहास और राजनीति में निहित हैं, इसलिये इन्हें पूरी तरह से समाप्त कर पाना फिलहाल तो मुश्किल प्रतीत होता है। हाँ, वर्तमान समय में कट्टरपंथ/आतंकी ताकतों का जो उभार देखने को मिल रहा है, उस पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है।

पश्चिम एशिया में शांति की जिन आहटों को इस समय महसूस किया जा रहा है, उसके लिये किन्हीं निष्कर्षों तक पहुँचने से पहले पश्चिम एशिया में निहित कारकों एवं महाशक्तियों द्वारा खेले गए 'ग्रेट-गेम्स' पर एक निगाह डालने की ज़रूरत होगी। पश्चिम एशिया की वर्तमान स्थिति के लिये जो कारण उत्तरदायी हैं, उनमें पहला है उसकी वर्तमान संरचना, जिसका निर्माण प्रथम विश्वयुद्ध के अंत में औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा किया गया था। ब्रिटिशों और फ्राँसीसियों ने जिन राष्ट्रों का निर्माण किया वे ऐसे हताश समूह थे, जिन्हें एक राष्ट्र के रूप में शासित होने का कोई अनुभव नहीं था। यही नहीं, इन राष्ट्रों का निर्माण करने से पूर्व कोई व्यवस्थित विचार-विमर्श भी नहीं किया गया था, उदाहरणार्थ- ऑटोमन साम्राज्य के तीन प्रांतों को लेकर इराक को-एक राष्ट्र का रूप दिया गया, जबकि तीनों प्रांतों में ऐसी कोई समानता नहीं थी कि वे एक राष्ट्र का रूप ले सकें। औपनिवेशिक शक्तियों ने प्रायः अल्पसंख्यक गुटों से शासक चुनने की धूर्ततापूर्ण नीति अपनाई ताकि अल्पसंख्यक सत्ता को शासन करने के लिये हमेशा ही बाहर से मदद की ज़रूरत बनी रहे। इसका तात्पर्य यह हुआ कि अल्पसंख्यक शासकों की नियुक्ति/स्थापना के ज़रिये यह सुनिश्चित कर दिया गया था कि इन कठपुतली शासकों के

ज़रिये महाशक्तियाँ अपने उद्देश्यों की पूर्ति करती रहेंगी। चूँकि ये शासक कमज़ोर होंगे, इसलिये वे हमेशा महाशक्तियों पर आश्रित रहेंगे।

सद्दाम के अवसान और बगदाद के ध्वंस के बाद इराक के प्रधानमंत्री बने नूरी अल-मलिकी पर वाशिंगटन पोस्ट के स्तम्भकार रफीक जकारिया की एक टिप्पणी से भावी स्थितियों का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। उन्होंने लिखा कि, "ऐसे कट्टरपंथी शिया नेता, जो अपने धार्मिक विचारों पर ज़रा भी झुकने को तैयार नहीं हैं और सुन्नियों को तो वे सिर्फ सज़ा ही देना चाहते हैं, मुझे ऐसे व्यक्ति कतई नहीं लगे जो राष्ट्रीय सुलह-सफाई चाहते हों।" लगभग दो दशकों तक सीरिया और ईरान में निर्वासित जीवन बिताने के कारण वे इन दोनों सत्ताओं के नज़दीक थे। खास बात यह है कि बुश प्रशासन ने इन चिंताओं को खारिज करते हुए मलिकी को लोकतंत्र और बहुलतावाद में भरोसा रखने वाला करार दिया। मलिकी शासनकाल में 20 लाख से ज़्यादा इराकी, जिनमें ज़्यादातर सुन्नी और ईसाई धर्म के लोग थे, देश से पलायन करने को विवश हुए। इराक में अब भी सत्ता अपने पास होने का भ्रम पाले हुए सुन्नी अल्पसंख्यकों ने पलटकर संघर्ष शुरू कर दिया तथा वे और भी अधिक कट्टरपंथी व अतिवादी बन गए। विशेष बात यह है कि इन सारे कबीलों के लोग पड़ोसी सीरिया के सुन्नी कबीलों से खून के रिश्ते से जुड़े हैं, और जब इन सीरियाई सुन्नी कबीलों ने इराक के गृहयुद्ध को देखा तो वे भी अतिवादी बन गए। इन्हीं अतिवादी उभारों का एक परिणाम इस्लामिक स्टेट का उदय है। इस स्थिति में इस्लामिक स्टेट का खात्मा हो सकता है लेकिन उस मनोविज्ञान का नहीं जो इन देशों में विद्यमान है।

अब, सबसे बड़ी समस्या यह आ रही है कि इराक के इस संयुक्त अभियान में तुर्की बाधक बनकर सामने आ रहा है। उसने स्पष्ट कर दिया है कि इराकी सेना के साथ यदि हशद अल-शाबी और कुर्दिश पेशमर्गा के लड़ाके मोसुल में घुसेंगे तो वह इनके खिलाफ मोसुल में घुसकर युद्ध प्रारंभ कर देगा। दरअसल, तुर्की न केवल शियाओं बल्कि कुर्दों का भी विरोधी है, क्योंकि तुर्की में इन दोनों समाजों के लोग सरकार के विरोधी हैं और अपनी अलग हैसियत चाहते हैं। जो भी हो, यदि तुर्की इस तरह का कोई कदम उठाता है तो स्थिति पुनः बेहद चुनौतीपूर्ण हो जाएगी। तथ्यात्मक स्थितियों को देखें तो इस्लामिक स्टेट को लेकर तुर्की 'डबल गेम' खेल रहा है। उल्लेखनीय है कि राष्ट्रपति एर्दोगन पर ऐसे आरोप लगते रहे हैं कि वे सीरिया में कुर्दों तथा बशर अल-असद के खिलाफ इस्लामिक स्टेट की खुलेआम मदद करते रहे हैं, जो अभी भी जारी है। सच तो यह है कि सीरिया को जिहादी हाइवे बनाने में एर्दोगन का बड़ा हाथ है। इसके पीछे उनकी कुटिल चाल यह है कि इससे तुर्की और इस्लामिक स्टेट के बीच बना भ्रातृत्व संबंध कुर्दों को समाप्त करने में सबसे बेहतर साबित होगा।

भारत और पश्चिम एशिया एक-दूसरे के लिये महत्त्वपूर्ण क्यों?
(Why India and West Asia are Important to each other?)

- पश्चिम एशिया के साथ भारत के संबंध भू-राजनीतिक आयाम, आर्थिक संबंध, अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क और अन्य पहलुओं से जुड़े हुए हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जो भारत की अर्थव्यवस्था और इसके भविष्य को लेकर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- समकालीन विश्व में पश्चिम एशियाई क्षेत्र सबसे अधिक अस्थिर और विवादित क्षेत्र है। क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय शक्तियों सहित अन्य कारकों ने अरब स्प्रिंग के बाद यहाँ अशांति पैदा की है। इस्लामिक आतंकवादी समूहों, सिविल युद्ध और बाहरी हस्तक्षेपों की शृंखला ने पश्चिम एशिया को सबसे भयानक क्षेत्र बना दिया है। पश्चिम एशिया अब सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में नियमित रूप से विखंडन एवं एकीकरण की दिशा में प्रयत्नशील है। इस्लामी राज्य और अन्य आतंकवादी संगठनों को तेज़ी से इराक, सीरिया और यमन में प्रश्रय मिल रहा है, अतः इस्लामी राज्य इस क्षेत्र के लिये सबसे बड़ी चुनौती बन गया है। हाल ही में सऊदी अरब के दक्षिण-पश्चिम शहर आभा में आई.एस.आई.एस. के एक मस्जिद पर आत्मघाती बम हमले ने राज्य की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिये चुनौती खड़ी कर दी है; जिसमें मारे गए लोगों में ज़्यादातर सऊदी अरब के थे।

भारत भी इन चुनौतियों से अलग नहीं है, एक आई.एस.आई.एस. दस्तावेज़ जो अमेरिका द्वारा प्राप्त हुआ है उससे पता चला है कि इस्लामिक स्टेट पाकिस्तान और अफगान तालिबान की मदद से भारत पर हमला करने की योजना बना रहा है।

ऐतिहासिक परमाणु समझौते के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ईरान के हालिया प्रवेश के कारण पश्चिम एशियाई क्षेत्र क्षेत्रीय राजनेताओं को पुनर्वासित और संगठित करने की प्रक्रिया में है। ईरान के साथ भारत के बढ़ते संबंध सऊदी अरब में इज़राइल और तेहरान को जोड़ने का काम कर सकते हैं जो क्षेत्रीय शक्तियों के बीच एक विश्वसनीय संबंध, शांति और स्थिरता लाने

में सहायक हो सकता है। अतः इन चुनौतियों के बीच, पश्चिमी एशियाई राष्ट्रों और भारत को निकट भविष्य में अपने संबंधों को विकसित करना चाहिये।

पश्चिम एशिया के साथ भारत के संबंध: नीति, परिप्रेक्ष्य और चुनौतियाँ

(India's relation with West Asia : Policy, Perspectives and Challenges)

- पश्चिमी एशिया के साथ भारत के गहन ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सभ्यतागत संबंध हैं। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ये संबंध और सुदृढ़ हुए क्योंकि दोनों पक्ष अपने उपनिवेशी शासन से बाहर निकले तथा दोनों ने विकास समस्याओं एवं 21वीं शताब्दी की नई चुनौतियों से निपटने के लिये समझ तथा तालमेल के नए सेतुओं का निर्माण करना शुरू किया। भारत के लिये पश्चिम एशिया हमारे विस्तारित पड़ोस का अंग है और इस प्रकार, इस क्षेत्र में निरंतर शांति एवं स्थिरता हमारे सामारिक हित में है।
- इस क्षेत्र के साथ हमारा आर्थिक एवं वाणिज्यिक संबंध 186 बिलियन अमेरिकी डॉलर प्रतिवर्ष (2013-14) के आस-पास है, जिसकी वजह से यह हमारा सबसे बड़ा क्षेत्रीय व्यापार ब्लॉक है। यह क्षेत्र हमारी तेल एवं गैस आवश्यकता के 60 प्रतिशत से अधिक भाग का स्रोत है जो हमारी ऊर्जा सुरक्षा के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण है। मघरेब क्षेत्र (अल्ज़ीरिया) फॉस्फेट एवं अन्य उर्वरकों का एक प्रमुख स्रोत है जो हमारी खाद्य सुरक्षा में एक महत्त्वपूर्ण कारक है। खाड़ी देशों की विशाल संप्रभु संपदा निधियाँ विशेष रूप से अवसंरचना में भारतीय कंपनियों के प्रचालन के लिये महत्त्वपूर्ण प्लेटफॉर्म प्रदान कर सकती हैं जो हमारे सामाजिक-आर्थिक विकास के लिये महत्त्वपूर्ण हैं तथा वे अन्य राष्ट्रीय पहलों जैसे कि मेक-इन-इंडिया, डिजिटल इंडिया, स्मार्ट सिटी आदि में भी योगदान कर सकती हैं। दोनों पक्षों के बीच हवाई संपर्क मज़बूत एवं जीवंत हैं जो हर महीने बढ़ रहे हैं। भारत इस क्षेत्र में, विशेष रूप से लेबनान, सीरिया और दक्षिणी सूडान में संयुक्त राष्ट्र शांति रक्षा मिशनों में भी भागीदारी कर रहा है।
- इस क्षेत्र में अरब स्प्रिंग के बाद लोकतंत्र की दिशा में प्रगति की पिछली अपेक्षाएँ विस्थापित हो गई हैं। सीरिया में सशस्त्र संघर्ष निरंतर जारी है तथा शरणार्थी एवं मानवीय सहायता संकट बढ़ रहा है। युद्ध से क्षत-विक्षत इस देश में शांति लाने के लिये प्रमुख वैश्विक महाशक्तियों द्वारा आह्वान के बावजूद ज़मीनी स्तर की घटनाओं से ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि कुछ कामयाबी मिल रही है। उनका नियंत्रण समाप्त करने के लिये वैश्विक प्रयासों के बावजूद इस्लामिक स्टेट का इराक, सीरिया और उत्तरी अफ्रीका के भूभागों पर नियंत्रण जारी है। अतिवादियों की आसानी से आवाज़ाही तथा इस क्षेत्र में विदेशी जेहादियों की संख्या में वृद्धि से विदेशी लड़ाकों के मूल देशों में कट्टरवाद के फैलने की संभावना बढ़ गई है। इन चुनौतियों से इस क्षेत्र की शांति एवं सुरक्षा के लिये निरंतर डर बना हुआ है तथा विश्व के अन्य भागों में फैलने की भी संभावना है।
- इस संबंध में भारत की नीति इस क्षेत्र के साथ हमारे पुराने परंपरागत संबंधों पर आधारित है तथा यह गैर-निर्देशात्मक एवं गैर-निर्णयात्मक स्वरूप की है। निरंतर बदलते राजनीतिक परिवेश के बावजूद वस्तुतः इस क्षेत्र के सभी देशों के साथ हमारे द्विपक्षीय संबंध व्यवस्थित ढंग से आगे बढ़ रहे हैं और हम क्षेत्रीय घटनाओं के नकारात्मक प्रभावों से अपने प्रमुख हितों की रक्षा करने में समर्थ हुए हैं। भारत का मानना है कि इन देशों की लोकप्रिय आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर भावी राजनीतिक वार्ता को देशों के अंदर से तथा किसी बाहरी दखल या प्रभाव के बगैर निर्धारित करना होगा। हालाँकि, भारत राजनय के निर्यात के कारोबार में नहीं है, लोकतांत्रिक मूल्यों का संवर्द्धन इन सिद्धांतों में भारत के विश्वास के साथ हो सकता है।
- **नीतिगत विकल्पः** नीतिगत विकल्प के मोर्चे पर, भारत के लिये अनेक चुनौतियाँ हैं। जटिल क्षेत्रीय स्थिति के लिये एक बहु-उद्देश्यीय दृष्टिकोण की ज़रूरत है और इसलिये भारत एक समेकित नीति तैयार करने की दिशा में थिंक टैंक, विश्वविद्यालय तथा मीडिया सहित समाज के सभी वर्गों तक पहुँचने का प्रयास कर रहा है। नीतिगत विकल्प के कुछ प्रमुख तत्त्व निम्नलिखित हैं-
  - भारत ने इस क्षेत्र के प्रति अपने आपको अलगाववाद या अन्य समान विचारधाराओं पर आधारित किसी क्षेत्रीय गठबंधन से अलग रखा है। भारत को अपनी आबादी में धार्मिक एवं जातीय मिश्रण की धारणाओं के प्रति संवेदनशील होने की ज़रूरत है। साथ ही इस क्षेत्र में फैलते अलगाववाद को देखते हुए भारत को इस क्षेत्र से उत्पन्न किसी कट्टरवादी/अलगाववादी समस्या के लिये तैयार रहना चाहिये।

- भारत इस क्षेत्र में अपने विशाल डायस्पोरा, ऊर्जा एवं सुरक्षा हितों को ध्यान में रखते हुए पश्चिम एशिया के सभी देशों के साथ संपर्कों को सुदृढ़ कर रहा है। उच्च स्तरीय यात्राओं के नियमित आदान-प्रदान से हमारे द्विपक्षीय संबंध और मज़बूत हुए हैं तथा परस्पर सरोकारों को अच्छी तरह समझने में दोनों पक्षों से मदद मिली है।
- भारत खाड़ी एवं मध्य-पूर्व के देशों में प्रवासी भारतीयों के हितों की रक्षा करने के लिये प्रतिबद्ध है। अन्य बातों के होते हुए इसमें निम्नलिखित तत्त्व भी शामिल हैं-
    - स्थानीय प्राधिकारियों एवं नियोक्ताओं के साथ निकटता से काम करना।
    - अपेक्षित संस्थानिक तंत्र स्थापित करना।
    - सामुदायिक पहुँच।
    - भारतीय समुदाय कल्याण निधि की शुरुआत।
    - प्रवासी भारतीयों का बेहतर संरक्षण एवं कल्याण सुनिश्चित करने के उद्देश्य से मेज़बान सरकारों की प्रतिबद्धता को सूचीबद्ध करने के लिये सभी प्रमुख गंतव्य देशों के साथ द्विपक्षीय समझौता ज्ञापन (एम.ओ.यू.) करने के लिये समवेत प्रयास किया है।
- सऊदी अरब और ईरान के बीच तनाव में वृद्धि से जुड़ी हाल की घटनाएँ तथा प्रत्येक पक्ष के सहयोगियों द्वारा इस राजनयिक अस्थिरता को समाप्त करने के लिये किये जा रहे प्रयास क्षेत्रीय तनावों में वृद्धि की एक नई ऊँचाई को दर्शाते हैं जो इस संपूर्ण क्षेत्र के लिये शुभ संकेत नहीं है। इसके लिये ध्यान से निगरानी करके और उलझनों के जोखिम को टालते हुए हमारे हितों एवं महत्त्वपूर्ण संपत्तियों के परिरक्षण की स्थिति का निरंतर आकलन करने की ज़रूरत है।
- भारत स्थिर, शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक यमन के लिये मज़बूती के साथ प्रतिबद्ध है, जो वैश्विक तथा क्षेत्रीय शांति एवं सुरक्षा के हित में है। भारत ने संघर्ष से जुड़े सभी पक्षों से सौहार्द्रपूर्ण ढंग से अपने मतभेदों को दूर करने तथा संयुक्त राष्ट्र के संकल्प; शांति एवं राष्ट्रीय साझेदारी करार की शर्तों तथा राष्ट्रीय वार्ता सम्मेलन के परिणामों का पालन करने का आग्रह किया है। भारत ने ऑपरेशन 'राहत' के माध्यम से 48 देशों से, 1,947 विदेशी नागरिकों सहित 4,741 भारतीय नागरिकों को यमन से निकालने में सफलता प्राप्त की थी जिससे राष्ट्रों के बीच भारत के लिये सद्भाव में काफी वृद्धि हुई।
- सीरिया में हुए संघर्ष तथा जीवन की क्षति को लेकर भारत बहुत ही चिंतित है। भारत सीरिया में सीरिया के लोगों की आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर संयुक्त राष्ट्र द्वारा समर्थित, सीरिया के नेतृत्व में व्यापक राजनीतिक समझौते का समर्थन करता है। सीरिया में विपदाग्रस्त लोगों को मानवीय एवं राहत सहायता भी प्रदान कर रहा है।
- इज़राइल-फिलीस्तीन पर भारत की एक संगत नीति है। भारत की नीति इज़राइल के साथ अच्छे संबंधों को बनाए रखते हुए फिलीस्तीन के उद्देश्य को मज़बूत समर्थन प्रदान करना है। भारत फिलीस्तीन मुद्दे के व्यापक समाधान का समर्थन करता है जिससे इसकी राजधानी के रूप में पूर्वी येरूशलम के साथ एक संप्रभु, स्वतंत्र, व्यवहार्य एवं एकजुट फिलीस्तीन राज्य का मार्ग प्रशस्त हो, जो इज़राइल के साथ शांति से पड़ोस में सुरक्षित एवं मान्यता प्राप्त सीमाओं के अंदर रहे। अंतर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय एवं द्विपक्षीय स्तरों पर फिलीस्तीनी उद्देश्य के लिये मज़बूत राजनीतिक समर्थन के अलावा भारत फिलीस्तीन को बजटीय, आर्थिक एवं विकास सहायता भी प्रदान कर रहा है।
- भारत ने ईरान के परमाणु मुद्दे पर वार्ता की सफल समाप्ति का स्वागत किया है जिसे व्यापक कार्य योजना का नाम दिया गया है; क्योंकि इसमें शांतिपूर्ण वार्ता तथा परस्पर सहमति के माध्यम से विवादास्पद मुद्दों के समाधान का प्रावधान है। कोई भी करार या समझौते को पूरे सद्भाव के साथ लागू किया जाएगा और इससे पुरानी समस्या के स्थायी समाधान का मार्ग प्रशस्त होगा।
- आई.एस.आई.एस. नए तरह का एक आतंकी संगठन है जिसका वैश्विक प्रभाव है। भारत का मानना है कि इस संकट का एकमात्र समाधान विशाल राजनीतिक दृष्टिकोण के माध्यम से हो सकता है। जिसमें आसूचना की हिस्सेदारी, आतंकवाद की खिलाफत, इराक और सीरिया में विदेशी लड़ाकों के प्रवाह को नियंत्रित करने के लिये साइबर स्पेस सहयोग, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद से लड़ने के लिये एक कानूनी रूपरेखा का विकास, वित्तीय स्तर पर आतंकवाद से लड़ने के लिये एक कानूनी रूपरेखा का विकास, वित्तीय प्रवाहों की ट्रैकिंग एवं मानवीय सहायता शामिल हैं।

- इस क्षेत्र में जो भी स्थिति है उसे देखते हुए, रक्षा और सुरक्षा सहयोग के नए क्षेत्र उभरे हैं जिनमें आतंकवाद की खिलाफत, आसूचना की हिस्सेदारी, जलदस्युता, धन शोधन, छोटे हथियारों की तस्करी, आतंकी गतिविधियों को वित्तपोषण आदि शामिल हैं।
- भारत का यह मानना है कि इस क्षेत्र के साथ अधिक आर्थिक भागीदारी के माध्यम से राजनीतिक अस्थिरता को प्रतिकूल किया जा सकता है। ऐसी सहलग्नता शांति के परिरक्षण में साझे हित के साथ हितधारकों को एक साथ ला सकती है। हालाँकि, भारत के क्षेत्रीय व्यापार की मात्रा में वृद्धि हुई है किंतु अभी भी ऐसी क्षमता पर्याप्त है जिसका दोहन नहीं हुआ है।
- इस क्षेत्र में भारतीय डायस्पोरा कड़ी मेहनत करने के अपने स्वभाव तथा समर्पण एवं प्रतिबद्धता की भावना के कारण सर्वाधिक मनपसंद कार्यबल बन गया है। अपने मेज़बान देशों के विकास में उनके योगदान से भारत के लिये प्रचुर मात्रा में सद्भाव का सृजन हुआ है। इससे इन देशों के साथ हमारे द्विपक्षीय संबंधों को आगे बढ़ाने में भी मदद मिली है।

भारत पश्चिम एशिया क्षेत्र के देशों के साथ अपने राजनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा संबंधों को उच्च प्राथमिकता देता है। दोनों पक्षों में प्रचुर संभावना को देखते हुए पश्चिम एशिया के देशों के साथ भारत के द्विपक्षीय संबंधों का विकास सुनिश्चित होगा।

पश्चिम एशिया संघर्ष व भारत की नीति *(West Asia Conflict and Policy of India)*

भारत पश्चिम एशिया के देशों के साथ अपने संबंधों को हमेशा से प्रगाढ़ बनाने के लिये प्रतिबद्ध रहा है और यह क्षेत्र कई दशकों तक भारतीय विदेश नीति के केंद्रीय विषयों में से एक रहा है। लेकिन पिछले 5 वर्षों से इस क्षेत्र में उत्पन्न समस्या अद्वितीय परिवर्तनों की साक्षी रही है जिसने भारत को अपनी नीति पर पुनर्विचार करने के लिये मजबूर कर दिया।

उल्लेखनीय है कि पश्चिमी एशिया के साथ भारत का संबंध प्राचीन काल से ही रहा है, जहाँ सिंधु, नील, दिलमुन और मेसोपोटामिया की सभ्यताएँ एक-दूसरे के साथ जुड़ी हुई थीं। मध्यकाल में भी मुगलों के फारस में सफाविद् और तुर्की के साथ अच्छे संबंध थे। आज़ादी के बाद भी यह क्षेत्र भारत के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण बना रहा। जहाँ भारत ने 1947 में फिलिस्तीन के विभाजन के खिलाफ मतदान किया वहीं 1950 और 60 के दशकों के दौरान भारत की पश्चिमी एशिया नीति, गुटनिरपेक्षता, धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के रूप में नासिर के साथ अपनी समानताओं के कारण काहिरा केंद्रित थी। भारत ने सीरिया और इराक के साथ भी सहयोग किया। लेकिन शीतयुद्ध के उपरांत पश्चिमी एशिया में भारत का मुख्य संबंध मिस्र, सीरिया और फिलिस्तीन की जगह ईरान एवं इज़राइल के साथ हो गया।

इस क्षेत्र में हुए राजनीतिक विद्रोह को 'अरब क्रांति' या 'अरब स्प्रिंग' के नाम से जाना जाता है जो 2010 में इस क्षेत्र में व्याप्त गरीबी, बेरोज़गारी की उच्च दर, बढ़ता अमीर-गरीब अंतराल, बड़े पैमाने पर मानव अधिकारों का उल्लंघन और भ्रष्टाचार जैसे उत्प्रेरकों की एक श्रृंखला के कारण बगावत के रूप में उत्पन्न हुआ।

इसके पश्चात् यह क्षेत्र राजनीतिक अस्थिरता और कट्टरता के साथ-साथ सांप्रदायिक तथा जातीय राजनीति, क्षेत्रीय शत्रुता और उसके पश्चात् धार्मिक कट्टर संगठनों तथा आतंकवाद के तेज़ी से पनपने के गहन दौर में प्रवेश कर गया है, जिसने इस क्षेत्र के संपूर्ण परिदृश्य को पूर्ण अराजकता की ओर धकेल दिया और इस क्षेत्र को वैश्विक संघर्ष के केंद्र में ला खड़ा कर दिया।

ट्यूनीशिया और मिस्र में इस्लामी ताकतों के उत्थान, यमन और लीबिया में जनजातीय राजनीति के पतन और सीरिया तथा इराक में बँटवारे व खूनी संघर्ष के साथ-साथ शिया-प्रेरित ईरान और सलाफी प्रभावित सऊदी अरब के बीच क्षेत्रीय शीतयुद्ध इस क्षेत्र में अशांति के प्रमुख कारण हैं।

इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक एंड सीरिया (आई.एस.आई.एस.) का उत्कर्ष और इसकी बढ़ती ताकत इस क्षेत्र को और अशांत कर रही है जो वैश्विक शांति के समक्ष चुनौती पेश कर रहा है। इतना ही नहीं एक विचारधारा के रूप में विद्यमान आई.एस.आई.एस. विश्व के बहुत से युवकों को आकर्षित कर रहा है। यहाँ तक कि भारत के भी कई युवक इस संगठन से जुड़े पाए गए हैं।

पश्चिम एशिया भारत के विस्तारित पड़ोस का हिस्सा होने के कारण वहाँ शांति और स्थिरता भारत के हित के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है:

- भारत के ऊर्जा आयात स्रोत का लगभग 65% फारस की खाड़ी से आता है।
- भारत के कुल कच्चे तेल आयात का 2/3 भाग भी यहीं से आता है।
- भारत का थोक व्यापार स्वेज़ नहर के रास्ते से सम्पन्न किया जाता है।
- लगभग 6 लाख प्रवासियों की सुरक्षा और करीब 35 अरब डॉलर के इनके वार्षिक प्रेषण की सुरक्षा।
- भारत की खाद्य सुरक्षा (जॉर्डन से फॉस्फेट और ओमान से उर्वरक के आयात) के लिये महत्त्वपूर्ण।
- इज़राइल के साथ रक्षा सौदों, संचार की समुद्री लाइनों की सुरक्षा के साथ पश्चिमी एशिया के साथ संबंधों से जुड़े वित्तीय मूल्य (158 बिलियन डॉलर) भारत के लिये काफी ज़्यादा हैं।

अपने उपरोक्त हितों को देखते हुए किसी भी देश का पक्ष न लेते हुए भारत द्वारा इन क्षेत्रों की समस्या से तटस्थ रहने का निर्णय लिया गया था और इस क्षेत्र में शांति एवं स्थिरता बनाए रखने की अपील की गई थी। हालाँकि, भारत की तटस्थता की इस नीति की आलोचना की गई थी कि जो देश महान शक्ति और सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य बनना चाहता है तथा इतना बड़ा लोकतांत्रिक देश होने के नाते उससे एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद थी।

परंतु, भारत यहाँ लोकतंत्र को बढ़ावा देने के लिये नहीं बल्कि अपने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर सोच रहा था। अपने प्रवासियों, ऊर्जा हितों, आने वाले पैसे के प्रवाह और मुस्लिम समुदाय के घरेलू संबंधों तथा क्षेत्र में निवेश की सुरक्षा एवं संरक्षा के रूप में अपने मूल हितों के कारण घटनाओं के दौरान भारत का रुख प्रतिक्रियाशील और अस्थिर रहा तथा राजनीतिक इस्लाम की बजाय धर्मनिरपेक्ष सरकारों के साथ कार्य करना पसंद किया। इसलिये भारत ने शासन और लोगों में बाधा डालने या तुष्टीकरण के बिना सबसे अच्छे विकल्प के रूप में बीच का रास्ता चुना था।

वर्तमान भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी इन क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिये तत्पर हैं और इस क्षेत्र के देशों के साथ संबंध को प्रगाढ़ बनाने के लिये नीतिगत उपाय की तलाश कर रहे हैं। इसके लिये निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जा सकता है:

- भारत द्वारा इस क्षेत्र को प्राथमिकता देने की आवश्यकता है और इसी परिप्रेक्ष्य में 'पूर्व की ओर देखो' (Look East Policy) के तर्ज पर 'पश्चिम की ओर देखो' नीति नाम से एक नीति बनानी चाहिये। इस नीति को इस क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं में भारत की अतिसक्रिय भागीदारी/संलग्नता द्वारा मज़बूत बनाया जाना चाहिये।
- भारत के ऊर्जा हितों के लिये दो महत्त्वपूर्ण देश ईरान और सऊदी अरब हैं तथा भारत को तदनुसार इन देशों के साथ संबंधों को प्रगाढ़ बनाना चाहिये।
- भारत द्वारा इस क्षेत्र में उदार ताकत को बढ़ावा देने की आवश्यकता है, जिसे फिल्मों, खेलों और संगीत के माध्यम से बढ़ावा दिया जा सकता है।
- आतंकवाद विरोधी सहयोग करने की आवश्यकता पर बल, ताकि इस क्षेत्र में शांति की बहाली की जा सके।
- अरब देशों में रोज़गार के स्थानीयकरण के लिये तैयार होने की आवश्यकता। ध्यान देने योग्य बात है कि निजी क्षेत्र में निम्न तथा मध्यम, राष्ट्रीय रोज़गार के अलावा सऊदी अरब के सरकारी क्षेत्र में भारतीय बड़ी संख्या में कार्यरत हैं। सऊदी अरब ने स्थानीय नागरिकों को रोज़गार देने संबंधी अरबीकरण नीति लागू कर दी है और घरेलू कार्मिकों के लिये कोटा बढ़ा दिया है। अत: भारत को उन लोगों के लिये एक वैकल्पिक योजना तैयार करने की आवश्यकता है जो अरब रोज़गार बाज़ार के अरबीकरण 'निताकत' योजना के उत्तरोत्तर कार्यान्वयन के पश्चात् वापस (भारत) आ सकते हैं।
- इज़राइल और इस क्षेत्र के अन्य राष्ट्रों के बीच संतुलित व्यवहार की प्रतिबद्धता होनी चाहिये।
- अनुकूल उद्यमशील वातावरण की उपलब्धता।
- भारत को इस क्षेत्र के सभी शासकों के साथ अपने संबंध विकसित करने में अपने तौर-तरीकों में व्यावहारिकता की नीति का पालन करने की आवश्यकता है।
- भारत को अच्छे व्यापार, अच्छे जनसंपर्क तथा और अधिक कार्यनीतिक संबंधों की आवश्यकता है, ताकि यह मीडिया कार्यक्रमों के माध्यम से इस क्षेत्र से अपने हित साध सके।
- आईएसआईएस के खिलाफ भारत को अपना पूर्ण समर्थन देने की आवश्यकता।

उपरोक्त सुझावों के आधार पर भारत सरकार द्वारा पश्चिम एशिया के देशों के साथ मज़बूत संबंध पुनः स्थापित किये जा सकते हैं। हालाँकि, अप्रैल-मई 2016 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा इस क्षेत्र के दो महत्त्वपूर्ण देश-ईरान और सऊदी अरब का दौरा किया गया जिससे प्रतीत होता है कि भारत इस क्षेत्र के साथ संबंधों को प्रगाढ़ बनाने के लिये प्रतिबद्ध है। इसी संदर्भ में उन्होंने पश्चिमी एशिया के देशों के साथ अच्छे संबंधों के लिये 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' की तर्ज़ पर 'लिंक वेस्ट नीति' की बात की है।

कोई भी सरकार अपने पूर्ववर्तियों की नीतियों को छोड़ सकती है लेकिन फिलिस्तीन का सवाल, नीति का सवाल न होकर; सिद्धांतों का प्रश्न रहा है। सिद्धांतों का इतिहास हमारी वर्तमान सरकार का पसंदीदा विषय नहीं है। इज़राइल नवाचारी संस्कृति का पोषण करने वाला देश है। उसने जल प्रबंधन, बंजर-रेतीली भूमि पर कृषि, इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण, सूचना प्रौद्योगिकी, जैव प्रौद्योगिकी, फार्मास्यूटिकल्स, स्पेस तकनीक के विकास में अभूतपूर्व सफलता अर्जित की है। इन क्षेत्रों में भारत अपने मेक-इन-इंडिया, कौशल विकास, स्टार्टअप इंडिया और कृषि आय को दोगुना करने के कार्यक्रमों में इज़राइल के अनुभवों से लाभ उठा सकता है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- पश्चिम एशिया का क्षेत्र पूर्वी यूरोप के दक्षिण में स्थित है। यह सात सागरों से घिरा हुआ है जिनमें शामिल हैं- एजियन सागर, काला सागर, कैस्पियन सागर, फारस की खाड़ी, अरब सागर, लाल सागर एवं भूमध्य सागर।
- पश्चिम एशिया के प्रमुख रेगिस्तान दश्त-ए-लुट और दश्त-ए-काबिर ईरान में हैं।
- दक्षिण एशिया उपग्रह (GSAT-9) का प्रक्षेपण 5 मई, 2017 को जीएसएलवी-एमके-II से किया गया। पाकिस्तान के अतिरिक्त सार्क के अन्य सभी देशों ने भारत के इस प्रयास को समर्थन प्रदान किया है।
- दक्षिण एशियाई देश विश्व के 3% भू-भाग, 21% जनसंख्या एवं 3.8% (2015) वैश्विक अर्थव्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- दक्षिण पूर्वी एशिया में सांस्कृतिक एवं नृजातीय विविधता अत्यधिक पाई जाती है। यहाँ सैंकड़ों भाषाएँ बोली जाती हैं।
- मकास्सर जलडमरूमध्य बोर्नियों और सुलावेसी (इण्डोनेशिया) द्वीपों के बीच अवस्थित है। इसके उत्तर में सेलेबस सागर है तथा दक्षिण में जावा सागर है।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. पश्चिम एशिया भारत के लिये क्यों महत्त्वपूर्ण है?
2. दक्षिण-पूर्वी एशिया में कौन-कौन से प्रमुख देश हैं?
3. आसियान को परिभाषित कीजिये।
4. सार्क क्या है?

लघु उत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दीजिये)

1. भारत और पश्चिम एशिया के मध्य संबंधों में सकारात्मक बिंदु क्या है?
2. सार्क के समक्ष उपस्थित चुनौतियाँ क्या हैं?
3. दक्षिण-पूर्व एशियाई देश किस प्रकार भारत के विकास में सहायक सिद्ध हो सकते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. पश्चिम एशिया में विवाद के विषय क्या हैं एवं यह भारत को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?
2. भारत दक्षिण एशिया के समग्र विकास में किस प्रकार भूमिका निभा सकता है?
3. दक्षिण-पूर्व एशिया एवं भारत के संबंध में 'लुक ईस्ट नीति' का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करें। यह भारत के लिये क्यों महत्त्वपूर्ण है?

Join Teligram Channel ⤵

🎯 TARGETGOVTJOBS [Https://t.me/TargetGovtJobs]

Special :- Daily Update 👉 ☐ Newspaper, ✍ Editorial, 📅 Today's History, 📻 Air & BBC News, 🖥 RSTV, 📖 The Hindu vocabulary, ☆ Imp. NewsClips, 🖥 StudyIQ Video, 📅 Daily, Weekly & Monthly current affairs Magazine, 🔊 Dr. Vijay Agarwal Audio Lectures, 💻 Job update [Employment News Weekly], etc...

📚E BOOKS📚 [Https://t.me/Edu_Books]

Special :- Get all important E-Books [NCERT Books, Subject Wise Books, Hand Written notes, Coaching Classes Notes], Weekly & Monthly Current Affairs Magazine, Exam Test Series, Job update, Employment News, Other Magazine etc.... [Medium :- Hindi & English]

📰E-PAPER & MAGAZINE 📰 [Https://t.me/NewspapersTodaY]

Special :- Daily Update Newspaper [Hindi & English Language], Magazine, Employment News, Job update, 📻 Air & BBC News, Etc....

🙏 THANKS 🙏